खो गया है भीमबेटका का खोजी

₹ 15

वर्ष : 21 अंक : 10-11 सामयिक पत्रिका, जून-जुलाई, 2020 (संयुक्तांक)

दुनिया इन दिनों

MPHIN 1999/02873

समाज, साहित्य और संस्कृति का अक़्स

कोरोना का उत्तर-कांड

DELHI PUBLIC SCHOOL

NAGPUR

(Under the aegis of The Delhi Public School Society, New Delhi)

All round holistic development is the motto at DELHI PUBLIC SCHOOL.

We firmly entrench in our children

- *Strong Value System*
- *Life Skills*
- *A blend of Tradition and Modernity*
- *Emphasis on Communication Skills*

ARTIST VILLAGE at DPS MIHAN

'HAPPY GREEN SCHOOL' mission

Students plant saplings on their Birthdays in the school premises. Paper is recycled to make hand made paper. Rainwater harvesting is the call for each one of us.

The 400 m track, swimming pool, skating rink, indoor and outdoor synthetic basketball courts, Hockey, cricket & football fields were rightly the deciding factor for bagging the coveted Sports Journalist Association of Nagpur award for best school in sports.

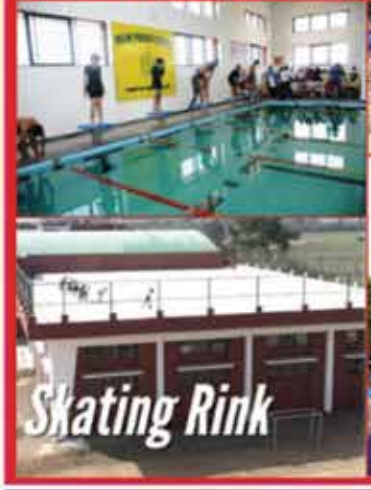

Our Achievement in Class X & XII

- **67 Students of Class X secured 90% & above in session 2018-19 .**
- **24 Students of Class XII (Science & Commerce secured 85% & above in session 2018-19.**

Accentuating critical thinking and scientific fervour among students.

Facilitating ME skills and WE skills.

Life skills inculcated at school level to prepare children for the future.

Reviving the dying art forms.

A leap in technological advancement.

Joy of giving and sensitising students.

DELHI PUBLIC SCHOOL, NAGPUR

Opp 11 Kms Milestone, P.O. Khairi Kamptee Road, Nagpur - 440026
Phone: 9607588882
9607228882
Email: dpsnagpur@hotmail.com
info@dpsnagpur.com
Website: dpsnagpur.edu.in

Opp IIM & AIIMS, MIHAN, Wardha Road,Nagpur - 441108
Phone: 9607855441
9607855442
Email: info@dpsmihan.com
Website: dpsmihan.com

facebook.com/DuniyaInDinon

दुनिया इन दिनों

मासिक पत्रिका
वर्ष : 21 अंक : 10-11
जून-जुलाई, 2020 (संयुक्तांक)

मुद्रक - प्रकाशक नवीन केडिया
प्रधान संपादक डॉ. सुधीर सक्सेना
फोन 9711123909/94250 22404
sudhirsaxena54@gmail.com
संपादक सरिता सक्सेना
फोन 8817571963
saritathakursaxena@gmail.com

परामर्श अजय मनसुखानी
कानूनी सलाहकार अरविंद जैन

एसोशिएट संपादक (वरिष्ठ) रईस अहमद 'लाली'
लखनऊ ब्यूरो अजय कुमार
समन्वय अस्मि सक्सेना

कला निर्देशक प्रफुल्ल पळसुलेदेसाई

वितरण राजकिशोर सिंह
फोन : 9650062198

भोपाल कार्यालय 43 ए-अंसल प्रधान एन्क्लेव, ई-8, अरेरा कालोनी, भोपाल-462016, दूरभाष : 9425022404
दिल्ली कार्यालय फ्लैट नं. 8, पाकेट 8 बी, सेक्टर-4, रोहिणी, दिल्ली-110085
लखनऊ ब्यूरो जे 3/2 डालीबाग कालोनी, हजरतगंज, लखनऊ-226001 फोन-0522-2204678
रायपुर ब्यूरो 21, बन्यान ट्री एन्क्लेव, खम्हारडीह, शंकर नगर, रायपुर (छत्तीसगढ़)
पटना ब्यूरो अनिल विभाकर
402, अन्नपूर्णा अपार्टमेंट, पुनाईचक, पटना-800023, फोन-9431076677
मास्को ब्यूरो अनिल जनविजय
8/1, 155, ऊलित्सा फ्रुक्तोवया, मास्को 117 506 (रूस)
फोन : 0079166114864
संपादकीय कार्यालय 81/2, चौथी मंजिल, अदचीनी, अरबिंदो मार्ग, दिल्ली-110017 फोन : 011-26862059

duniyaindinon@gmail.com

स्वत्वाधिकारी, मुद्रक, प्रकाशक नवीन केडिया द्वारा 43 ए-अंसल प्रधान एन्क्लेव, ई-8, अरेरा कालोनी, भोपाल (मध्य प्रदेश) से प्रकाशित एवं दृष्टि आफसेट, 37, इंदिरा प्रेस काम्प्लेक्स, जोन-1, महाराणा प्रताप नगर, भोपाल (मध्य प्रदेश) 4 से मुद्रित

आर.एन.आई. पंजीयन संख्या-MPHIN 1999/02873
संपादक : सरिता सक्सेना
दुनिया इन दिनों,
अप्रैल-मई, 2020

अपनी बात

सचेत रहें, स्वस्थ रहें, सक्रिय रहें...

मित्रो,

दिनकर कुमार हमारे समय के महत्वपूर्ण पत्रकार-संपादक, कवि एवं अनुवादक हैं। वे समय से जुड़े सजग लेखक हैं। पूश्किन-सम्मान से नवाजे गये दिनकर कुमार 'दुनिया इन दिनों' के नियमित लेखक हैं। इस बार 'अपनी बात' उनकी सद्य-रचित एक कविता के माध्यम से व्यक्त है:

नरसंहार के लिए हमेशा जरूरी नहीं होता

नरसंहार के लिए हमेशा जरूरी नहीं होता
कि आसमान से बम बरसाया जाए
नागरिकों को कतार में खड़ा कर
अंधाधुंध गोलियां बरसाई जाए
गैस चेम्बर में आबादी को कैद कर
घुट घुट कर मरने के लिए छोड़ दिया जाए
या जहर की सुई लगाकर
हर आयु वर्ग के लोगों को
अंतिम नींद में सुला दिया जाए
या नागरिकों का एक रजिस्टर बनाकर
बारी बारी से हर नाम को लाल स्याही से काट कर
डिटेंशन कैंप में सबको कैद कर दिया जाए
या राज्य विहीन मनुष्यों को
नौकाओं में लादकर समुद्र में बहा दिया जाए
या मतदाता सूची और आधार कार्ड से
नामों को खारिज करते हुए
नागरिकों को जीते जी मृतक घोषित कर दिया जाए

नरसंहार के लिए हमेशा जरूरी नहीं होता
कि बजट में अलग से प्रावधान रखा जाए
या चुनावी घोषणा पत्र में उल्लेख किया जाए
या संसद की चौखट को चूमकर संकल्प लिया जाए
या संविधान को प्रणाम कर आंखों से इशारा किया जाए
या अतीत के किसी हत्यारे को आदर्श बताकर
अपनी निजी सेना को आक्रमण करने का आदेश दिया जाए

कभी-कभी नरसंहार हथियार के बगैर भी हो सकता है
चार घंटे की मोहलत देकर नागरिकों को
अपने अपने घर के भीतर कैद होने का आदेश देकर
बर्बरतापूर्वक नरसंहार को अंजाम दिया जा सकता है

(अपने समय को दर्ज करती यह कविता आपको कैसी लगी?)

'दुनिया इन दिनों' का अगस्त अंक कोरोना काल में लिखी कविताओं पर एकाग्र होगा। इस वर्ष हमारी कुछ अन्य विशेषांकों की भी योजना है। सचेत रहें, स्वस्थ रहें, सक्रिय रहें,

सरिता सक्सेना
duniyaindinon@gmail.com

कोरोना के संकट

कोरोना के बढ़ते प्रकोप को लेकर भयावह स्थिति बनती जा रही है। केवल 4 दिन में 1 लाख संक्रमित लोगों की संख्या में वृद्धि होना चिंता का विषय है। सरकार ने जब से अनलॉक की नीति अपनाई है, लोग समझने लगे कि कोरोना वायरस महामारी खत्म हो गई है। उन्होंने सोशल डिस्टेंसिंग, मास्क पहनने, बार-बार हाथ धोने, सार्वजनिक स्थानों पर न थूकने जैसे निदेशों के पालन को नजरअंदाज कर दिया है। यह महामारी कब तक चलेगी, कुछ पता नहीं। लेकिन इससे बचने के लिए अपने ही तरीके से सभी को उपाय करने चाहिए।

शामलाल कौशल,
रायपुर, छत्तीसगढ़

अनुचित वृद्धि

पेट्रोल-डीजल के दाम जिस तरह से रोज बढ़ रहे हैं, वे आम आदमी के लिए किसी बोझ से कम नहीं हैं। माना के लॉकडाउन के दौरान सरकार की अर्थव्यवस्था बुरी तरह चरमरा गई। मगर आम आदमी के जीवन की गाड़ी तो पटरी से ही उतर गई है। अन्य खाने-पीने की वस्तुएं भी महंगी होती जा रही हैं। ऐसे में पेट्रोल और डीजल की कीमत को बढ़ाना वाजिब नहीं है।
, खारवन, जगाधरी,

विनय मोहन,
भिलाई, छत्तीसगढ़

सच सामने आये

बीजेपी अध्यक्ष जेपी नड्डा ने कांग्रेस पार्टी पर निशाना साधते हुए कहा है कि राजीव गांधी फाउंडेशन को चीन से फंडिंग मिलती है। इसके अलावा देश के लिए जो प्रधानमंत्री राहत कोष बनाया गया, उसमें से भी 2005 से 2008 तक राजीव गांधी फाउंडेशन को राशि मिलती थी। हालांकि, कांग्रेस ने इन सभी आरोपों को नकार दिया है। अब गृह मंत्रालय द्वारा बनाई गई कमेटी इसकी जांच करेगी। वैसे भी जो सच है, वह सामने तो आ ही जाएगा।

योगिता सारंग,
भोपाल, मध्य प्रदेश

युवाओं को आने दो

जब पायलट और उसकी युवा ब्रिगेड ने चुनाव में जमीनी लड़ाई लड़कर पार्टी को जिताया था तभी पायलट को मुखिया बना देना चाहिए था। आखिर राहुल क्यों पायलट और सिंधिया को लेकर मैदान में डटकर खड़े नहीं हुए? उन्होंने बुजुर्गों को कई बार नसीहतें भी दी थीं कि अपने पुत्रों की बजाय पार्टी पर ध्यान दें। अपने घर में ही वह दोहरेपन का सामना कर रहे हैं। पार्टी में युवाओं के पर कतरे जा रहे हैं। सोनिया गांधी सर्वेसर्वा हैं। पार्टी हित में पायलट और गहलोत में समीकरण बनाकर रखना तो उनका ही दायित्व बनता था। इस समय कांग्रेस की युवा ब्रिगेड में जहां-तहां बेचैनी और बगावत सामने आ रही है, आलाकमान को हवा रुख देखकर लचीला होना ही पड़ेगा। पायलट के साथ दोहरा खिलवाड़ छोड़ें। अब युवाओं को कमान सौंपने का वक्त आ गया है।

मीरा गौतम,
इंदौर, मध्य प्रदेश

नेम-फेम के बीच

हाल ही में सुशांत सिंह राजपूत की आत्महत्या ने सच में साबित कर दिया है कि जिंदगी जीने के लिए पैसा होना महत्वपूर्ण नहीं है। बल्कि 'जिंदगी में अगर कुछ सबसे ज्यादा महत्वपूर्ण है तो वह है खुद की जिंदगी।' चकाचौंध की जिंदगी जीने वाले सितारे कुछ इस तरह से टूट जाते हैं कि जैसे जिंदगी में उसके पास जीने के लिए कुछ बचा ही नहीं है। आत्महत्या की दो ही वजह होती हैं या तो किसी के दबाव में आकर वह आत्महत्या कर लेता है। या वह मानसिक रूप से टूट चुका है। ज्यादातर सितारों की आत्महत्या की वजह उसकी असफल प्रेम कहानी होती है। कई बार उसका फेम और नेम पब्लिक में कम हो जाता है तो भी तनाव में आकर आत्महत्या कर लेते है।
दिव्येश चोवटिया,

शामलाल कौशल,
रायपुर, छत्तीसगढ़

मनोवैज्ञानिक उपचार

अभिनेता सुशांत सिंह राजपूत की घटना फिल्म उद्योग के लिए दुखद है। सफलता-असफलता से आत्महत्या के बारे में सोचना गलत है। ऐसे में कलाकारों को अपने अवसाद पर काबू पाना चाहिए और मनोबल को कम नहीं होने देना चाहिए। उतार-चढ़ाव को झेलने की क्षमता होनी चाहिए। जीवन बहुत ही अमूल्य है। इसको अच्छे से जीने के लिए सितारों को समय-समय पर मनोवैज्ञानिक की सलाह लेनी चाहिए ताकि वे मानसिक तनाव से मुक्त हो सके। देश में ऐसे केंद्र तैयार किए जाएं जहां लोग अपनी छोटी-बड़ी समस्याओं पर चर्चा कर सकें।

समीर शर्मा,
बिलासपुर, छत्तीसगढ़

नई चुनौती

भारत में प्रतिदिन कोरोना वायरस के रिकार्ड मामले सामने आ रहे हैं। वहीं दूसरी ओर 32 देशों के 239 वैज्ञानिकों ने विश्व स्वास्थ्य संगठन को बताया है कि वायरस के वायु से भी फैलने की संभावना है। अब केंद्र और राज्य सरकारों को समय -समय पर जनता को और जागरूक करना होगा। मास्क, सामाजिक दूरी को अपनी दिनचर्या का हिस्सा बनाना होगा।

- संदीप कुमार,
नई दिल्ली

खेती के संकट

भारत के पास कृषि एकमात्र हथियार है जो कोरोना काल की घड़ी में अर्थव्यवस्था को संभालने में सहयोग कर रहा है। लेकिन कृषि पर भी अब टिड्डियों ने हमला बोल दिया है। इस समय किसान, सरकार और कृषि वैज्ञानिकों के लिए यह सबसे बड़ी समस्या है। टिड्डियां सारी फसल तबाह कर देती हैं। कोरोना और टिड्डियों को खत्म करने के लिए अभी तक कोई उपाय सामने नजर नहीं आ रहा है। टिड्डियों के हमले ने किसानों की चिंता को बढ़ा दिया है।

ईशा शर्मा,
रतलाम, मध्य प्रदेश

खटकता घटनाक्रम

गैंगस्टर विकास दुबे का पकड़े जाना, फिर कानपुर में गाड़ी का पलटना और विकास का पुलिस की पिस्टल छीनकर भागने की कोशिश कर उसका एनकाउंटर करना, यह सब कुछ खटकता है। यह सिर्फ गैंगस्टर का एनकाउंटर नहीं हुआ बल्कि कई गहरे राजों का भी एनकाउंटर हुआ है।

प्रदीप कुमार दुबे,
देवास, मध्य प्रदेश

भाजपा में आते ही जागा श्रीमंत का मराठा प्रेम

कांग्रेस छोड़कर भाजपा में शामिल हुए युवा नेता ज्योतिरादित्य सिंधिया ने अब संघ में भी अपनी पैठ जमाना शुरू कर दी है। संघ मुख्यालय नागपुर से लेकर दिल्ली तक संघ के पदाधिकारियों से मेल मुलाकात ने ज्योतिरादित्य सिंधिया के मराठा प्रेम को उजागर कर दिया है। सिंधिया जब से बीजेपी में आए हैं वह लगातार मराठा भाषी लोगों से मेलजोल बढ़ा रहे हैं। चाहे वे बीजेपी के राष्ट्रीय उपाध्यक्ष सांसद व मध्यप्रदेश के प्रभारी विनय सहस्त्रबुद्धे हो या बीजेपी के वरिष्ठ नेता कृष्ण मुरारी मोघे। इनके अलावा ग्वालियर के सांसद विवेक शेजवलकर और बीजेपी प्रदेश संगठन महामंत्री सुहास भगत भी नजदीकियां बना रहे हैं। भाजपा में शामिल होने के बाद जब सिंधिया भोपाल पहुंचे थे तब बीजेपी कार्यालय में उनके स्वागत के दौरान कृष्ण मुरारी मोघे मंच के नीचे बैठे थे यह देखकर सिंधिया स्वयं कृष्ण मुरारी मोघे को लेने मंच से नीचे उतरे और मोघे को मंच पर बैठाया। उस दौरान सिंधिया ने अपने संबोधन में कहा था कि कृष्ण मुरारी मोघे और हमारे परिवार के 3 पीढ़ियों का साथ हैं। इसके बाद से सिंधिया धीरे - धीरे बीजेपी से जुड़े सभी महाराष्ट्रीयन नेताओं से करीबियां बढ़ा रहे हैं। आरएसएस में भी सभी प्रमुख पदों पर महाराष्ट्रीयन पदाधिकारी है।

यही वजह है कि ज्योतिरादित्य सिंधिया संघ के जरिये बीजेपी में अपनी पकड़ और मजबूत करना चाहते हैं। ज्योतिरादित्य सिंधिया भी मूलतः मराठा परिवार से आते हैं। ज्योतिरादित्य सिंधिया ने 22 जुलाई को राज्यसभा सांसद के तौर पर शपथ ली। शपथ लेने के 2 दिन बाद उन्हें मानव संसाधन विकास मंत्रालय से जुड़ी समिति में सदस्य नियुक्त किया गया है। जबकि विनय सहस्त्रबुद्धे को समिति का अध्यक्ष बनाया गया है। अब बीजेपी में भी ज्योतिरादित्य सिंधिया की स्वीकार्यता बढ़ने लगी है। मध्यप्रदेश की 27 सीटों पर होने वाले विधानसभा उपचुनाव में भी सिंधिया को अपने आपको साबित करना होगा। सिंधिया खेमे के 22 विधायकों ने कांग्रेस से और विधायक पद से इस्तीफा दिया था। जिसमे 14 पूर्व विधायकों को शिवराज सरकार में मंत्री बनाया गया है। मंत्री बने रहने के लिए सभी को चुनाव जीतना भी जरूरी है। इसी को ध्यान में रखते हुए ज्योतिरादित्य सिंधिया संघ से जुड़े नेताओं को साधने की कोशिश में जुटे है। मध्यप्रदेश की 27 सीटों पर होने वाले उपचुनाव में 22 सीटों पर सिंधिया समर्थक चुनावी मैदान में होंगे। सभी 22 प्रत्याशियों को चुनाव में जीत दिलाने की बड़ी जिम्मेदारी भी सिंधिया के कंधों पर है। सभी 22 प्रत्याशियों ने सिंधिया के कहने पर अपने अपना राजनीतिक भविष्य दांव पर लगा दिया। इसलिए सिंधिया के सामने सबसे बड़ी चुनौती अपने समर्थकों को जिताने की है। 27 सीटों पर होने वाले विधानसभा चुनाव को देखते हुए ज्योतिरादित्य सिंधिया को भितर-घात का डर सताने लगा है। ज्योतिरादित्य सिंधिया इस बात को भलीभांति जानते हैं कि बीजेपी कार्यकर्ता आज भी उनके समर्थकों को स्वीकार नहीं कर पा रहे हैं। कांग्रेस की सरकार में मंत्री और विधायक रहते हुए सिंधिया समर्थकों ने बीजेपी कार्यकर्ता और पदाधिकारियों के साथ दुर्भावनावश कार्रवाई की थी और परेशान किया था। चाहे भूमाफिया के तौर पर दिए गए जख्म हो या कार्यकताओं पर लगे राजनीतिक मुकदमे। भाजपा कार्यकर्ता आज भी उन जख्मो को भूलने को तैयार नहीं है।

– ह्रदेश धारवार,
9755990990

अपने सरोकारों के तहत 'दुनिया इन दिनों' ने लोककला एवं संस्कृति में महत्वपूर्ण योगदान के लिए वारियर एल्विन सम्मान तथा कला-साहित्य में शोधपरक लेखन के लिए डॉ। मनोज लाल आर्ट फेलोशिप की घोषणा लगभग तीन वर्ष पूर्व की थी। एल्विन सम्मान जहां हरिहर वैष्णव के बाद पोस्तोबाला को प्रदान किया जा रहा है, वहीं डॉ। मनोज फेलोशिप से यशस्विनी पांडेय (बड़ौदा) और दिनकर कुमार (गुवाहाटी) को सम्मानित किया जा चुका है। इसी क्रम में हमने सिने पत्रकारिता के लिए प्रतिवर्ष निम्न अलंकरण प्रदान करने का निश्चय किया है।

– संपादक

विष्णु खरे सिने-पत्रकारिता अलंकरण

हिन्दी के अप्रतिम कवि विष्णु खरे की प्रतिष्ठा कवि के साथ-साथ बतौर अनुवादक और आलोचक रही है, किंतु वे भारतीय और विश्व-सिनेमा में गहरी और गंभीर रुचि के लिए भी जाने गये। निश्चित ही सिने-पत्रकारिता के क्षेत्र में विष्णु खरे का अवदान विशिष्ट है। सिने-माध्यम का आस्वादन, कला-बोध की विनिर्मिति और समीक्षा-भाषा का विकास विष्णु खरे ने स्वायत्त शिल्प में संभव किया। देश-विदेश के यथार्थवादी और साहित्य से उद्भूत सिनेमा को उन्होंने अपने लेखन के केन्द्र में रखा।

'दुनिया इन दिनों' उनके साहित्य से इतर सिनेमा में अपूर्व योगदान के लिए यह पुरस्कार घोषित करते हुए गर्व का अनुभव करती है। पुरस्कार के लिए सुयोग्य व्यक्ति का चयन कवि-लेखक लीलाधर मंडलोई के संयोजकत्व में पत्रिका के संपादक द्वारा चयनित जूरी करेगी। पुरस्कार के तौर पर पुरस्कृत लेखक को रुपये 11, 000/- मानधन एवं प्रशस्ति-पत्र प्रदान किया जाएगा।

यह अलंकरण प्रतिवर्ष विष्णु खरे के जन्म-स्थान छिंदवाड़ा अथवा पारस्परिक सहमति से चयनित किसी शहर में समारोहपूर्वक प्रदान किया जाएगा।

डॉ. सुधीर सक्सेना

कोरोना-काल में सोशल मीडिया पर साहित्य

कोरोना-सीरीज की ये पंद्रह कविताएं कहीं छपी नहीं। कल छप जाए बात दीगर, मगर ये कविता के वृहत्तर पाठक वर्ग तक पहुंच गयी हैं। इनमें से कुछ का अनुवाद अंग्रेजी में दिनेश कुमार माली ने किया, तो कुछ अन्य का भास्कर चौधरी ने। उदय बेहरा ने इनका ओड़िया में अनुवाद किया तो सुभाषिणी रत्न यक ने सिंहली में अनुवाद की इच्छा व्यक्त की। डॉ. संध्या टिकेकर ने तो कोरोना विषयक एक कविता का मराठी अनुवाद ही कर डाला।

कोरोना हमारी शब्दावली और शब्दकोश में आया हुआ नवजात शब्द है। यूं तो यह शब्द चिकित्सा और भेषज शास्त्र में अर्से से प्रयुक्त था, असबत्ता इसका अत्यंत संक्रामक संस्करण कोविड-19, जिससे सारा संसार त्रस्त है, सर्वथा नया है। यद्यपि इससे जुड़े क्वारंटाइन का ज्ञात इतिवृत्त सन् 1377 से शुरू होता है और पिछली कई शताब्दियां विश्व में महामारियों की चश्मदीद हैं, लेकिन अतीत की किसी भी विभीषिका की व्यापकता और सघनता ऐसी न थी। विश्व में विभईषिकाएं पहले भी आईं, कभी बाढ़ यानी जलालावन, कभी दुर्भिक्ष, कभी ज्वालामुखियों में अग्निस्फोट, कभी अग्निकांड, कभी हैजा, कभी ताऊन, कभी ऐड्स, कभी मस्तिष्क-ज्वर, कभी त्सुनामी या टीना, कभी विश्वयुद्ध, कभी नरमेध तो कभी भूकंप, किन्तु विश्व में सभी महाद्वीप, सभी भूखंड, देश-देशांतर, क्या विकसित, क्या अविकसित, क्या विकासशील राष्ट्र, क्या राजा, क्या रंक, क्या गांव, क्या कस्बे, क्या शहर सबकुछ आज खौफ के साये में हैं, लेकिन सबसे बढ़कर कोरोना एक सार्वदेशिक हौव्वा है, डर है, खतरा है, जो चीन के वुहान से शुरू होकर चतुर्दिक-सर्वत्र मंडरा रहा है। कह सकते हैं कि करोड़ों वर्षों से अपनी धुरी पर और अपने प्रदक्षिणा पथ में अहर्निश घूम रही पृथ्वी मरणांतक खौफ से ऐसे स्याह बोगदे से गुजर रही है, जिसका रोशन सिरा फिलवक्त नजर नहीं आता।

''यह डर है/ डरों की तालिका में/ अपूर्व अनहोना और अनिष्टकारी-'' कोरोनाकाल में कवि कहता है : ''कोई छईंकेगा सहसा/ और हम डर जाएंगे/ यकबयक कोई गले लगाएघा तपाक से/ और हम डर जाएंगे/ यत्र तत्र सर्वत्र/ डर हमारे साथ होगा/ डर हमारे साथ चहलकदमी करेगा/ हम डरे हुए होंगे/ और डर निडर/ क्या भय और मनुष्य की/ जुगलबंदी के सूत्रपात के लिए/ याद किया जाएगा/ इतिहास में/ सन बीस सौ बीस ईस्वी/ नामुराद/- जी हां, ये उन कविताओं की पंक्तियां हैं, जो कोरोनाकाल में लिखी गईं। कोरोना-सीरीज की ये पंद्रह कविताएं कहीं छपी नहीं। कल छप जाए बात दीगर, मगर ये कविता के वृहत्तर पाठक वर्ग तक पहुंच गयी हैं। इनमें से कुछ का अनुवाद अंग्रेजी में दिनेश कुमार माली ने किया, तो कुछ अन्य का भास्कर चौधरी ने। उदय बेहरा ने इनका ओड़िया में अनुवाद किया तो सुभाषिणी रत्नायक ने सिंहली में अनुवाद की इच्छा व्यक्त की। डॉ. संध्या टिकेकर ने तो कोरोना विषयक एक कविता का मराठी अनुवाद ही कर डाला।

प्रश्न उठता है कि यह कैसे मुमकिन हुआ? प्रश्न सीधा है और उत्तर भी उतना ही सीधा और सपाट। उत्तर है कि यह सोशल मीडिया से मुमकिन हुआ। सोशल मीडिया है तो आज बहुत कुछ मुमकिन है। सोशल मीडिया की बदौलत ये कविताएं सरहद के पार पहुंच गयीं, मसलन मस्क्वा में अनिल जनविजय, टोरंटो में हंसा दीप और धरम जैन, कोलंबो में सुभाषिणी रत्नायक तक। दिल्ली से प्रकाशित हिन्दी की प्रतिष्ठित अकादेमिक पत्रिका ने उन्हें शीघ्र छापने की सूचना दी। अनगिन प्रतिक्रियाएं मिलीं। सराहनाएं भी।

बिला शक यह मुमकिन हुआ सोशल मीडिया की उपस्थिति और उसकी अकूत शक्ति से। डर से डर, डर से कहीं बड़ा होता है। समूची पृथ्वी पर आज डर का साम्राज्य है। पृथ्वी डरी हुई है। बहुत कुछ स्थगित है। बहुत कुछ जो जरूरी और हमारे दैनंदिन का हिस्सा था, को कोरोना ने अवरुद्ध या स्थगित कर दिया है। एक बड़ा-सा वैक्यूम, बड़ी-सी रिक्तिका उभर आई है। गनीमत है कि हम निर्विकल्प नहीं हैं। हमारे पास 'ऑप्शन' हैं। सोशल मीडिया ने बखूबी उस वीराने को, सन्नाटे को, अभाव को तोड़ा

है, जिसकी जकड़न सोशल मीडिया की अनुपस्थिति में बहुत भयावह या कहें तो अकल्पनीय हद तक तकलीफदेह हो सकती थी।

अभिव्यक्ति और संप्रेषणीयता का टेक्नोलॉजी से सीधा और अटूट रिश्ता है। चमड़े और भोजपत्र के बाद कागज की खोज और फिर गूटेनबर्ग द्वारा छापेखाने की ईजाद ने जो क्रांति की थी, कंप्यूटर के रास्ते अब सोशल मीडिया उसकी ही आधुनिकतम कड़ी है, उसकी व्यापकता और त्वरा के सामने पुराने, पारंपरिक व प्रचलित साधन फीके, महंगे और गैर-जरूरी होते जा रहे हैं। सोशल मीडिया पर 'कविता-संवाद' के जरिए अपनी पहचान बना चुके वरिष्ठ कवि कौशल किशोर का मानना है कि साहित्य को स्वयं नई तकनालाजी के अनुरूप ढालना जरूरी है और इसी से उसे नये आयाम मिलते हैं। कोरोनाकाल में सोशल मीडिया की सकारात्मक भूमिका बखूबी सामने आई है। यह सोशल मीडिया ही है कि आजकल जैसी पत्र-पत्रिकाएं लोगों तक पहुंच रही हैं।

लखनऊ से प्रकाशित दैनिक 'जनसंदेश टाइम्स', जिसने बहुत कम समय में साहित्यिक व बौद्धिक समाज में पहचान और प्रतिष्ठा अर्जित की है, के संपादक सुभाष राय भी कहते हैं कि अभिव्यक्ति और संप्रेषण का संभावित विकल्प सोशल मीडिया में है। सोशल मीडिया ही हमारी अधुनातन गोष्ठि है। यकीनन सोशल मीडिया कोरोनाकाल में सशक्त विकल्प और जरूरी माध्यम बनकर उभरा है। साहित्य समाज की जरूरत है। यदि इस डरे हुए, सहमे हुए, बेढब और अराजक समय में सोशल मीडिया का वजूद नहीं होता तो सोचिये कि क्या होता? आस्था, संकल्प, विश्वास शब्दों के व्योम में पंख खोलते हैं। कोरोनाकाल में विभिन्न संकायों और विधाओं की बात करें। चुनौती सबके सामने थी, मगर इस चुनौती को साहसपूर्वक कुबूल करने का जतन किया कविता ने। कविता यूं भी अनुभूतियों की श्रेष्ठतम कलात्मक अभिव्यक्ति हैं। वह आस्था है, यकीन है, प्रार्थना है, जिरह है, सांत्वना है, आक्रोश है और उच्छ्वास भी। कविता में शब्दों को मांत्रिक सांचे में ढालने का अद्भुत माद्दा है। इसमें शक नहीं कि कोरोनाकाल में सोशल मीडिया पर रचनाकारों की बाढ़ आ गई है। इतनी जल्दी किसी औपन्यासिक कृति की तो अपेक्षा करना ही अनुचित होगा। किन्तु गद्य-कृतियों की बात करें तो कहानियां कितनी आई हैं? ले देकर पंकज मित्र और सुभाषचंद्र कुशवाहा की कहानियां। इसी क्रम में एक कहानी दिनेश भट्ट की 'लॉकडाउन में लड़की' भी है और युवा कथाकार फरजाना मेंहदी की 'शैतान की शरारत' भी। सुभाष कुशवाहा की कहानी 'समय उचट गया है' जहां बदलते, बदरंग और बदहाल होते समय की कहानी है, वहीं पंकज मित्र की 'कोरोना से ऐन पहले' पांच कथाओं का समुच्चय है। इनमें क्वारंटाइन, सोशल डिस्टेंसिंग, सेनेटाइजर, आइसोलेशन और लॉकडाउन के अंतर्गत कथा का तानाबाना बुना गया है।

कोरोनाकाल में गद्य-कृतियों की बात करें तो कहानियां कितनी आई हैं? ले देकर पंकज मित्र और सुभाषचंद्र कुशवाहा की कहानियां। इसी क्रम में एक कहानी दिनेश भट्ट की 'लॉकडाउन में लड़की' भी है और युवा कथाकार फरजाना मेंहदी की 'शैतान की शरारत' भी। सुभाष कुशवाहा की कहानी 'समय उचट गया है' जहां बदलते, बदरंग और बदहाल होते समय की कहानी है, वहीं पंकज मित्र की 'कोरोना से ऐन पहले' पांच कथाओं का समुच्चय है।

कथाओं के कथानक अलहदा होकर भी परस्पर गुंथे हुए हैं और ऐसा लगता है कि वे एक लंबी कहानी की कड़ियां हैं। कहानियों के कोका, अशरफ, प्रो. गुप्ता, गबरू-झबरू और बन्वे मियां आदि पात्र समय की दृश्यावलि रचते हैं। 'संकल्प' सांस्कृतिक संस्था, बलिया के आशीष त्रिवेदी ने प्रवासी श्रमिकों की दशा-दुर्दशा पर एक नायक 'सुगना' लिखा है, जिसका सोशल मीडिया पर मंचन भी हुआ है। उन्होंने एक भोजपुरी नाटक 'वामपंथी हवे का' भी लिखा है।

कोरोनाकाल में सोशल मीडिया की बदौलत एक बात यह भी हुई है कि हम विभीषिका में साहित्य और साहित्य में विभीषिका की उस परंपरा से वाकिफ हो गये हैं, जो अज्ञात तो नहीं, लेकिन अस्पज्ञात जरूर थी। कोरोनाकाल में सोशल मीडिया हमारे ज्ञान-कोशों को समृद्ध कर रहा है। हम जान सके हैं कि सन 1665 में महामारी में लंदन में सार्वजनिक तौर पर लोगों के इकट्ठा होने पर पाबंदी लगी थी। डेनियल डेफो ने सन 1772 में 'ए जर्नल ऑफ प्लेग इयर' लिखा तो उसमें सन 1665 के भयावह प्लेग का, यहां तक कि लॉकडाउन का भी हवाला था। ओरिक्स एण्ड क्रेक, चिल्ड्रन हॉस्पिटल, फाइंड मी, ऐवरेन्स, ईयर ऑफ द फ्लड आदि में महामारियों का चित्रण है। आल्वेयर कामू ने 'द प्लेग' में अल्जीरिया में ओरान में प्लेगजन्य विनाश का जिक्र किया है। सन 1939 में कैथरीन पोर्टर ने 'पेल हॉर्स', पेल राइडर में स्पेनिश फ्लू का तो 1978 में स्टीफेन किंग ने 'द स्टैण्ड' में फ्लू का। गैब्रिएला गार्सिया मार्खेज ने 'लव इन द टाइम ऑफ कॉलरा' में विभीषिका दर्शाई है। भारत में गोस्वामी तुलसीदास भी 'कहां जाई, का करी' कहकर दुर्दशा को व्यक्त करते हैं तो बंकिम 'आनंदमठ' में अकालजन्य दशा को चित्रित करते हैं। 'रांगेय राघव', 'तूफानों के बीज' और प्रकाशचंद्र गुप्त 'बंगाल का अकाल' ये साहित्य के सरोकारों को पूरा करते हैं। फणीश्वरनाथ रेणु की पहलवान की ढोलक और हड्डियों का पुल जैसी कहानियों और रिपोताजों में अकाल की विभीषिका का मार्मिक चित्रण है। प्रतापराव कदम के लेख से हमें ज्ञात होता है कि करीब सौ वर्ष पूर्व स्पेनिश

प्रतापराव कदम के लेख से हमें ज्ञात होता है कि करीब सौ वर्ष पूर्व स्पेनिश फ्लू के कहर में महात्मा गांधी और प्रेमचंद तक ने स्वयं को कोरंटाइन किया था।

सूचना के इस सघन दौर में राजिंदरसिंह बेदी की सन 1940 में लिखी कहानी भी पुनः प्रकाश में आई है। बेदी ने इस कहानी को शीर्षक दिया था : 'क्वारंटाइन'।

संस्कृति विमर्श के अंतर्गत भारतीय लघुचित्रों यानी मिनिएचर्स पर कला मर्मज्ञ नर्मदाप्रसाद उपाध्याय का ऑनलाइन व्याख्यान सुनने को मिल रहा है। और अन्य विमर्श भी।

वरिष्ठ कवि अशोक वाजपेयी जब कहते हैं : ऐसे समय को हम कैसे लिख पाएंगे और निष्कर्षतः कहते हैं कि हम अपना समय लिख नहीं पाएंगे तो आश्चर्य होता है।

फ्लू के कहर में महात्मा गांधी और प्रेमचंद तक ने स्वयं को कोरंटाइन किया था। महाकवि निराला ने 'कुल्लीभाट' में स्पेनिश फ्लू से स्वजनों के कालकवलित होने का वर्णन किया है। सूचना के इस सघन दौर में राजिंदरसिंह बेदी की सन 1940 में लिखी कहानी भी पुनः प्रकाश में आई है। बेदी ने इस कहानी को शीर्षक दिया था : 'क्वारंटाइन'।

इसमें शक नहीं कि असमाप्त कोरोनाकाल में सोशल मीडिया ने साहित्य को बखूबी ठौर दिया है। बीसवीं और इक्कीसवीं सदी की कविता मुख्यतः यथार्थ से मुठभेड़ की कविता है। इसमें जहां लहूलुहान होने और यकीन के किरचकिरच बिखरने का खतरा है, वहीं दुःसह परिस्थितियों से पार पाकर ख्वाबों को बचाए रखने के जीवट की दरकार भी।सोशल मीडिया में पवन करण, सुशील मानव, राकेश पाठक के जरिये फीलगुड की सत्यकथाएं भी सामने आई हैं और हम अब्दुल्ला रहमान मलाबारी और ज्योति पासवान को जान सके हैं। सोशल मीडिया में खासे सक्रिय नीरजकुमार मिश्र ने कोरोनाकाल में लिखित विविध कविताओं का संकलन ही तैयार कर लिया है, जिसका शीर्षक है : 'प्रेम कोई वायरस हो।' कोरोकाल को उद्घाटित करती नीरज की पंक्तियां हैं : जब-जब सोने के लिए/ करता हूं आंखें बंद/ आंखें बहदवास पहुंच जाती हैं/ पटरियों पर बिखरी रोटियों के पास।' इसी क्रम में दृष्टव्य है संजय कुंदन की कविता का अंश : 'जैसे आए थे/ वैसे ही जा रहे हम/ यही दो-चार पोटलियां साथ थी तब भी/ आज भी हैं/ और यह देह/ लेकिन अब आत्मा पर खरोंचें कितनी बढ़ गई हैं।'

कोरोनाकाल में सोशल मीडिया के जरिए हमने लाखों प्रवासी श्रमिकों की व्यथा जानी है। कविताओं में विस्थापन की पीड़ा और घर की अहमियत उभरी है। राकेश रेणु की पंक्तियां हैं : 'दादाजी के विश्वास की तरह/ अपने जर्जर होते पुराने घर में लौट जाऊंगा एक दिन/ दादाजी की गोद है यह/ दादी की थपकियां और नसीहतें/ नानी मामी के किस्से और लोरियां/ रक्त-मज्जा में बसा यह घर/ मेरी रगों में बहता है/ यहां लौटकर हरबार/ पुनर्नवा होता हूं मैं।''

सोशल मीडिया को यत्नपूर्वक खंगाले तो कह सकते हैं कि रचनाकार उसका 'अप्टीमम' उपयोग कर रहे हैं। कौशल किशोर, नीरजकुमार मिश्र, अरुण कुमार आदि इसमें अग्रणी हैं। सोशल मीडिया पर पाठ, विमर्श और व्याख्यान की झड़ी है। लॉकडाउन में कविताओं का क्रम जारी है। संस्कृति विमर्श के अंतर्गत भारतीय लघुचित्रों यानी मिनिएचर्स पर कला मर्मज्ञ नर्मदाप्रसाद उपाध्याय का ऑनलाइन व्याख्यान सुनने को मिल रहा है। और अन्य विमर्श भी। फेसबुक, ब्लॉग, यूट्यूब सर्वत्र साहित्य पैठ रहा है। मुद्रित और अमुद्रित साहित्य सोशल मीडिया के 'स्पेस' को लगातार छेंक रहा है। ललनटॉप पर एक कविता रोज का सिलसिला शुरू हो गया है। मगर सोशल मीडिया पर कविताओं के क्रम में बाजी मारी है कौशल किशोर ने। वे अब तक कविता संवाद के 12 सत्र कर चुके हैं। लगभग एक कवि और सैकड़ा के ऊपर कविताएं। इसमें शुमार हैं सुधीर सक्सेना, असद जैदी, मदन कश्यप, स्वप्निल श्रीवास्तव, रामकुमार कृषक, सुभाष राय, कात्यायनी, महेंद्र नेह, सरला माहेश्वरी, देवेंद्र आर्य, चंद्रेश्वर, असंगघोष, सुशील कुमार, जीवन सिंह, बोधिसत्व, विमल किशोर, डीएम मिश्र, शैलेंद्र शांत, शंभु बादल जैसे वरिष्ठ और संजय कुंदन, सीमा आजाद, प्रतिभा कटियार, शिव कुशवाहा, विहाग वैभव, शंकरानंद, भास्कर चौधरी, पंकज चौधरी, विनिताभ कुमार जैसे युवा कवि भी।

कोरोनाकाल की कविताओं में मृत्यु , उत्पीड़न और विस्थापन का दर्द तो है, लेकिन हताशा है तो भी नगण्य। वजह यह कि कविता की आंखें अपने समय के पार देखती है। दिलचस्प तौर पर वरिष्ठ कवि अशोक वाजपेयी जब कहते हैं : ऐसे समय को हम कैसे लिख पाएंगे और निष्कर्षतः कहते हैं कि हम अपना समय लिख नहीं पाएंगे तो आश्चर्य होता है। एक कवि का कविता की ताकत पर संदेह विस्मय उपजाता है। प्रसंगवश मैं कोरोनाकाल में लिखी अपनी छोटी-सी कविता पढ़ना चाहूंगा : 'तुम कहते हो/ क से काश/ मैं कहता हूं कोशिश/ तुम कहते हो क से कौव्वा/ मैं कहता हूं कोयल/ तुम कहते हो क से कैद/ मैं कहता हूं कलम/ तुम कहते हो क से कोरोना/ मैं कहता हूं कविता/ मित्रो, कितनी भिन्न है/ हमारी और तुम्हारी वर्णमालाएं..।'

सोशल मीडिया पर साहित्य की बातों के क्रम में निकष है कितना उच्छ्वास, कितना सामाजिक दाय। यकीनन साहित्य सामाजिक कर्म है। रचनाकार की रचनाओं से उशके सरोकारों का पता चलता है। यथार्थ से कन्नी काटना सजग रचनाकारों की नहीं, शुतुरमुर्गों और अमूर्तन व ऊलजलूल कल्पनालोक में खोये रचनाकारों की प्रवृत्ति है। हर युग में अच्छी और बुरी रचनाएं लिखी गई हैं। समय से बड़ा 'फिल्टर' नहीं होता। तो कोरोनाकाल के साहित्य में सामाजिक दाय अधिक है, उच्छ्वास कम। समवयस्क कवि सुभाष राय की पंक्तियां हैं : 'तस्वीरें अधूरी रहती हैं हमेशा/ जब कैमरे बंद रहते हैं/ तब भी सूरज रुकता नहीं/ जरा सोचो उन तस्वीरों के बारे में/ जो अब तक किसी फ्रेम में नहीं आईं...।'

तो कवि कलम से कैमरे का नाम भी लेता है। कलम दृश्य को एडिट भी करती है, उसमें जोड़ती-घटाती भी है। रंगों को चटख करती है और मद्धिम भी। कलम की रुचि जो है के साथ-साथ जैसा होना चाहिये में भी होती है। कविता को नया फलक मिला है। यह रचनाएं तय करेगी कि कोरोना और पोस्ट कोरोनाकाल प्री-कोरोनाकाल से कितना भिन्न और बेहतर है।

कोरोनाकाल में सोशल मीडिया के जरिए हमने लाखों प्रवासी श्रमिकों की व्यथा जानी है। कविताओं में विस्थापन की पीड़ा और घर की अहमियत उभरी है। राकेश रेणु की पंक्तियां हैं : 'दादाजी के विश्वास की तरह/ अपने जर्जर होते पुराने घर में लौट जाऊंगा एक दिन/ दादाजी की गोद है यह/ दादी की थपकियां और नसीहतें/ नानी मामी के किस्से और लोरियां/ रक्त-मज्जा में बसा यह घर/ मेरी रगों में बहता है/ यहां लौटकर हरबार/ पुनर्नवा होता हूं मैं।''

संपर्क : 9711123909

शीघ्र प्रकाश्य

सामयिक पत्रिका, अगस्त, 2020

दुनिया इन दिनों

समाज, साहित्य और संस्कृति का अक्स

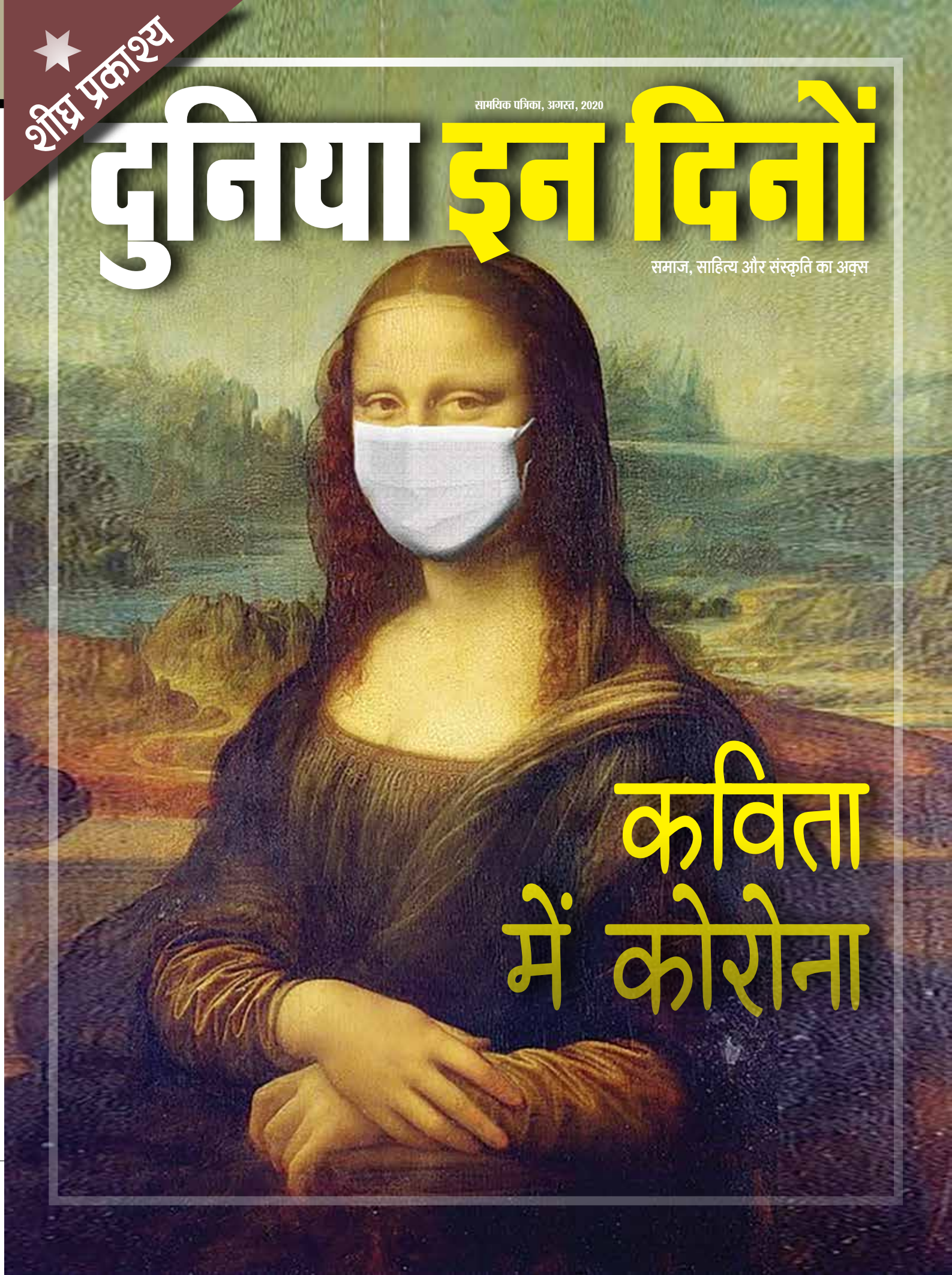

कविता में कोरोना

कोरोना काल के बाद कैसी होगी दुनिया...!

एक बड़ा सवाल यह है कि मनुष्य के मूलभूत व्यवहार, मन:स्थिति में इस महा आपदा से क्या कोई परिवर्तन होगा? क्या लोग और समाज कोरोना काल में मिले अपार दु:ख, पीड़ा से कुछ सीख कर घृणा, विद्वेष,लालच आदि से जरा-सा भी मुक्त हो सकेंगे? क्या हम कोरोना उत्तर काल में अंधविश्वास, अज्ञानता और जड़ता से मुक्त कर वैज्ञानिकता, तार्किकता, समानता और सदभाव आधारित समाज की देहरी पर के कदम बढ़ाएंगे?

डॉ. राकेश पाठक

सम्पूर्ण मानवता अपने इतिहास के सबसे कठिन दौर से गुजर रही है। चीन के विहान में पैदा हुआ कोरोना नाम का वायरस रक्त बीज बनकर लगभग पूरी पृथ्वी पर पसर गया है। अनगिनत लोग काल के गाल में समा चुके हैं, असंख्य और कतार में हैं।

दुनिया के तमाम देश इस महाविकट आपदा से निपटने में लगे हैं। इस महमारी से बचाव के लिये वैक्सीन बनाने के लिये भी कई देशों के वैज्ञानिक सिर जोड़ कर प्रयोगशालाओं में दिन रात एक किये हुए हैं।

'कोरोना उत्तर काल' में असली लड़ाई आर्थिक मोर्चे पर लड़ी जाना तय है और उसमें चीन से मुकाबला करना किसी के लिये भी आसान नहीं होगा। फिलहाल तो इसी बात का इन्तिजार करना होगा कि असल में कोनोना कब विदा होगा और किस तारीख से 'कोरोना उत्तर काल' का प्रारंभ माना जायेगा?

कोई नहीं जानता कि इस लाइलाज बीमारी पर काबू पाया जा सकेगा? वैक्सीन कब तक बन पायेगी और कब तक हर इंसान तक पहुंचेगी।

'कोरोना उत्तर काल' की दुनिया पर चर्चा करने से पहले कोरोना के भविष्य की चर्चा करना समीचीन होगा।

बीते बरस 2019 में चीन के विहान इलाके से फैली बीमारी अब तक बेकाबू ही है। इसकी रोकथाम के लिये वैक्सीन बनाने पर रूस, अमेरिका और यूरोप के देशों सहित भारत में भी अनुसंधान चल रहा है।

रूस के वैक्सीन के दावे पर अमेरिका भरोसा नहीं कर रहा और बिल गेट्स जैसे दुनिया के सबसे बड़े धन्ना सेठ अलग ही राग अलाप रहे हैं।

भारत में वैक्सीन की आमद से पहले ही अम्बानी की कंपनी जिओ ने उसके वितरण का दावा करके अलग ही बहस छेड़ रखी है।

कोई नहीं जानता कि इस महामारी पर सचमुच कब काबू पाया जा सकेगा। विश्व स्वास्थ्य संगठन का यह कहना भी विचारणीय है कि हो सकता है इसकी वैक्सीन कभी न बन पाए और कभी पूरी तरह सफल न हो पाए।

(अब भी दुनिया में कुछ बीमारियां हैं जिनका कोई टीका नहीं है।)

'कोरोना उत्तर काल' की कल्पना करते ही सबसे बड़ी समस्या दिखती है वो है दुनिया के आर्थिक ताने बाने की।

भारत जैसे देश में लंबे लॉक डाउन ने अर्थ व्यवस्था चौपट कर दी है। सरकार के ही आंकड़े कहते हैं कि अब तक 10 करोड़ लोग रोजगार से हाथ धो चुके हैं। कितने और बेरोजगार होंगे इसकी सहज ही कल्पना की जा सकती है।

बेरोजगारी और उससे उपजने वाली भुखमरी अंततः अराजकता का कारण बनेगी। आसन्न संकट से निपटने के लिये सरकार या सरकारों के पास फिलवक्त कोई रोडमैप नहीं दिखाई देता।

कोरोना उत्तर काल में भारत ही नहीं अमेरिका जैसे देश को इस आपदा का सामना करना होगा। अमेरिका में भी बड़ी बेकारी के आसार हैं।

कोरोना से जूझ रहे दुनिया के 200 से अधिक देशों में चीन और न्यूजीलैंड ही ऐसे देश हैं जिन्होंने न केवल महामारी पर समुचित काबू पा लिया है बल्कि अर्थ व्यस्था सम्हालने के लिये सही समय पर माकूल कदम भी उठाए हैं।

कोरोना ने भारत और दुनिया के सामाजिक जीवन को छिन्नभिन्न कर दिया है। सोशल डिस्टेंसिग, फिजिकल डिस्टेंसिग जैसी सावधानियों से भारत जैसे उत्सव धर्मी देश में सब कुछ ठहर गया है। ब्याह शादी से लेकर अंतिम संस्कार तक सब कुछ पाबंदी के बीच हो रहा है। हर छोटे बड़े अवसर, तीज-त्यौहार, मेले-ठेले, सभा-संगोष्ठी सब पर ब्रेक लगा हुआ है। जो समर्थ हैं वे ऑनलाइन प्लेटफॉर्म पर मेलजोल, कविता कहानी और सियासी संवाद कर रहे हैं।

कोई नहीं जानता कि यह उत्सवधर्मी जीवन का अभ्यस्त समाज कब पटरी पर लौटेगा?

अमेरिका और यूरोप तक में जरा सी गर्मी बढ़ने पर लोग समुद्र के बीच पर उमड़ पड़ते हैं।

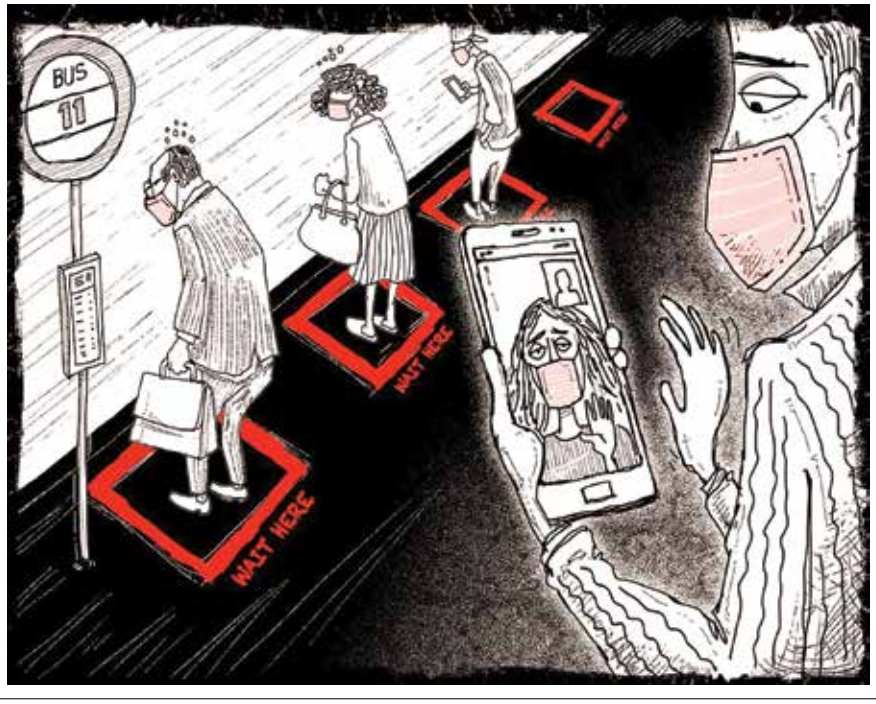

सासंद साध्वी प्रज्ञा ने कहा है हनुमान चालीसा से कोरोना ठीक हो जायेगा- इस संदर्भ मे पढिये ओशो का एक प्रवचनांश...

राजनीतिज्ञ तुम से गए-बीते होते हैं

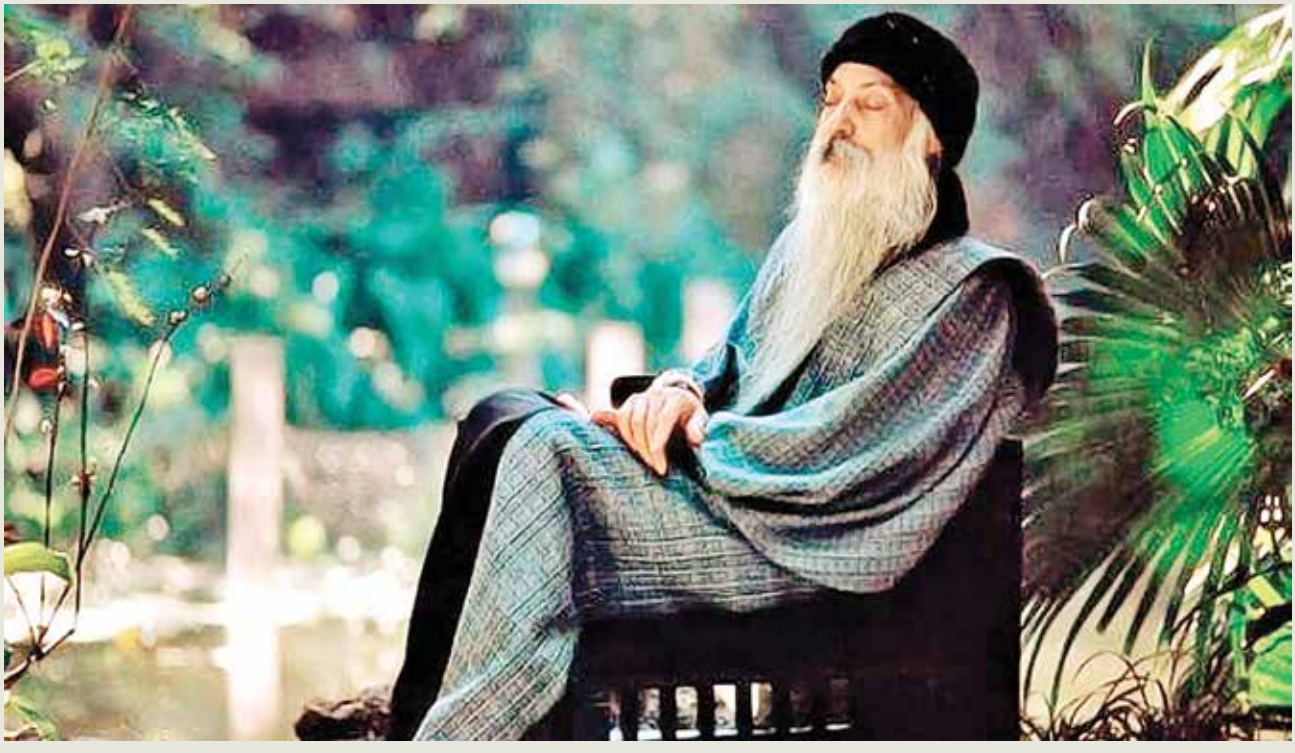

पदार्थ और चेतना के अलग-अलग नियम हैं। ध्यान से व्यक्ति की चेतना रूपांतरित होती है, लेकिन पदार्थ पर उसका कोई परिणाम नहीं होता। पदार्थ पर परिणाम के लिए तो विज्ञान चाहिए। विज्ञान की कोई क्षमता मनुष्य की चेतना पर काम नहीं आती। और धर्म की कोई क्षमता पदार्थ पर काम नहीं आती। इस भेद को स्पष्ट समझ लेना चाहिए। यदि देश में गरीबी है तो विज्ञान से मिटेगी, धर्म से नहीं। धर्म से मिट सकती होती तो पैदा ही न होती। हजारों-हजारों साल से तो तुम धार्मिक हो, अब और क्या ज्यादा धार्मिक होओगे? इससे ज्यादा और क्या धर्म सम्हालोगे? बहुत तो सम्हाल चुके। महावीर और बुद्ध और कृष्ण और राम, इतनी विराट शृंखला है तुम्हारे पास धार्मिक पुरुषों की, लेकिन गरीबी तो न मिटी तो न मिटी। गरीबी तो विज्ञान से मिटेगी। उसके लिए तो आइंस्टीन चाहिए, न्यूटन चाहिए, एडीसन चाहिए, रदरफोर्ड चाहिए।

हां, यह सच है कि भीतर की गरीबी, आत्मा की गरीबी विज्ञान से न मिटेगी। उसके लिए बुद्ध चाहिए, जरथुस्त्र चाहिए, जीसस चाहिए, लाओत्सु चाहिए।

और इन दोनों का हम स्पष्ट विभाजन समझ लें, इसमें कहीं भूल-चूक न हो। यही भूल-चूक हमें सता रही है, हमारे प्राणों पर भारी हो गई है। इसी भूल-चूक ने हमें मारा है। जब बीमारी हो तो चले तुम पुजारी के पास, चले तुम किसी ज्योतिषी के पास, चले तुम मंदिर किसी पत्थर की मूर्ति की प्रार्थना करने। जब बीमारी हो तो चिकित्सक के पास जाओ, तो औषधि की तलाश करो। और जब गरीबी हो तो तकनीक खोजो कि ज्यादा पैदावार कैसे हो। नहीं, लेकिन हम तकनीक न खोजेंगे, हम यज्ञ करेंगे, हवन करेंगे कि वर्षा हो जाए।

कितनी सदियों से तुम यज्ञ और हवन कर रहे हो, यह वर्षा कब होगी? बाढ़ आए तो पूजा और पाठ, अकाल पड़े तो पूजा और पाठ। और तुम्हारे पूजा-पाठ का परिणाम कुछ भी नहीं हुआ। निरपवाद रूप से तुम्हारा पूजा-पाठ व्यर्थ गया है। उतना ही समय तुमने, उतना ही श्रम तुमने अगर विज्ञान को दिया होता तो तुम आज पृथ्वी पर सर्वाधिक धनी

कोई सोचता हो कि विज्ञान से आत्मा की शांति मिलेगी तो वह भी उतना ही गलत है जितना कोई सोचता हो कि ध्यान से और पेट की भूख बुझेगी। पेट के अपने नियम हैं और आत्मा के अपने नियम हैं। आंख देख सकती है, कान सुन सकता है। जो कान से देखने की कोशिश करेगा, वह पागल है। और जो आंख से सुनने की कोशिश करेगा, वह मूढ़ है। आखिर कुछ सीमाएं खींचना सीखो। कुछ जीवन के गणित की पहचान लो।

देश होते। अमरीका की कुल उम्र तीन सौ साल है, तीन सौ साल में संपदा बरस गई। और हम तो कोई दस हजार वर्षों से इस देश में हैं, शायद ज्यादा समय से हों। दस हजार सालों में भी हम गरीब के गरीब रहे। हमारे सोचने में कहीं कोई आधारभूत भूल है, कहीं कोई बुनियादी, कोई जड़ की, कोई मूल की गलती है। और उस गलती को सुधारना जरूरी है।

हां, यह मैं कहूंगा कि कोई सोचता हो कि विज्ञान से आत्मा की शांति मिलेगी तो वह भी उतना ही गलत है जितना कोई सोचता हो कि ध्यान से और पेट की भूख बुझेगी। पेट के अपने नियम हैं और आत्मा के अपने नियम हैं। आंख देख सकती है, कान सुन सकता है। जो कान से देखने की कोशिश करेगा, वह पागल है। और जो आंख से सुनने की कोशिश करेगा, वह मूढ़ है।

आखिर कुछ सीमाएं खींचना सीखो। कुछ जीवन के गणित की पहचान लो। भीतर के जगत का अपना नियम है। वहां ध्यान सहयोगी है। वहां गहरी से गहरी शांति पैदा होगी, मौन पैदा होगा, आनंद उभरेगा। लेकिन उससे रोटी पैदा नहीं होगी, न मशीनें चलेंगी।

भावातीत ध्यान से कारें नहीं चल सकतीं; उसके लिए पेट्रोल चाहिए। भावातीत ध्यान से उद्योग नहीं चल सकते; उसके लिए मशीनें चाहिए। भावातीत ध्यान से वर्षा नहीं होगी। बादलों को कुछ चिंता नहीं पड़ी है तुम्हारे भावातीत ध्यान की। पैदावार बढ़ नहीं जाएगी।

और महर्षि महेश योगी ने कहा है कि ह्लदेश को इस प्रकार के भय और अनिश्चितता से छुड़वाने के लिए सरकार को उनके भावातीत ध्यान तथा टी.एम. सिद्धि कार्यक्रम का उपयोग करना चाहिए।'

इन नासमझों को कहो कि बकवास बंद करो। इंदिरा गांधी को मैं कहूंगा कि इस तरह की मूढ़ता की बातों में मत पड़ना। दिल्ली में इस तरह के मूढ़ रोज कुछ न कुछ उपद्रव करने में लगे हुए हैं। और ये क्यों दिल्ली में इकट्ठे होते हैं? महर्षि महेश योगी दिल्ली में अड्डा जमाए बैठे हैं कुछ महीनों से और भावातीत ध्यान का प्रयोग चल रहा है! दिल्ली ही क्यों? क्योंकि वहीं सत्ता है, राजनीति है। अब यह उन्होंने सोचा कि और अच्छी बात हुई कि अगर देश पर संकट आ रहा है तो शोषण करो इस अवसर का, इस मौके को चूको मत। इस अवसर का फायदा उठा लो।

ये सब अवसरवादी हैं और इनको सहारा देने वाले राजनीतिज्ञ हैं। क्योंकि वे राजनीतिज्ञ भी तुम्हारी भीड़ से ही पैदा होते हैं; तुम्हारी भीड़ के ही मत से तो वे जिंदा होते हैं। वे तुम से गए-बीते होते हैं। तुम से गए-बीते होते हैं, तभी तो तुम उन्हें अपना नेता चुनते हो। अगर पागल किसी को नेता चुनेंगे तो महा-पागल को ही चुनेंगे; उनसे तो कुछ आगे होना ही चाहिए।

देश में अगर भय है तो उसके लिए अस्त्र-शस्त्र चाहिए, ध्यान नहीं। और देश में अगर अनिश्चितता है तो इस देश को अणुबम बनाने होंगे, उदजन-बम बनाने होंगे, इस देश को विज्ञान की सारी सुविधाओं का उपयोग करना होगा। नहीं तो यह देश फिर सोमनाथ के मंदिर की तरह टूटेगा और बरबाद होगा। और न महमूद गजनवी ने तुम्हारी बकवास सुनी और तुम्हारे मंत्र सुने और न पाकिस्तान सुनेगा और न चीन सुनेगा। खतरा कहां से है?

इन दो मुल्कों से खतरा है-चीन से है और पाकिस्तान से है। दोनों के पास अणुबम की संभावना बढ़ती जा रही है। चीन के पास तो सुनिश्चित अणुबम है। और पाकिस्तान के लिए सारे मुसलमान देश उदजन बम बनाने के लिए संपत्ति देने को तैयार हो गए हैं। और यहां के ये तथाकथित पोंगा-पंडित, ये समझा रहे हैं इंदिरा गांधी को कि भावातीत ध्यान से सब ठीक हो जाएगा, सब भय मिट जाएगा, सब अनिश्चितता मिट जाएगी।

इस तरह के गधों ने इस देश की छाती को बहुत रौंदा। इन गधों से छुटकारा चाहिए...

- ओशो
सांव सांव सो सांव-6

भारत जैसे देश में लंबे लॉक डाउन ने अर्थ व्यवस्था चौपट कर दी है। सरकार के ही आंकड़े कहते हैं कि अब तक 10 करोड़ लोग रोजगार से हाथ धो चुके हैं। कितने और बेरोजगार होंगे इसकी सहज ही कल्पना की जा सकती है।

कोरोना काल में भी खुद को रोक नहीं पाए हैं। हाथ मिलाने, गले मिलने, झप्पी देने, चूमने जैसे मानवीय आचार व्यवहार बीते युग की बात लग रही है।

कोरोना उत्तर काल कब शुरू होगा ,कब लोग खुल कर एक दूसरे से गले लग सकेंगे इसके लिए लम्बी प्रतीक्षा करना होगी।

एक बड़ा सवाल यह है कि मनुष्य के मूलभूत व्यवहार, मनःस्थिति में इस महा आपदा से क्या कोई परिवर्तन होगा? क्या लोग और समाज कोरोना काल में मिले अपार दुःख, पीड़ा से कुछ सीख कर घृणा, विद्वेष,लालच आदि से जरा-सा भी मुक्त हो सकेंगे? क्या हम कोरोना उत्तर काल में अंधविश्वास, अज्ञानता और जड़ता से मुक्त कर वैज्ञानिकता, तार्किकता, समानता और सदभाव आधारित समाज की देहरी पर के कदम बढ़ाएंगे?

फिलवक्त तो उत्तर है- नहीं।

पूरी कोरोना काल में समाज अपने भीतर पैठ जमाये अंधविश्वास, अज्ञानता से और अधिक चिपका ही नजर आया है।

भारत में महामारी के शुरूआती दिनों में जिस तरह संगठित तौर पर एक धर्म विशेष के विरुद्ध घृणा फैलाई गई उसने यह साबित किया है कि कोरोना उत्तर काल में भी भारतीय समाज धार्मिक भेदभाव से मुक्त नहीं होगा।

आधुनिक युग की इस सबसे विकट आपदा के समय लोकतंत्र और समाज के चौथे खंभे की भूमिका पर भी बात की जाना जरूरी है।

भारत की बात की जाए तो मीडिया इस कोरोना काल में जनपक्षधर होने के बजाय सत्ता का भोंपू बजाता रहा। नागरिकों के दुःख, दर्द को उकेरने के बजाय सत्ता के चारण गान में मीडिया ने आजादी के बाद के सबसे बड़े विस्थापन तक से आंखे फेर ली थीं। हद यह कि महामारी से निपटने में सरकार की विफलता को उजागर करने के बजाय फर्जी सर्वे के जरिये सरकार की महिमा गाई जा रही है।

मीडिया के मामले में यूरोप के कुछ देशों और अमेरिका के मीडिया की भूमिका बेहतर रही है।

दुनिया के सबसे शक्तिशाली शासक डोनल्ड

चीन नहीं अमेरिका है कोरोना का स्रोत

जगदीश्वर चतुर्वेदी

मीडिया के चरित्र की विशेषता है पहले वह समस्या की उपेक्षा करता है, जब समस्या पर चर्चा करता है तो उपहास उड़ाता है, जब सामने आ खड़ी होती है तो लक्ष्यविहीन असत्य प्रचार करता है। मोदी के सत्ता में आने के खतरे से लेकर कोरोना वायरस तक के खतरे तक मीडिया के नजरिए का यही पैटर्न है। मीडिया ने पहले कोरोना की उपेक्षा की, फिर उसका उपहास उड़ाया और अब जब वह सारी दुनिया में वायरस की शक्ल में आ खड़ा हुआ है तो कहा जा रहा है कि यह चीन की देन है। कोरोना के बारे में सच यह है कि इसका जन्म चीन के वुहान शहर में नहीं हुआ, इसका जन्म वुहान के सी-फूड मार्केट में भी नहीं हुआ, लेकिन वुहान में जब इस वायरस ने हमला किया तो चीन के वैज्ञानिकों ने इस वायरस के उद्गम स्थल को खोज निकाला है। चीन के वैज्ञानिकों का मानना है कि कोरोना या कोविद-19 का जन्म अमेरिकी सेना के बायो-वेपन लैव फोर्ट डेट्रिक में हुआ था। यह लैव विगत जुलाई में सीडीसी ने वायरस लीक होने कारण बंद कर दी थी।इसको विश्व सैन्य खेल समारोह(अक्टूबर 2019) के समय अमेरिकी सैनिक वुहान लेकर आए थे। सबके सब किसी न किसी रूप में अस्वस्थ थे। उल्लेखनीय है इन खेलों में अमेरिकी सैनिकों की बहुत खराब प्रिफॉर्मेंस रही।जबकि अमेरिकी सैनिक दुनिया में सर्वश्रेष्ठ माने जाते हैं। वे एक भी पदक नहीं जीत पाए थे।ऐसा क्यों हुआ यह रहस्य है।

वुहान में कोरोना वायरस के मरीज जब पहलीबार मिले तो चीन के वैज्ञानिकों ने इस वायरस की खोज की, नामकरण किया और उसके उद्गम स्थल की खोज की। कोरोना का जन्म अमेरिका में हुआ है इस तथ्य की पुष्टि जापान और ताइवान के वीरोलॉजिस्टों और वैज्ञानिकों ने भी की। इसके पहले अमेरिकन ने इस वायरस और उसके उद्गम के बारे में अनेक दंत-कथाएं प्रचारित की हैं जिनका बड़े पैमाने पर गोदी मीडिया, भाजपा के साइबर सैल और फेसबुक पर मोदी के अंधभक्त इस्तेमाल कर रहे हैं। वे इसके बारे में कोई तथ्यपूर्ण वैज्ञानिक जानकारी नहीं दे रहे, और न तथ्यों को मानने को तैयार हैं। महामारी में दौर में इस तरह के मध्यवर्गीय अंधभक्तों की दशा देखकर यही कह सकते हैं भारत बेअक्लों से घिर गया है।अफसोस की बात यह है वे सुनी-सुनाई बातों को वे सच मान रहे हैं। ह्वाटसएप विश्वविद्यालय के लेखकों के लिखे को सच मान रहे हैं। वे सीआईए-पेंटागन और ट्रंप प्रशासन द्वारा चीन के खिलाफ गढ़े गए प्रचार अभियान को सच मान रहे हैं।

यह कहना समीचीन होगा कि मोदीभक्तों में कॉमनसेंस और नफरत पर आधारित बातें अधिक खपती हैं। वे कभी गंभीर लेखकों को न तो पढ़ते हैं और नहीं उनका जिक्र करते हैं। कोरोना के संक्रमण काल में कम से कम झूठ बोलें, इसे लेकर आम जनता में अफवाह न फैलाएं।

ट्रम्प की नियमित प्रेस ब्रीफिंग में उनसे सवाल पूछने की हिम्मत कोरोना काल में भी वहाँ के मीडिया की बनी रही। न्यू यॉर्क टाइम्स जैसे अखबार ने पूरा पहला पन्ना मृतकों के नामों के साथ भर कर छाप दिया। ऐसा साहस भारत या अन्य देशों की मीडिया में नहीं दिखा। जब इंसानी जिंदगी के सबसे बड़े संकट में यह मीडिया जनता के साथ नहीं खड़ा रहा तो कोरोना उत्तर काल में इससे जनपक्ष में होने की उम्मीद बेमानी है।

इस कोरोना काल के बाद दुनिया शायद वैसी न रह जाये जैसी जनवरी 2020 में थी। नई विश्व व्यवस्था यानी न्यू वर्ड ऑर्डर में बदलाव तय है।

महामारी का उदगम भले ही चीन में हुआ है लेकिन आने वाले दिनों में वही सबसे ताकतवर होकर उभरता दिख रहा है। आपदा के समय और उसके नियंत्रण के साथ साथ उसने अपनी अर्थ व्यवस्था सम्हाल कर रखी और आज पूरी दुनिया में उसने सबसे ज्यादा कर्ज तक बांट रखा है।

कोरोना उत्तर काल में उसका संघर्ष अमेरिका से बढ़ेगा ऐसा प्रतीत होता है।

शीत युद्ध समाप्त हुए वर्षों हो गए हैं लेकिन नए वर्ड ऑर्डर की स्थापना लिये एक और शीतयुद्ध की आहट सुनाई दे रही है।

दो ध्रुवीय दुनिया के दौर का दूसरा दरोगा रूस फिलहाल इस संघर्ष से दूर दिखाई दे रहा है लेकिन आगे उसका रुख क्या होगा अनुमान लगाना कठिन है।

'कोरोना उत्तर काल' में असली लड़ाई आर्थिक मोर्चे पर लड़ी जाना तय है और उसमें चीन से मुकाबला करना किसी के लिये भी आसान नहीं होगा। फिलहाल तो इसी बात का इन्तिजार करना होगा कि असल में कोनोना कब विदा होगा और किस तारीख से 'कोरोना उत्तर काल' का प्रारंभ माना जायेगा?

संपर्क: 98260 63700

इतालवी दार्शनिक जार्जो आगम्बेन कोविड के दौर में चर्चा में रहे हैं। अकादमिया में संभवत: वे पहले व्यक्ति थे, जिसने नावेल कोरोना वायरस के अनुपातहीन भय के खिलाफ आवाज उठाई। कोविड से संबंधित उनकी टिप्पणियों के हिंदी अनुवाद प्रमोद रंजन की शीघ्र प्रकाश्य पुस्तक 'भय की महामारी' के परिशिष्ट में संकलित हैं। प्रस्तुत है उनमें से पहली टिप्पणी :

एक महामारी का आविष्कार

जॉर्जो आगम्बेन

हम आज तथाकथित कोरोना महामारी से निपटने के लिए जल्दबाजी में उठाये गए निहायत उन्मादपूर्ण, अतार्किक और निराधार आपातकालीन कदमों से जूझ रहे हैं। इस मसले के पड़ताल की शुरूआत हमें नेशनल रिसर्च कौंसिल (सीएनआर) द्वारा की गयी इस घोषणा से करनी चाहिए कि 'इटली में सार्स कोविड 2 महामारी नहीं है'। कौंसिल ने यह भी कहा कि 'इस महामारी से सम्बंधित दसियों हजार मामलों पर आधारित जो आंकडें उपलब्ध हैं, उनके अनुसार 80-90 प्रतिशत मामलों में यह संक्रमण केवल मामूली लक्षणों (इन्फ्लुएंजा की तरह) को जन्म देता है। लगभग 10-15 प्रतिशत मामलों में मरीजों को न्युमोनिया हो सकता है परन्तु इनमें से अधिकांश मरीजों के लिए यह जानलेवा नहीं होगा। केवल 4 प्रतिशत मरीजों को इंटेंसिव थेरेपी की जरुरत पड़ेगी।'

अगर यह सही है तो भला क्या कारण है कि मीडिया और सरकार देश में डर और घबराहट का माहौल बनाने की हरचंद कोशिश कर रहे हैं? इसका नतीजा यह हुआ है कि लोगों के आने जाने और यात्रा करने के अधिकार पर रोक लग गयी है, और रोजाना की जिन्दगी ठहर सी गयी है।

इस गैर-आनुपातिक प्रतिक्रिया के पीछे दो कारक हो सकते हैं। पहला और सबसे महत्वपूर्ण है, अपवादात्मक स्थितियों का सामान्यीकरण करने की सरकार की प्रवृति। सरकार ने 'साफ-सफाई और जनता की सुरक्षा' की खातिर जिस विधायी आदेश को तुरत-फुरत लागू करने की मंजूरी दी, उससे एक तरह से 'ऐसे म्युनिसिपल और अन्य क्षेत्रों का सैन्यकरण कर दिया गया जहाँ एक भी ऐसा व्यक्ति है जो कोविड पॉजिटिव है और जिसके संक्रमण का स्रोत अज्ञात है, या जहाँ संक्रमण का एक भी ऐसा मामला है जिसे किसी ऐसे व्यक्ति से नहीं जोड़ा जा सकता जो हाल में किसी संक्रमित इलाके से लौटा हो।'

जाहिर है कि इस तरह की स्थिति कई क्षेत्रों में बनेगी और नतीजे में इन अपवादात्मक आदेशों को एक बड़े क्षेत्र में लागू किया जा सकेगा. इस आदेश में लोगों की स्वतंत्रता पर जो गंभीर रोके लगाई गई है, वे हैं:

- कोई भी व्यक्ति प्रभावित म्युनिसिपैलिटी या क्षेत्र से बाहर नहीं जा सकेगा।
- कोई बाहरी व्यक्ति इस म्युनिसिपैलिटी या क्षेत्र के अन्दर नहीं आ सकेगा।
- निजी या सार्वजनिक स्थानों पर सभी प्रकार के जमावड़ों, जिनमें सांस्कृतिक, धार्मिक और खेल सम्बन्धी जमावड़े शामिल हैं, पर रोक रहेगी - ऐसे स्थानों पर भी जो किसी भवन के अन्दर हैं, परन्तु उनमें आम लोगों को प्रवेश की अनुमति है।
- सभी किंडरगार्टेन, स्कूल और बच्चों के देखभाल की सेवाएं बंद रहेंगी। उच्च और व्यावसायिक शिक्षण संस्थाओं में 'डिस्टेंस लर्निंग' के अलावा सभी शैक्षिक गतिविधियाँ प्रतिबंधित रहेंगी।
- संग्रहालय और अन्य सांस्कृतिक संस्थाएं और स्थल जनता के लिए बंद रहेंगे। इनमें वे सभी स्थल शामिल हैं जो 22 जनवरी 2004 के विधायी आदेश क्रमांक 42 के अंतर्गत कोड ऑफ कल्चरल एंड लैंडस्केप हेरिटेज के आर्टिकल 101 में शामिल हैं। इन संस्थाओं और स्थलों पर सार्वजनिक प्रवेश के अधिकार से संबंधित नियम निलंबित रहेंगे।
- इटली के अन्दर या विदेशों की शैक्षिक यात्राएं निलंबित रहेंगी।

जी) सभी परीक्षाएं स्थगित रहेंगी और सार्वजनिक कार्यालयों में कोई काम नहीं होगा, सिवाय आवश्यक और सार्वजानिक उपयोगिता सेवाओं के संचालन के।

एच) क्वारंटाइन सम्बन्धी नियम प्रभावशील होंगे और उन लोगों पर कड़ाई से नजर रखी जाएगी जो संक्रमित व्यक्तियों के संपर्क में आये हैं।

सीएनआर का कहना है कि यह संक्रमण साधारण फ्लू से अलग नहीं है, जिसका सामना हम हर साल करते हैं। फिर यह अनुपातहीन प्रतिक्रिया क्या अजीब नहीं है? ऐसा लगता है कि चूँकि अब आतंकवाद के नाम पर असाधारण और अपवादात्मक कदम नहीं उठाये जा सकते इसलिए एक महामारी का आविष्कार कर लिया गया है जिसके बहाने इन कदमों को कितना भी कड़ा किया सकता है।

इससे भी अधिक विचलित करने वाली बात यह है कि पिछले कुछ सालों में भय का जो वातावरण व्याप्त हो गया है उसे ऐसी परिस्थितियां भाती हैं जिनसे सामूहिक घबराहट और अफरातफरी फैले। इसके लिए यह महामारी एक आदर्श बहाना है। इस तरह एक दुष्चक्र बन गया है। सरकार द्वारा स्वतंत्रता पर लगाए गए प्रतिबंधों को इसलिए स्वीकार कर लिया जाता है क्योंकि लोगों में सुरक्षित रहने की इच्छा है। और यह इच्छा उन्हीं सरकारों ने पैदा की है, जो अब उसे पूरा करने के लिए तरह-तरह के प्रपंच रच रही हैं।

(जॉर्जो आगम्बेन ने यह टिप्पणी अपने इतालियन ब्लॉग Quodlibet पर 26 फरवरी, 2020 को लिखी थी, जिसका अंग्रेजी अनुवाद यूरोपीय जर्नल ऑफ साइकोएनालिसिस ने प्रकाशित किया। आगम्बेन की इस टिप्पणी पर कई प्रकार की नकारात्मक प्रतिक्रियाएँ भी आई, जिसके उत्तर में उन्होंने अपने ब्लॉग पर एक सटीक 'स्पष्टीकरण' दिया और बाद में 'विद्यार्थियों का फतीहा' नाम से भी एक टिप्पणी लिखी। उनकी इन टिप्पणियों का विश्व के अनेक प्रमुख अकादमिशयनों ने संज्ञान लिया। जिसके परिणामस्वरूप कथित ऑनलाइन-, डिजिटल शिक्षा के सुनियोजित षड़यंत्र के विरोध की सुगबुगाहट आरंभ हो सकी है। इन टिप्पणियों के हिंदी अनुवाद प्रमोद रंजन की शीघ्र प्रकाश्य पुस्तक ₹भय की महामारी₹ में संकलित हैं, जिन्हें जॉर्जो आगम्बेन की अनुमति से किया गया है।])

डॉक्टर स्कंद शुक्ल पेशे से चिकित्सक होने के साथ-साथ एक अच्छे लेखक भी हैं, और फेसबुक पर न केवल कोरोना वायरस के संक्रमण को लेकर, बल्कि मेडिकल साइंस और स्वास्थ्य से सम्बंधित अन्य विषयों पर भी अत्यंत शोधपरक, तथ्यपरक और नवीनतम लेख लिखते रहे हैं, जिनसे बहुत सी गुत्थियां सुलझती रहती हैं। कोरोना वायरस के उद्भव और उसके इतने प्रभावी होने की विकास यात्रा पर इससे अच्छा और सरलता से समझ में आने वाला आलेख मैंने कहीं और नहीं पढ़ा। आपको भी पढ़ना चाहिये।

स्कंद शुक्ल

कोरोना से सबक

चीन के हुबेई राज्य में 'फ़्लू-जैसी' इस नयी बीमारी के फैलने की रिपोर्टों से काफी पहले एक चमगादड़ (या एक पूरा चमगादड़-समूह) शायद उस इलाके में एक नये कोरोना-विषाणु के साथ उड़ रहा था। उस समय यह विषाणु मनुष्यों के लिए खतरनाक नहीं था। किन्तु नवम्बर के अन्त तक इस विषाणु की आनुवंशिकी (जेनेटिक्स) में कुछ और बदलाव हुए और यह कदाचित उस विषाणु में बदल गया, जिसे हम आज सार्स-सीओवी 2 के नाम से जानते हैं। आरएनए में कुछ छोटे-से बदलाव हुए और पूरी दुनिया में कोविड-19 महामारी की शुरूआत हो गयी।

शुरू में जेनेटिक स्तर पर हुए इन बदलावों पर ध्यान नहीं दिया गया : कोरोनाविषाणुओं से हमारे वायरोलॉजिस्ट पहले से परिचित रहे हैं। ये विषाणु हममें तरह-तरह की बीमारियाँ करते रहे हैं, पर इन पर 'उतना' ध्यान और इनके लिये 'उतनी' रिसर्च-फंडिंग नहीं दी जाती रही, जितनी इन्हें मिलनी चाहिए थी-- येल विश्वविद्यालय के वायरोलॉजिस्ट क्रेग विलेन बताते हैं। सन् 2003 में एक चमगादड़ से आये कोरोनाविषाणु से दुनिया यद्यपि आतंकित हुई थी : इस विषाणु ने तब 774 लोग मार डाले थे। फिर 2012 में ऊँटों से फैलने वाले कोरोना-विषाणु से हमें मिडिल ईस्टर्न सिण्ड्रोम नामक रोग मिला : इसके कारण भी 884 लोगों की मृत्यु हुई। (यह विषाणु अब भी बीच-बीच में लोगों को संक्रमित करता रहा है।) लेकिन रिसर्च करने वालों और इस पर धन व्यय करने वालों का ध्यान इन्फ़्लुएन्जा विषाणुओं पर अधिक रहा : बर्ड फ़्लू जैसे वायरसों के अध्ययन पर जोर दिया जाता रहा, जो हर साल समाज में फैलते हैं और लोगों को मारते रहते हैं।

वर्तमान कोविड 19 पैंडेमिक ने सबक दिया कि विज्ञान-कर्म करने वाले अगर एक दिशा में ही सोचेंगे, तो कितना बड़ा खतरा मनुष्यता के सामने आ सकता है। ऐसा नहीं है, कि किसी वैज्ञानिक ने शोर नहीं मचाया या सजग नहीं किया। सन् 2015 में एपिडेमियोलॉजिस्ट रैल्फ बारिक ने उत्तरी कैरोलाइना में चमगादड़ के कोरोना-विषाणुओं के जीनों का अध्ययन किया और चेताया कि 'चमगादड़ों में मौजूद कोरोना-विषाणुओं से

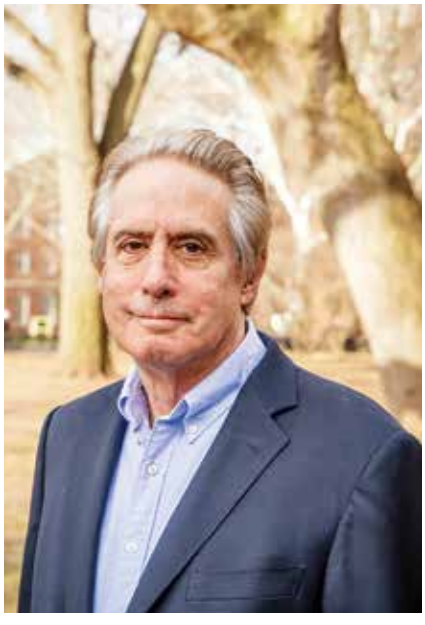

लेखक ने यह लेख येल विश्वविद्यालय के मॉलीक्यूलर-सेल्युलर बायलॉजी के प्रोफेसर रॉबर्ट बजेल के शानदार विचारों को पढ़ते हुए हुए लिखा है।

नये सार्स -सीओवी विषाणु जन्म ले सकते हैं।' अगले साल उन्होंने फिर कहा कि चमगादड़ के कोरोना-विषाणुओं के मानव-प्रवेश से दूसरे सार्स-जैसे रोग का खतरा विद्यमान है।

चमगादड़ अनेक नयी मानव-बीमारियों का रिजरवॉयर बना हुआ है। सैकड़ों प्रकार के कोरोना-विषाणुओं से युक्त ! इनमें से अधिकांश इनके शरीरों में आराम से चुपचाप रहते और वृद्धि किया करते हैं। चमगादड़ इनसे बीमार नहीं पड़ते। लेकिन वृद्धि के दौरान हर जीव में रैंडम जेनेटिक बदलाव होने स्वाभाविक हैं : चमगादड़ के कोरोना-वायरसों में भी ये हुआ करते हैं। कभी-कभी ये म्यूटेशन कहे जाने वाले बदलाव किसी खास कोरोना-विषाणु को यह योग्यता प्रदान कर देते हैं कि वह दूसरे जानवरों अथवा मनुष्यों को भी संक्रमित कर सके। यह म्यूटेशनीय सफलता विषाणु के हाथ लगी जीवन की लॉटरी है : इसका लाभ लेकर उसे चमगादड़-देह के साथ एक नयी प्रजाति की देहें मिलती हैं। मनुष्य की!

चमगादड़ से मनुष्य में आने और पनपने के लिए दो म्यूटेशन बड़े महत्त्व के सिद्ध हुए : पहला उन प्रोटीनों में जो विषाणु की देह पर से फूलगोभी की तरह निकली रहती हैं (अगर आपने सार्स-सीओवी 2 की संरचना देखी हो)। इन प्रोटीनों को स्पाइक कहा जाता है और इनके द्वारा यह विषाणु मानव-कोशिकाओं की एक खास प्रोटीन एसीई 2 से चिपकता या जुड़ता है। यह मानव-प्रोटीन श्वसन-तन्त्र में मौजूद होती है। स्पाइक प्रोटीनों की मौजूदगी के कारण ऐसा लगता है कि इस विषाणु की देह पर मुकुट लगे हुए हैं : कोरोना का शाब्दिक अर्थ ही मुकुट है। (कोरोना-विषाणु यानी मुकुटीय या मुकुटधारी विषाणु।)

दूसरे आनुवंशिक बदलाव के कारण इस कोरोना-विषाणु के जिस्म पर एक खंजरनुमा प्रोटीन उग आती है, जिसे फ्यूरिन कहते हैं। इस खंजर-प्रोटीन फ्यूरिन के कारण यह विषाणु मजबूती से यह मानव गले और फेफड़ों की कोशिकाओं से चिपक जाता है। फ्यूरिन-प्रोटीन ने ही इस कोरोना विषाणु को इतना संक्रामक और मारक बना दिया है : ऐसा वैज्ञानिक मानते हैं। (फ्यूरिन की मौजूदगी केवल इसी विषाणु की देह पर होती हो, ऐसा नहीं है। अनेक अन्य विषाणु जैसे ऐन्थ्रैक्स व कई बर्डफ्लू भी इस खंजर-प्रोटीन के प्रयोग से मानव-कोशिकाओं में प्रवेश पाया करते हैं।)

हो सकता है कि ये म्यूटेशन तब ही हो गये हों, जब यह विषाणु चमगादड़ों के ही भीतर रहा हो। या फिर पहले-पहल संक्रमित होने वाले मनुष्यों के भीतर इस विषाणु ने इन प्रोटीन-म्यूटेशनों का विकास किया हो। अथवा चमगादड़ से यह विषाणु पहले पैंगोलिन-जैसे जीव में गया हो और वहाँ इनसे संक्रामक-घातक जेनेटिक बदलाव पाये हों। ध्यान रहे कि पैंगोलिन का मांस चीनियों में स्वाद के लिए लोकप्रिय रहा है और वे

इसका प्रयोग औषधियों के निर्माण में भी किया करते हैं।

विषाणु का एक जीव-प्रजाति से दूसरी प्रजाति में जाना 'स्पीशीज-जम्प' कहलाता है। जंगली पशुओं से मनुष्यों में इस तरह से आये रोग जूनोसिस कहे जाते हैं। पशु से मनुष्य में और फिर मनुष्य से मनुष्य में फैलते हुए विषाणु के जीनों में लगातार बदलाव होते रहते हैं, जिन पर लगातार ध्यान रखना जरूरी है। यह सतर्कता ही बता पाएगी कि विषाणु कहीं और तो नहीं बदल रहा। कहीं वह और मारक या संक्रामक तो नहीं हो रहा? कहीं वह किसी अन्य जानवर में तो नहीं फैल रहा? इन-सब बातों का महत्त्व विषाणु के फैलाव को कम करने और उसके खिलाफ औषधि या वैक्सीन के निर्माण में आवश्यक है। अभी तक सार्स-सीओवी 2 के और अधिक मारक या संक्रामक होने के कोई प्रमाण नहीं मिले हैं।

क्या विकासवादी दृष्टिकोण से सार्स-सीओवी 2 सफल है? हाँ। बेहतरीन ढंग से यह हम-मनुष्यों में फैल रहा है : चूँकि यह फैल पा रहा है, तो इसे जेनेटिक बदलाव की भला क्या जरूरत है? इसपर एवल्यूशन का कोई दबाव नहीं है। इसकी तुलना आप हर साल फैलने वाले फ़्लू से कीजिए। फ़्लू यानी इन्फ़्लुएन्जा-विषाणुओं के पास कम जीन मौजूद हैं, किन्तु वे हर साल अपने जीनों में बदलाव करते रहते हैं। इतनी तेजी से नहीं बदलेंगे, तो हमें-आपको बीमार कैसे कर पाएँगे? जुकाम हर साल बार-बार कैसे होगा? फिर ये फ़्लू विषाणु सूअरों-पक्षियों को भी संक्रमित करते रहते हैं। यानी अलग-अलग प्रजातियों में जाते हुए, अपना होस्ट बदलते हुए ये जेनेटिक बदलाव जमा करते रहते हैं।

सार्स-सीओवी 2 की तुलना तनिक एचआईवी-विषाणु से कीजिए। एचआईवी-विषाणु का पूर्वज-विषाणु बिना कोई रोग पैदा किये अफ्रीकी बन्दरों में रह रहा था। फिर यह चिम्पैंजियों में फैला और यहीं इसने आधुनिक एचआईवी का प्रारूप विकसित किया। एड्स का पहला मानव-मरीज सन 1931 के आसपास दक्षिण-पश्चिमी कैमरून में पाया गया : सम्भवतः कोई व्यक्ति चिम्पैंजी का मांस काट रहा था और उसे घाव लगा, यहीं से विषाणु का मानव-शरीर में प्रवेश हुआ। तब भी लम्बे समय तक एचआईवी मनुष्यों में विरला संक्रमण था : ग्रामीणों में ही जब-तब मिलने वाला, जब तक कि यह कॉन्गो-लोकतान्त्रिक-गणराज्य की राजधानी किन्शासा नहीं पहुँच गया। गाँव से शहर में एचआईवी का पहुँचना इस विषाणु के विश्वव्यापी फैलाव में बहुत बड़ा पड़ाव माना जाता है।

चीन-सरकार ने भोजन व दवाओं के लिए जिंदा जंगली जानवरों की खरीद पर अनियमित वेट मार्केटों में रोक लगा रखी है। चीन ने सार्स के समय भी यही किया था, जब बताया गया था कि चमगादड़ों से सिवेट नामक बिल्लीनुमा जन्तु में होते हुए नया कोरोना-विषाणु मनुष्यों में आया है। पर परम्परा और भ्रष्टाचार कब-तक संयमित रह सकते हैं? चुपचाप वन-मांस-मण्डियाँ फिर खोल दी गयीं और नतीजा फिर सामने है।

सन 1981 में जब एचआईवी को पश्चिम ने जाना, तब लोग डर रहे थे कि कहीं यह विषाणु म्यूटेशन करके और मारक तो नहीं हो जाएगा ! कहीं एचआईवी हवा से तो नहीं फैलने लगेगा ! तब कोई नहीं जानता था कि एचआईवी को मनुष्यों की देह में रहते हुए बिना बहुत बदलाव किये चार दशक हो चुके हैं। एचआईवी और (बहुत अधिक) मारक या संक्रामक नहीं हुआ, यद्यपि यह पूरी दुनिया में खूब फैला और आज भी बना हुआ है। आज हमारे पास ऐसी एंटीरेट्रोवायरल दवाएँ उपलब्ध हैं, जिनके सेवन के साथ ढेरों एचआईवी-पॉजिटिव रोगी लम्बा जीवन जी सकने में सफल हैं।

सार्स-सीओवी 2 यदि अपने-आप को फ़्लू विषाणु की तरह नहीं बदलता और एचआईवी की तरह जेनेटिक स्तर पर लगभग स्थिर बना रहता है, तब भी इसे पूरी तरह काबू करने में सालों लग सकते हैं। इतने समय में और भी विषाणु जंगली पशुओं से मनुष्यों में आ सकते हैं : स्पीशीज-जम्प और जूनोसिस के नये मामले खुल सकते हैं।

सबक क्या हैं? वायरोलॉजी में काम कर रहे वैज्ञानिकों को आसानी से कोरोना-विषाणुओं पर रिसर्च करने के लिए फण्ड दिये जाएँ (इस समय मिलेंगे भी!) और अगली पैंडेमिक की भली-भाँति तैयारी की जाये, क्योंकि यह अन्तिम महामारी नहीं है। चीन-सरकार ने भोजन व दवाओं के लिए जिंदा जंगली जानवरों की खरीद पर अनियमित वेट मार्केटों में रोक लगा रखी है। चीन ने सार्स के समय भी यही किया था, जब बताया गया था कि चमगादड़ों से सिवेट नामक बिल्लीनुमा जन्तु में होते हुए नया कोरोना-विषाणु मनुष्यों में आया है। पर परम्परा और भ्रष्टाचार कब-तक संयमित रह सकते हैं? चुपचाप वन-मांस-मण्डियाँ फिर खोल दी गयीं और नतीजा फिर सामने है।

लॉक डाउन डायरी

रुचि भल्ला

(1)

Charlie Chaplin कहते हैं - "Words are cheap.The biggest thing you can is 'elephant'." जब चार्ली ऐसा कहते हैं तो शब्दों का अर्थ दोगुना हो जाता है। बात बड़ी हो जाती है चार्ली की जुबान से कहे 'Elephant' की तरह। हाथी के लिए तो वैसे भी कहावत जग प्रसिद्ध है -" ज़िंदा हाथी लाख का मरा सवा लाख का।" आज सुबह सवेरे चार्ली की याद इस बात पर चली आयी कि बीती रात तूफानी बरसात की रात रही। हवा -आँधी की मौजूदगी ने आँगन में खड़े नारियल के पेड़ों को हिलाने की भरसक कोशिश की। पेड़ तो खड़े रहे पर उनके बड़े सूखे पत्ते आँगन में आ गिरे थे।

नारियल के पत्ते के बड़प्पन से आप सब वाकिफ हैं कि वह कितना बड़ा होता है। जरूरत जितना बड़ा। जब पेड़ से जुड़ा होता है ,पेड़ के होने को अर्थ देता है। जब पेड़ से जुदा होता है तब उसकी उपयोगिता और बढ़ जाती है। टूटे इन पत्तों को लोग घर के आस -पास किसी खाली जगह पर रख देते हैं। इन पत्तों से सींखें निकाली जाती हैं जिनसे सींख झाड़ू तैयार होता है। जिसे कई लोग गोला झाड़ू कहते हैं। गोला वही जो नारियल होता है।

एक पत्ता एक झाड़ू के बराबर होता है। इन पत्तों को उठा कर ले जाते हुए मैंने गली की सफाई कर्मी महिलाओं को देख रखा था। चार -पाँच सफाई कर्मी महिलाओं को मैंने गली की सड़क पर झाड़ू लगाते बीते बरसों से देखा है। काम के बीच लंच टाइम के दौरान वे इन पत्तों को लेकर किसी गली में मिल कर बैठ जाया करती थीं और सुख -दुख के किस्सों को समेटते जाते झाड़ू बनाती थीं। यह तब की बात है जब दिन कोरोना फ्री थे। उनकी बातों से फलटन की गलियाँ गुलजार रहती थीं।

पत्ते तो अब भी गिरा करते हैं पर वे सफाई कर्मी महिलाएँ इन दिनों काम पर नहीं आ रही हैं। फिर भी इन सूखे पत्तों से झाड़ू तैयार किया जा रहा है। किसी जरूरतमंद के हाथ यह पत्ता इन दिनों लग जाता है और वह अपनी आमदनी की खातिर झाड़ू बना कर बेच देता है। कल दोपहर मैंने देखा... दो महिलाएँ बाहर गली की ठहरी सड़क पर थीं। एक ने अपने हाथ में टूटे पत्ते को समेट रखा था। उससे दूर खड़ी महिला गली पार वाले घर को चालीस रुपए में अपने हाथ का बना झाड़ू बेच रही थी। उन दो स्त्रियों को देखते हुए मैंने आँगन में लगे नारियल पेड़ की ओर देखा जिसने कभी हैरत से देखा था पत्ते को झाड़ू में तब्दील होते हुए ....वह आज हैरतजदा आँखों से उस झाड़ू को बेशकीमती रोटी की शक्ल लेते देख रहा था...जिसकी कीमत के आगे सवा लाख की भी कीमत नहीं...

- 11 मई

(2)

कहते हैं कि दिन लौटते हैं...। इस बात पर सोचती हूँ कि रातें क्यों नहीं लौटतीं। क्या बीती रातों के लौटने का किसी आँख ने इंतजार नहीं किया। लौटती रातों की प्रतीक्षा में लौटते दिनों को देखती हूँ। माँ कहती हैं कि सन् 55 की बात होती थी जब इलाहाबाद की लाल कॉलोनी में घर -घर अंडे बिकने आते थे। बेचने का यह काम हामिद मियाँ के हाथ होता था।

लखनवी सफेद कुर्ता -पायजामा होता उनका। सर पर टोपी होती अदब वाली क्रोशिए की। उजली बकर दाढ़ी ...मझोले कद की शख्सियत थी उनकी। लाल कॉलोनी में आते -आते वह भी लाल कॉलोनी के रंग में रंगते गए। हर घर से उनका रिश्ता बन गया। किसी को बहूरानी किसी को बहन किसी को अम्मा- चाची और मन से बिटिया बना लिया था। शाम का सूरज जब लाल कॉलोनी से विदा लेने आता, हामिद मियाँ लाल कॉलोनी की हद में तब प्रवेश कर रहे होते थे। हाथ में उनके होते मुर्गी और बत्तख के अंडे से भरे झोले।

यह सच है कि दिन वक्त की बीती चाल लौटा करते हैं। क्या कभी सोचा होगा हामिद मियाँ ने कि 40/11 के दरवाजे तक बहूरानी पुकारते हुए जब वह घर की सीढ़ियाँ चढ़ते थे... उन सीढ़ियों पर आज भी उस आवाज की याद बची रह जाएगी। वह बहूरानी मेरी माँ अब 83

वर्ष की हो गई हैं। हामिद मियाँ की बात करते हुए हामिद मियाँ का चेहरा माँ की आँखों के आगे धुँधला होता जाता है पर फिर भी वह छवि बराबर बनी हुई है। क्या कभी हामिद मियाँ ने यह भी सोचा होगा कि उनकी याद इलाहाबाद को साथ लिए फलटन में इस घर के दरवाजे तक चली आएगी...

उस याद के संग मैं देखती हूँ वैशाली ताई को जो सर पर अंडों की टोकरी टिकाए घर -घर अंडे बेचने गली में चली आ रही है। यह कोरोना काल की करामात है कि 300 अंडों से भरी टोकरी को बाकायदा संभाल कर उन्हें चलना पड़ता है। अपने होश में मैंने अंडों को खुद घर आते कभी नहीं देखा था। हमेशा दुकान से जाकर खरीदा है।

वैशाली ताई को देखती हूँ और सोचती हूँ कि वक्त ए कोरोना में बहुत कुछ बदला है। अब तक हम घर से बाजार जा रहे थे, अब बाजार घर लौटा है। हामिद मियाँ भले न लौटे हों, उनकी सूरत के पीछे वैशाली का चेहरा चला आया है। चेहरे का फर्क इतना हुआ कि वैशाली

ताई 6 रुपए का एक अंडा बेचती हैं...हामिद मियाँ एक आने में चार अंडे दिया करते थे। तबसे अब तक दुनिया इतनी बदल आयी है पर गनीमत इतनी कि बदलती दुनिया में अंडे हरगिज नहीं बदले हैं।

- 12 जून

(3)

24 जून के सर पर चढ़ी धूप देख कर मुझे यकीन नहीं था कि इस दिन की साँझ में झमाझम बारिश हो जाएगी। दोपहर तक जो आसमान चटकीली रुई भरी टोकरी लगता था, दोपहर ढलते ही आसमान की टोकरी बरसात की माला से भरने लगी। माला भी कैसी काँच बूँदों की क्रिस्टल वाली लड़ी। मैं खिड़की पर खड़ी उस आसमानी डलिया को देखती रही। सोचती रही किसने बुनी होगी आसमानी तार लेकर डोलची। नफासत ऐसी कि टाँके का जोड़ तक एक दिखता नहीं। टोकरी भी ऐसी बड़ी कि दुनिया भर के बादल फूल उसमें समा जाएँ। फूल वैसे भी डाल और डलिया में अच्छे लगते हैं। डलिया फलों भरी हो तो क्या कहने। डलिया हर हाल में सुंदर लगती है। वह भरी हो या फिर खाली।

दो साल पहले की बात है गली से एक स्त्री पुकार घर के भीतर चली आ रही थी। उस आवाज के पीछे चलते मैं गेट तक चली आयी थी। गली में एक महिला सर पर बाँस की अनगिन टोकरियाँ रखे बेचने की खातिर खड़ी थी। एक टोकरी का भाव सौ रुपए उसने लगा रखा था।महाराष्ट्र में ऐसी टोकरियाँ घर की रसोई में रखी आपको दिख जाएँगी। इसमें चपाती बना कर रखी जाती है। सुबह से शाम हो जाए पर चपाती इसमें मुलायम रहती है। यह बात सिर्फ. नर्म चपाती की नहीं, इस टोकरी की बुनावट में छिपे राज की भी है। इन्हें जिस स्नेह भाव से बुना जाता है ,मन और हाथ की सारी मुलायमियत बाँस की त्वचा पर चली आती है। टोकरी के मन का फिर मुलायम हो जाना स्वाभाविक है।

शक्को बाई से एक टोकरी मैंने भी उस दिन खरीद ली थी। टोकरी बना कर बेचना उसकी आजीविका है। टोकरी बेच कर उसे रोटी हासिल होती है। टोकरी और रोटी का अटूट नाता सदियों पुराना है। हालांकि जब मैंने ली, यह सोच कर नहीं खरीदी थी कि इसमें मैं भी रोटी रख कर देखूँगी। रोटी और टोकरी के नाते से ज्यादा यह सोच कर ली थी कि मेरे मन को शक्को बाई की टोकरी भा गई थी। सोचा था कि कभी -कभार मैं भी इसमें फल डाल कर रखूँगी पर पहले से ही कुछ एक छोटी -बड़ी टोकरियाँ होने से बाँस की यह टोकरी फिर संभाल कर किसी दराज में रख दी गई। इक्का -दुक्का बार से ज्यादा वह उपयोग में आयी नहीं थी। सच पूछिए तब यह सपने में भी खबर नहीं थी कि वक्त- ए -कोरोना कभी धरती पर चला आएगा और उस दौर में टोकरी मेरी जरूरत बन जाएगी।

हाँ ! यह टोकरी दराज से इन दिनों बाहर चली आयी है। जब भी कोई जरूरत का सामान घर में देने आता है, मैं यह टोकरी बाँउड्री वॉल पर रख देती हूँ। देने वाला टोकरी में सामान ऊपर से डाल देता है। टोकरी उसके स्पर्श में आती नहीं है। हाथ से किसी हाथ का इन दिनों स्पर्श न हो...इस खातिर दो लोगों में बीच बचाव करती यह टोकरी हक से मध्यस्थ आ जाती है।

दिन आजकल मेरे छोटी -बड़ी टोकरियों को हाथ में लिए बीत रहे हैं। पैसे का लेन -देन और बिल वगैरह के लिए हैंडिल वाली टोकरी एक हाज़िर रहती है। रंगीन तार की रंग -बिरंगी यह टोकरी कभी पंढरपुर रोड से मैंने खरीदी थी। सड़क किनारे भरी दोपहर स्वर्णा तमाम टोकरियाँ लिए बैठी थी। पूछने पर उसने बताया कि वह बेचने की खातिर कनार्टक से चली आयी थी। 250 रुपए की कीमत में उसका मेहनताना और कर्नाटक से आने का हिसाब शामिल था। हिसाब में वह टस से मस नहीं होती थी। 250 रुपए के मोल स्वर्णा की याद फिर टोकरी के संग फलटन चली आयी थी। दोनों टोकरियों की अब यह किस्मत कि ऐसे वक्त में इनका हाथ आना हाथ की मदद जैसा लगता है। इन्हें हाथ में उठाती हूँ तो गली में मिली शक्को बाई याद आती है, याद आती है कर्नाटक से आयी स्वर्णा की। वे दोनों मेरे दोनों हाथों में दो टोकरियाँ थमा गईं ...खाली टोकरियों में जीवन से भरी सौगात दे गईं...

- 24 जून

(4)

कड़वा बोलने वाले का शहद भी नहीं बिकता

और मीठा बोलने वाले की मिर्ची भी बिक जाती है -

यह बात किसी न किसी ने तो किसी से कही

है पर इस कहे को सच में ढलते हुए आज मैंने देखा है। देखा ऐसे कि इन दिनों गली में सब्जी बिकने के लिए दो बार से अधिक आ जाती है। पहले घर की गली में सब्जी बेचने की खातिर सिर्फ.दो लोग आया करते रहे थे पर अब वक्त ए कोरोना में सब्जी कोई न कोई थोड़ी बहुत लेकर साइकिल, स्कूटी और बाइक पर चला आता है। इन दिनों ठाकुरकी गाँव के किशन शिंदे भी सब्जी लिए गली में दिख जाते हैं। उनके पास अक्सर मूँग दाल होती है जिसका ज़िक्र मैंने कल की डायरी में भी किया था। आज सुबह वह मिर्च बेचते हुए दिख गए। गेट के बाहर खड़े होकर उन्होंने मुझसे मिर्च खरीद लेने की बात कही।

दूर से मिर्च दिखती नहीं थी कि कैसी है। दरअसल फलटन में रहते हुए मैंने देखा कि यहाँ हरी मिर्च दो तरह की होती हैं। एक तीखी और एक पोपटी। पोपटी वह होती है जो फलटन के पोपट रंग में रंगी होती है। पोपट यानी कि मिट्ठू मियाँ। तीखी मिर्च वह जो तीखे मिजाज की होती है। इसका रंग गहरा हरा होता है। लंबाई में यह औसत होती है। खास लंबी तो पोपटी मिर्चें होती हैं जो कम तीखी होती हैं।

मिर्च की बात चली तो मैं कहूँगी कि मिर्च खाने में सारे सातारा का कोई जवाब नहीं है। इस मामले में कोल्हापुर सैकड़ों किलोमीटर पीछे रह गया है। सातारा का स्वाद ही मिर्च है। उसकी जुबान पर इस स्वाद का राज चलता है। इस राज के चलते किशन शिंदे गेट के बाहर खड़े होकर मुझे हरी मिर्च दिखा रहे थे। मैंने कहा कि आप गेट से अंदर आकर दिखा दीजिए। नजदीक से मैंने देखा कि वह पोपटी मिर्च नहीं थी। मैंने कहा ,नहीं मुझे यह मिर्च नहीं चाहिए। यह बहुत तेज है। आप इसे रहने दो पर किशन शिंदे ने कहा, नहीं... यह तेज नहीं है। आप इस्तेमाल करके देखिए। आपको तेज नहीं लगेगी।

मैं उसका रंग देख कर कहती रही कि आप रहने दीजिए। मुझे यह तेज लगती है। किशन शिंदे ने फिर कहा कि आप अपने खाने में दो की जगह एक मिर्च इस्तेमाल कर लीजिए। यह अच्छी है। हम खुद इसे अपने खाने में डाला करते हैं। हमें तेज नहीं लगती। आप खा कर तो देखो। यह कहते हुए उसने अपने हाथ में थमी मिर्च अपनी जुबान पर रख ली और ऐसे चबाने लगा कि जैसे मीठा पान हो।

आज से पहले मैंने किसी मिर्च बेचने वाले को इस तरह से मिर्च बेचते देखा नहीं था कि वह मिर्च बेचने की खातिर मुझे मिर्च खाकर दिखा दे। उसे खाते देख कर फिर मेरे पास कोई चारा नहीं बचता था कि मिर्च का हरा चारा न खाया जाए। फिर क्या था ...किशन शिंदे हरी मिर्च तौल रहा था और मैं उसके हाथ की ओर अपनी टोकरी बढ़ा रही थी।

- 8 जुलाई

(5)

कस्बा -ए -फलटन का आकाश महानगरों के आसमान से छोटा जरूर है पर इतना भी छोटा नहीं कि मेरी दो छोटी आँखों में समा जाए। फलटन मेरे लिए चार साल पुराना पर हर दिन नया है। यह कस्बा मेरे संग नये -पुराने का खेला खेलता है। इस खेल में मुझे इतना व्यस्त कर देता है कि खेल के दरम्याँ मेरा मन पठार पार इलाहाबाद के पास जाकर भी फलटन में लौट आता है। आने -जाने की इस प्रकिया के बीच मैं कहूँगी आज जब दौर -ए -कोरोना में घर से बाहर न जाने की जरूरत है फिर भी घर में सब्जी खत्म होने के कगार पर चली आए तो न चाहते हुए भी कदम बाहर निकालना पड़ता है। इन दिनों कुछ किसान सातारा रोड में सड़क किनारे ऋ़्ौ ऋ़्ीरँ सब्जियाँ लेकर बैठे हैं। सातारा रोड मेरे घर से है तो दो किलोमीटर पर उसके बीच एक पुल भी आता है। पुल के नीचे नहर है। नहर इन दिनों लबालब नहीं भरी पर जल उसमें पर्याप्त है। इतना है कि बत्तखें सारी तैरा करती हैं...पंछियों के झुंड के झुंड अपनी छाया देखा करते हैं। फलटन में नदी नहीं है पर यह नहर फलटन की ॅी ॅल्ली है।

तो मैं आपसे सातारा रोड पर जाने की अपनी बात कर रही थी। हुआ यूँ कि जब मैं कल नहर पार कर चुकी थी...मेरा मतलब कि पुल पार कर चुकी थी तो चलती उस सड़क के दाँये हाथ में मुझे कमान मिल गई। आप पूछेंगे कि कमान क्या ...यह वही कमान है जिसे गायक मुकेश ने सरस्वतीचंद्र फि ल्म की नायिका के लिए स्वर दिया है- ये काम कमान भँवे तेरी/ पलकों के किनारे कजरारे/ पर यहाँ बात किसी स्त्री की भौंहें कमान वाली नहीं हो रही। कमान यहाँ किसी गाँव के प्रवेश द्वार को कहते हैं जहाँ से उस गाँव की हद शुरू होती है। यह कमान संत बापूदास नगर में ले जाती है। गाँव के भीतर जाने का इन दिनों ख्याल भी नहीं आ सकता पर उस कमान को मैं वहाँ खड़ी देखती रह गई। कुछ तो था उस कमान के भीतर जो मुझे पास बुलाता था। वह सड़क निर्जन थी। उसकी निर्जनता में एक पुकार थी। मैं उस पुकार को अनसुना नहीं कर सकी। गिन कर दस कदम ही आगे बढ़ी थी कि सड़क के बाँयी ओर कैक्टस और कीकर के अतिरिक्त कुछ नहीं दिख रहा था।

काँटे ही काँटे के बीच मुझे प्रस्तर के हाथी की पदचाप मिली। वह एकटक मेरी ओर देख रहा था। उसकी पलकें झपकती नहीं थीं। संभवतः वह दो सौ वर्ष से वहाँ इस रूप में खड़ा है। पत्थर की दो खंडित दीपशिखाएँ भी वहाँ उसके पास अस्तित्व में थीं...दो शिलापट्ट भी थे जिन पर उकेरी मूर्तियों की मुद्राएँ विट्ठल -रुक्मणि की जोड़ी लगती थी। ऐसा लगता था कि अवशेष किसी इमारत का भूला-बिसरा किस्सा सुनाना चाहता है पर वह प्रस्तर हाथी की मूर्ति मौन थी। मौन ...तपस्वी उस हाथी की आँखों में झाँकते हुए मैंने पाया कि वह गजानन का प्रतीक लगता है। प्रतीक से भी ज्यादा इतिहास की किताब का वह एक पन्ना जो अपने पढ़े जाने की फलटन से उम्मीद करता है क्योंकि उस हाथी की तपस्वी आँखों में अगर कुछ था तो थी उम्मीद ...

– 7 अगस्त

संपर्क: 9560180202

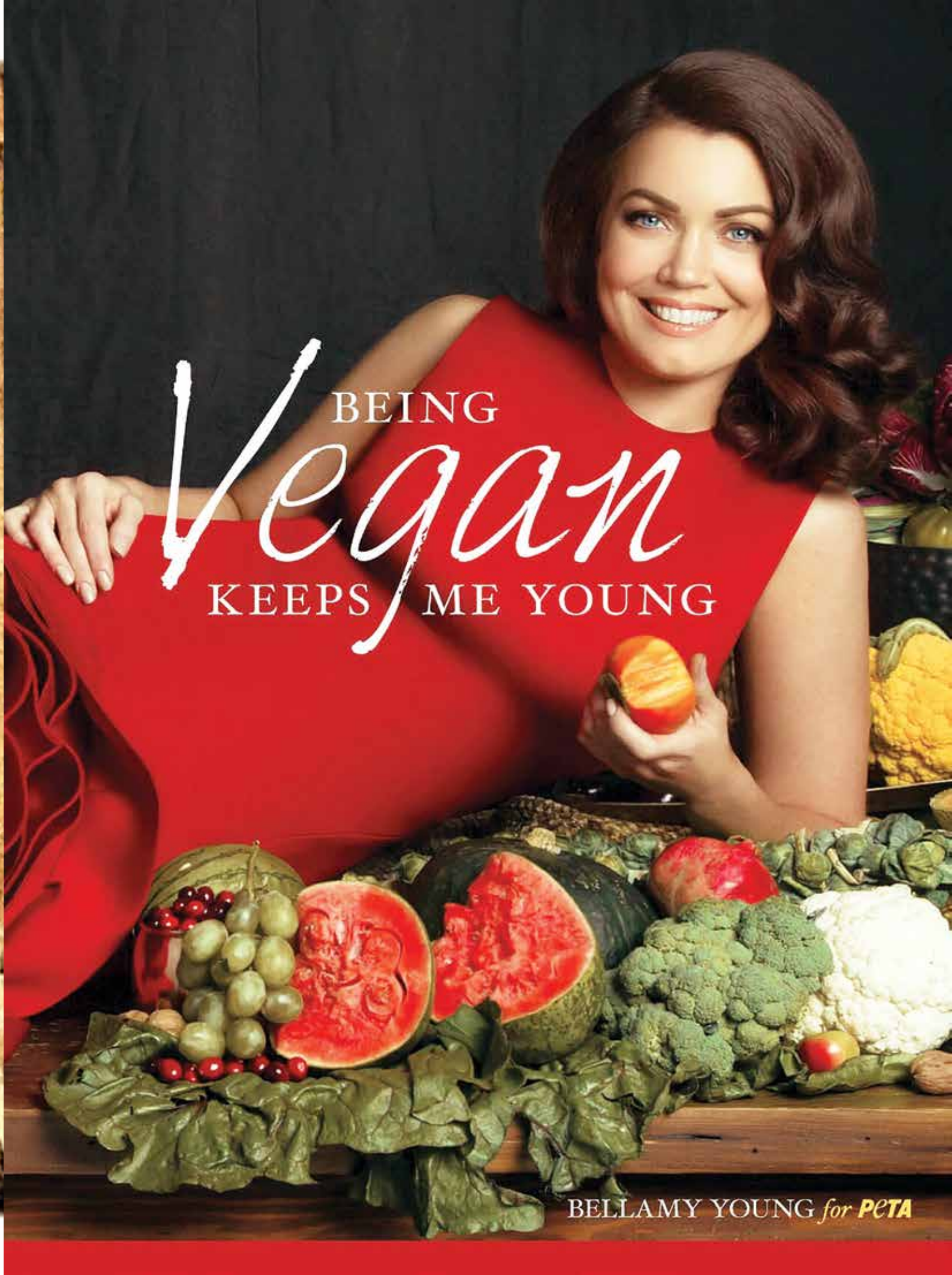
BEING
Vegan
KEEPS ME YOUNG
BELLAMY YOUNG for PETA

गंभीर है नई शिक्षा नीति

प्रेमकुमार मणि

महामारी ने भारत में स्वास्थ्य और शिक्षा के क्षेत्र में विनाशकारी अभाव को उजागर करके रख दिया है। यह सरकार की लंबी उपेक्षा और बढ़ते निजीकरण और व्यावसायीकरण का प्रमाण है। डूटा ने सरकार से शिक्षा को रौंद देने वाले बदलावों से बाज आने की मांग करते हुए कहा कि हमारे देश के लिए इसके गंभीर नतीजे होंगे।

29 जुलाई को केंद्रीय सरकार ने नई शिक्षा नीति की घोषणा की है। इसके पूर्व 1986 में राजीव गाँधी सरकार ने इस विभाग में एक बदलाव लाया था, जिसमे दिखने लायक बात यही थी कि शिक्षा विभाग का नाम बदल कर मानव संसाधन विभाग कर दिया गया था। कल की घोषणा में पुनर्मूसिको भव, अर्थात फिर से इस विभाग का नाम शिक्षा मंत्रालय हो गया।

कुछ बड़ी तब्दीलियां की गयी हैं। 10 +2 प्रणाली को खत्म कर के 5 +3 +3 +4 प्रणाली अपनायी गयी है। स्कूल से पहले ही बच्चों की शिक्षा आरम्भ हो जाएगी। इसे आंगनबाड़ियाँ अंजाम देंगी और यह फाउंडेशन कोर्स होगा। यह तीन साल को होगा। प्री-स्कूलिंग दो साल का होगा - कक्षा एक और दो। इस तरह फाउंडेशन और प्री मिल कर आरंभिक पांच। फिर कक्षा तीन से पांच तक का तीन वर्षीय मिडिल कोर्स। इसके बाद छह, सात, आठ का सेकंडरी और आखिर में नौ, दस, ग्यारह, बारह का हायर सेकंडरी कोर्स। खास बात यह है कि मिडिल कोर्स से ही कौशल विकास पर जोर दिया जायेगा। उम्मीद की गयी है कि हर छात्र किसी न किसी हुनर के साथ, यानी हुनरमंद होकर ही स्कूल से बाहर निकलेगा। इस लक्ष्य की सराहना कौन नहीं करना चाहेगा। लेकिन, यह इतना आसान नहीं है।

इस पूरे प्रयोग को समझना थोड़ा मुश्किल है। हालांकि इस नीति को अंजाम देने के लिए सुब्रह्मण्यम और कस्तूरीरंगन की अध्यक्षता वाली अलग-अलग समितियों ने मिहनत की है। निचले स्तरों से भी काफी कुछ अध्ययन किये जाने की बात कही गयी है। फिर भी बहुत से सवाल उठते हैं। मेरी जानकारी के अनुसार आंगनबाड़ी अभी भी बच्चों की देखभाल करती है। इस घोषणा ने उसे बाल कल्याण से उठा कर शिक्षा विभाग के अंतर्गत ला दिया है। बाकी बारह कक्षाओं की व्यवस्था है ही। मेरी समझ से पुरानी व्यवस्था 10+2 अधिक सही थी। दो सोपानीय की जगह चार सोपानीय का अर्थ कुछ समझ में नहीं आया। क्या सरकार चाहती है कि बच्चे बीच में पढाई का सिलसिला तोड़ें? यानी पहले, दूसरे या तीसरे सोपान पर भी स्कूल छोड़ सकते हैं। अनिवार्य शिक्षा के वातावरण को यह कमजोर करता प्रतीत होता है। गरीबों को शिक्षा से दूर रखने की छुपी और शातिर कोशिश के रूप में भी इसे देखा जायेगा।

उच्च शिक्षा में डिग्री कोर्स को चार साल का किया गया है। इसके बाद पोस्ट ग्रेजुएट, यानि मास्टर डिग्री। मास्टर डिग्री के बाद बिना एम फिल के पीएचडी। डिग्री कोर्स को ऐसा बनाया गया है कि छात्र बीच में भी यदि पढाई छोड़ते हैं, तो उन्हें सर्टिफि केट मिलेगा। पहला साल पूरा करने के बाद सर्टिफिकेट, दूसरे साल के बाद छोड़ने पर डिप्लोमा और तीसरे -चौथे साल के बाद डिग्री दे दिए जाने की व्यवस्था है। इसे मल्टीपल एंट्री और मल्टीपल एग्जिट सिस्टम कहा गया है।

आरंभिक शिक्षा में पहले भी मादरी-जुबानों

पर जोर था। इस व्यवस्था में भी है। उच्च शिक्षा में निजी और सरकारी क्षेत्र के संस्थानों को एक ही शिक्षा नीति के तहत चलने की बात कही गयी है। यह सराहनीय है। लेकिन प्राथमिक और उच्च दोनों स्तरों पर यह नीति छात्रों को ड्रॉप-आउट के लिए उत्साहित करती प्रतीत होती हैं। इस लिए मैं इसकी सराहना करने में स्वयं को रोकना चाहूँगा।

प्रेस को जानकारी देते हुए केंद्रीय मंत्री प्रकाश जावेड़कर उत्साहित थे। मानव संसाधन मंत्री रमेश पोखरियाल निशंक और उनसे भी बढ़ कर प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी उत्साहित थे। लेकिन मैंने इसे उलट -पुलट कर जो देखा उससे उत्साहित होने की जगह भयभीत हो रहा हूँ। यह पूरी तरह एक पाखंड सृजित करता है। उदाहरण देखिए। कहा गया है शिक्षा-बजट 4।43 फीसदी से बढ़ा कर 6 फीसदी किया जा रहा है। यानी 1 ।57 फीसदी बढ़ाया जा रहा है। किसकी आँख में धूल झोंक रहे हो मोदी जी? आप पहले यह बतलाइये कि बाल कल्याण विभाग द्वारा संचालित आंगनबाड़ी का खर्च कितना है? आप उसे शिक्षा में जोड़ दे रहे हो। यह तो पहले ही खर्च हो रहा था। यदि इसके अलावा शिक्षा का व्यय बढ़ाया गया है, तब मैं आपकी थोड़ी -सी तारीफ करूँगा। अधिक नहीं, क्योंकि आज भी इस देश में शिक्षा का व्यय प्रतिरक्षा व्यय (15।5%)से बहुत कम है, और उसे उस से बहुत अधिक होना चाहिए।

यह शिक्षा नीति मेरी समझ से उलझावकारी है। नई सदी की सामाजिक-आर्थिक और सांस्कृतिक चुनौतियों का सामना करने का इसके पास कोई विजन नहीं है। हमारा देश संस्कृति -बहुल और भाषा -बहुल है। इस बहुरंगेपन को एक इंद्रधनुषी राष्ट्रीयता में विकसित करना, अपनी सांस्कृतिक जड़ों को मजबूत करते हुए एक वैश्विक चेतना सम्पन्न नागरिक का निर्माण और आर्थिक-सामाजिक तौर पर आत्मनिर्भर और भविष्योन्मुख इंसान बनाना हमारी शिक्षा का उद्देश्य होना चाहिए। यह देखना होगा कि हम समान स्कूल प्रणाली को अपना रहे हैं या नहीं। देश में कई स्तर के स्कूल नहीं होने चाहिए, इसे सुनिश्चित करना होगा। उच्च शिक्षा में निजी क्षेत्रों का प्रवेश भले हो, स्कूल स्तर तक सभी तरह के प्राइवेट स्कूल को बंद करना होगा। यह नहीं होता है तब शिक्षा पर बात करना फिजूल है, बकवास है।

नई शिक्षा नीति : तालीम को रौंद देने वाला बदलाव- दिल्ली यूनिवर्सिटी टीचर्स एसोसिएशन (डूटा) ने महामारी के दौरान नई शिक्षा नीति को कैबिनेट की मंजूरी पर गहरा एतराज जताया है। डूडा ने कहा कि परीक्षाएं आयोजित करने की सरकार की ज़िद छात्र-छात्राओं के लिए भेदभाव भरी और बहिष्कृत करने वाली हैं। इससे शिक्षण संस्थानों में संकट गहरा हो गया है।

यह शिक्षा नीति मेरी समझ से उलझावकारी है। नई सदी की सामाजिक-आर्थिक और सांस्कृतिक चुनौतियों का सामना करने का इसके पास कोई विजन नहीं है।

इंटरनेट, उपकरणों, किताबों और दूसरे शैक्षणिक स्रोतों की पहुंच से दूर अपने घरों में फंसे करोड़ों छात्रों को सुविधाएं मुहैया कराने में सरकार की भारी नाकामी के मद्देनजर यह और ज्यादा गंभीर मामला है। एक ऐसे देश में जहां एक बड़े तबके के लिए शिक्षा पाने की चाह ज़िंदगी की बेहतरी से जुड़ी है, ऑनलाइन शिक्षा के एजेंडे को आगे बढ़ाने के लिए महामारी का ऐसा सिनीकल इस्तेमाल भयानक है।

डूटा के अध्यक्ष राजीव रे ने नई शिक्षा नीति के मसौदे की दूसरी चीजों के साथ विश्वविद्यालयों और हर उच्च शिक्षण संस्थान को बोर्ड ऑफ गवर्नर्स को सौंपने का विराध का है। संगठन ने कहा है कि इसका मकसद महाविद्यालयों, विश्वविद्यालयों, यहां तक कि यूजीसी और दूसरी रेग्यूलेटिंग अथॉरिटीज में निहित सभी शक्तियों का आनंद लेना है। हर बोर्ड ऑफ गवर्नर को इन मामलों में निरंकुश शक्तियां हासिल होंगी :

(1) शैक्षणिक लक्ष्य निर्धारित करना।

(2) अकादमिक कार्यक्रम शुरू और बंद करना।

(3) छात्रों के प्रवेश और शिक्षकों की भर्ती की संख्या निर्धारित करना।

(4) छात्रों की फीस।

(5) शिक्षकों की योग्यता पात्रता, भर्ती, वेतन संरचना, पदोन्नति और सेवा निरंतरता और समाप्ति के तरीके।

उन्होंने कहा कि स्वायत्तता को अनुकूलन की स्वतंत्रता के रूप में पुनर्परिभाषित किया गया है। बोर्ड ऑफ गवर्नर्स का पुनर्परिभाषित स्वायत्ता के साथ सशक्तीकरण व्यापार को नियंत्रणमुक्त करने वाले नवउदारवादी सुधारों के समानांतर है। यह शिक्षा को व्यापार की तरह कॉरपोरेट घरानों को सौंपने जैसा है। यह भूलना नासमझी है कि पूर्व मानव संसाधन विकास मंत्री जावड़ेकर ने यह साफ दावा किया था कि 'सरकार शिक्षा क्षेत्र में मुक्त दौर लाने के लिए प्रयासरत है।'

डूटा के सचिव राजिंदर सिंह ने कहा कि महामारी ने भारत में स्वास्थ्य और शिक्षा के क्षेत्र में विनाशकारी अभाव को उजागर करके रख दिया है। यह सरकार की लंबी उपेक्षा और बढ़ते निजीकरण और व्यावसायीकरण का प्रमाण है। डूटा ने सरकार से शिक्षा को रौंद देने वाले बदलावों से बाज आने की मांग करते हुए कहा कि हमारे देश के लिए इसके गंभीर नतीजे होंगे।

उन्होंने इस मसले पर शिक्षाविदों के साथ बातचीत की मांग की है। महत्वपूर्ण नीतिगत मामलों में 'प्रोफार्मा फीडबैक सिस्टम' जिसमें राय मांगी जाए लेकिन कोई बहस न हो, मंजूर नहीं है। यह लोकतंत्र और लोगों के भविष्य को खतरे में डालता है।

महल की राजनीति और राजनीति का महल

राकेश अचल

एक लम्बे समय बाद पुराने विषय पर लौटना पद रहा है क्योंकि राजनीती भी लोकपथ से राजपथ की और जाती दिखाई दे रही है। आजादी के बाद लोकतंत्र में भी अनेक राजघराने राजनीति में कूदे लेकिन कुछ डूब गए और कुछ पार लग गए, कुछ घर बैठ गए, कुछ का कोई नामलेने वाला नहीं रहा, लेकिन ग्वालियर का सिंधिया राजघराना इसका अपवाद आज भी बना हुआ है। सिंधिया राजघराने ने जब से राजनीति में कदम रखा है तब से महल को सत्ता से दूर नहीं होने दिया, महल का एक न एक सदस्य अपना एक पांव सत्ता में तो दूसरा पांव विपक्ष में रखकर आगे ही बढ़ता रहा।

सिंधिया राजघराने को राजपथ से लोकपथ पर लेन वाली श्रीमती विजयाराजे सिंधिया थी। आजादी के बाद वे प्रथम प्रधानमंत्री पंडित जवाहर लाल नेहरू के कहने पर राजनीति में आयीं, कांग्रेस को उन्होंने अपना पहला प्लेटफार्म बनाया। वे 1957 से जीवन पर्यन्त चुनाव लड़ी और एक अपवाद को छोड़कर लगातार जीतती रहीं। उन्होंने 2001 तक अपने आपको लोकसभा का सदस्य बनाये रखा।

राजमाता के जीवनकाल में ही उनके बेटे माधवराव सिंधिया राजनीति में आ गए और 1971 से लेकर जीवन पर्यन्त संसद के सदस्य रहे। उन्होंने लोकसभा के कुल 9 चुनाव लाडे और सभी जीते। उनके कहते में अजेय शब्द दर्ज है। जबकि उनकी माँ राजमाता विजयाराजे सिंधिया ने भी 9 चुनाव लाडे लेकिन वे एक चुनाव हार गयीं थी फिर भी वे 8 बार लोकसभा की सदस्य रहीं। मान बेटे ने कांग्रेस के टिकिट पर भी चुनाव लड़ा और जीता। राजमाता ने कांग्रेस छोड़ने के बाद जनसंघ और बाद में भाजपा से अपने आपको बाबस्ता रखा जबकि माधवराव सिंधिया कांग्रेस में शामिल होने के बाद एक अपवाद को छोड़ आजीवन कांग्रेस से जुड़े रहे।

ग्वालियर के रानी महल को सत्ता और विपक्ष से जोड़े रखने की परम्परा को माधवराव सिंधिया के बेटे ज्योतिरादित्य सिंधिया ने भी लगातार आगे बढ़ाया। उन्होंने भी लोकसभा के 5 चुनाव लड़े लेकिन पांचवीं बार हार गए यानि चार चुनाव जीते वे भी कांग्रेस के टिकिट पर। हाल ही में ज्योतिरादित्य सिंध्या ने भी अपनी दादी के पद चिन्हों पर चलते हुए कांग्रेस छोड़ कर भाजपा का दामन थाम लिया और अब वे राजयसभा के सदस्य हैं।

मध्यप्रदेश में सिंधिया परिवार की सदस्य श्रीमती यशोधरा राजे ने भी रानीमहल की लालबत्ती बुझने नहीं दी। वे भी लोकसभा केलिए दो बार और विधानसभा केलिए चार बार चुनी गयी। मध्यप्रदेश से उनकी बुआ बसुंधरा राजे ने भी राजनीती में किस्मत आजमाई लेकिन वे अपना पहला चुनाव हार गयीं बाद में वे राजस्थान की राजनीति में ऐसी जमीन कि 5 बार सांसद और 5 बार विधायक भी रहीं।

मजे की बात ये है कि सिंधिया परिवार के सदस्य ही नहीं अपितु महल में रहने वाले उनके रिश्तेदारों ने भी महल की लालबत्ती जलाये रखने में अहम रोल अदा किया। राजमाता के भाई ध्यानेन्द्र सिंह मुरार क्षेत्र से अनेक चुनाव जीते उनकी मंत्री भी रहे। राजमाता की भाभी श्रीमती माया सिंह राजयसभा और विधानसभा की सदस्य रहने के साथ मध्यप्रदेश में मंत्री रहीं। राजमाता विजयाराजे सिंधिया की चचेरी बहन श्रीमती सुषमा सिंह भी करेरा (शिवपुरी) से एक बार विधायक रहीं। इतना ही नहीं सिंधिया के निजी सहायक रहे महेंद्र सिंह कालूखेड भी सांसद और विधायक रहे। हरी सिंह

पहली बार दागवार सिंधिया

राजनीति में आना कोयले की खान से गुजरने जैसा है. कम ही लोग इसमें से बेदाग बाहर निकल पाते हैं। बीस साल से 'मिस्टर क्लीन' की तरह राजनीति कर रहे पूर्व केंद्रीय मंत्री ज्योतिरादित्य सिंधिया पर भी अंततःविधानसभा के टिकिट बेचने का घृणित आरोप लग गया। ये घटना हम जैसे आम मतदाताओं के लिए भी पीड़ादायक है, क्योंकि आम जनता की नजरों में कुछ ही लोग पाक-साफ दिखाई देते हैं।

कांग्रेस छोड़ने के बाद भाजपा में सिंधिया का प्रवेश क्या हुआ उनके ऊपर आरोपों की बौछार शुरू हो गयी, पहले ये काम भाजपा वाले करते थे, अब ये काम कांग्रेस वाले कर रहे हैं और सप्रमाण कर रहे हैं। विधानसभा चुनावों के समय कुछ लोगों ने भी मुझसे इस तरह की बात कही थी तब मुझे लगा था कि सिंधिया के निज सचिव पुरुषोत्तम पाराशर से चिढ़न वाले लोग कहानियां गढ़कर लाते हैं लेकिन अशोकनगर की एक महिला नेत्री द्वारा जारी किये गए एक आडियो ने मेरी धारणा को खंडित कर दिया है, अब मुझे भी लगने लगा है कि -'दाल में कुछ न कुछ काला 'जरूर है

सिंधिया के ऊपर कांग्रेस के पूर्व प्रवक्ता रहे माणिक अग्रवाल ने भी आरोप लगाया है कि पूर्व मंत्री और भाजपा नेता सरताज सिंह को भी सिंधिया ने ही टिकिट दिलाया था और इसके एवज में सरदार जी ने एक करोड़ रुपए दिए थे। अब गुना की आरती जैन और भोपाल के माणिक अग्रवाल के पास इन आरोपों के समर्थन में कोई पक्का सबूत नहीं है सिवाय एक आडियो के, लेकिन कहीं न कहीं पौशीदा आग जरूर थी जिसमें से अब धुंआं उठ रहा है।

राजनीति में नए-नए अलंकरणों से सुशोभित किये जाने वाले सिंधिया की तरफ से इन आरोपों के बारे में अभी कोई प्रतिक्रिया नहीं आयी है. वे हाल ही में कोरोना से मुक्त होकर कोरंटीन में हैं। वे जब इस पर बोलेंगे तब ही कुछ कहा जा सकेगा, फिलहाल तो उनके दामन पर दाग लगाए जा चुके हैं। मजे की बात ये है कि सिंधिया को अपनाने वाली भाजपा इस समय सिंधिया के बचाव में आगे नहीं आ रही है। आपको याद होगा कि एक जमाने में भाजपा के राज्य सभा सदस्य प्रभात झा ने सिंधिया पर शिवपुरी में सरकारी जमीने हड़पने के सप्रमाण आरोप लगाए थे लेकिन बाद में उन्हें चुप करा दिया गया। सिंधिया के पिता स्वर्गीय माधवराव सिंधिया और दादी स्वर्गीय विजयाराजे सिंधिया ने हमेशा बेदाग राजनीति की। राजमाता ने भी सातवें दशक में कांग्रेस की सरकार गिराई थी लेकिन तब भी उनके ऊपर कोई आरोप भ्रष्टाचार का नहीं लगा था। माधवराव सिंधिया पर हवाला काण्ड में शामिल होने का आरोप लगा लेकिन वे इसकी जांच में बेदाग निकले। हालांकि उन्होंने नैतिकता के चलते अपने मंत्रिपद से इस्तीफा दे दिया था।

आम धारणा है कि सिंधिया खानदान के पास अकूत सम्पत्ति और वैभव है इसलिए उन्हें राजनीति में भ्रष्टाचार करने की कोई जरूरत नहीं है। न ही उन्हें सांसद निधि से कराये गए कामों की दलाली की जरूरत है और न ही किसी और तरीके से धन कमाने की जरूरत.इस बिना पर श्रीमती जैन और माणिक अग्रवाल के आरोप निराधार और राजनीति से प्रेरित हो सकते हैं। लेकिन इनके बारे में सिंधिया को खुद बोलना पडेगा, मेरा मन इन आरोपों को ठीक उसी तरह लेता है जैसे आम जनता ले रही है। मजे की बात ये है कि सिंधिया पर आरोप लगाने वाले कल तक चुप थे क्योंकि वे कंग्रेस में असरदार स्थिति में थे लेकिन आज उनकी स्थिति बदल गयी है इसलिए सबके सुर बदले हुए हैं

भ्रष्टाचार के आरोप राजनीति में नए नहीं हैं लेकिन सिंधिया जैसे नेताओं पर यदि ऐसे आरोप लगते हैं तो हैरानी होती है। ये आरोप कांग्रेस के किसी अन्य नेता पर लगाए जाते तो किसी को हैरानी नहीं होती क्योंकि उनके लिए ये एक सामन्य बात है। वैसे नेता आरोप प्रूफ होते हैं.हमारे मौजूदा मुख्यमंत्री जी तो अपने पहले कार्यकाल से ही आरोपों की जद में रहे हैं लेकिन वे आज भी भाजपा के प्रिय हैं। प्रदेश सर्कार ने इन आरोपों के बारे में अभी कोई संज्ञान नहीं लिया है लेकिन ग्वालियर के आईजी राजाबाबू ने जरूर कहा है कि वे कांग्रेस की इस बाबद मिली शिकायत की जांच जरूर कराएँगे। सवाल ये है कि क्या राज्य सरकार राजा बाबू को ऐसा करने की इजाजत देगी ?

बहरहाल सबको इन्तजार है कि सिंधिया खुद इस मुद्दे पर कब और क्या बोलते हैं ?जब तक सिंधिया मौन हैं तब तक सब कुछ हवा-हवाई है। सिंधिया के पास दो विकल्प हैं, पहला ये कि वे इन आरोपों को खारिज कर दें या फिर इनकी जांच की मांग खुद कर आरोप लगाने वालों के खिलाफ कार्रवाई कीमांग करें। जो लोग सिंधिया को जानते हैं वे मानते हैं कि सिंधिया इस बारे में शायद ही कुछ बोलें.सिंधिया सक्रिय राजनीति में दो दशक से हैं. न दो दशकों में उन्होंने राजनीति में मिलने वाला हर वैभव हासिल किया और गंवाया भी है। ये स्थिति लेकिन उनके लिए अप्रत्याशित है। राजनीती में सिंधिया गहराने की विरासत को इन ताजा आरोपों से काफी नुक्सान हुआ है

नरवरिया को भी एक बार विधायक बनने का अवसर मिला।

कहने का आशय ये है कि रानी महल हमेशा लोकपथ पर रहते हुए भी राजपथ से जुड़ा रहा। राजपथ से जुड़े रहना सिंधिया परिवार की विवशता थी या संयोग इसका आकलन अलग-अलग नजरिये से किया जाता रहा है। लोकमान्यता ये है कि सिंधिया परिवार लोकसेवा के लिए ही राजनीति में रहता आया है फिर भले ही राजनीति पक्ष की हो या विपक्ष की। देश के राजनितिक इतिहास में इसीलिए सिंधिया परिवार अपवाद है।

सिंधिया परिवार में दो धाराएं एक साथ चलती आयीं हैं। एक धारा सीधे सत्ता से जुड़ती है तो दूसरी धारा विपक्ष से। मजे की बात ये है कि सिंधिया परिवार के सदस्य दोनों ही भूमिकाओं में संतुष्ट दिखाई देते हैं। और कोशिश करते हैं कि सुर्खियों में बने रहें। आज की तारीख में भी सिंधिया परिवार राजनीति के केंद्र में है। ज्योतिरादित्य सिंधिया के भाजपा में शामिल होने के बाद ग्वालियर चंबल की ही नहीं अपितु मध्यप्रदेश की राजनीति के सामने फिर दुविधा है कि वो महल से संचालित हो या महल राजनीति से संचालित हो? क्योंकि इस समय भी रानी महल में एक सांसद और एक मंत्री विराजमान है।

मध्यप्रदेश सरकार के गठन से लेकर मंत्रिमंडल के बनने तक में रानी महल की भूमिका प्रमुख रही है। मुख्यमंत्री शिवराज सिंह इस समय असहाय और निरुपाय दिखाई दिए हैं। विभागों के वितरण में वे अपनी स्वायत्ता को बचाकर नहीं रख पाए, आने वाले दिनों में उनका क्या होगा वे ही जानते होंगे लेकिन ये साफ नजर आ रहा है कि आने वाले चार-छह माह तो महल की राजनीति ही चलेगी और महल राजनीति का महल बना रहेगा। इस बीच यदि केंद्र में ज्योतिरादित्य सिंधिया को मंत्री बना दिया गया तो इस तस्वीर का एक अलग रंग उभर कर सामने आ सकता है।

राजनीति में दिलचस्पी रखने वालों के लिए ये जान लेना जरूरी है कि कांग्रेस हो या भाजपा किसी ने महल का विरोध नहीं किया।अब ये पहला मौका है जब पूरा महल कांग्रेस से दूर चला गया है। महल की अगली पीढ़ी इस इतिहास को बदलेगी या नहीं ये भविष्य के गर्त में छिपा है। इस स्थिति में ये देखना है कि कांग्रेस महल के सहयोग के बिना भी क्या राजनीति में कोई बड़ी लकीर खींच सकती है या आने वाले दिनों में उसे फिर सिंधिया घराने की जरूरत पड़ सकती है।

कांग्रेस में भगदड़ का दौर है या बगावत का?

राकेश अचल

कांग्रेस में भगदड़ के कारण भाजपा आधी कांग्रेसमय हो गयी है। कांग्रेस के बागियों को भाजपा में बड़ी आसानी से शरण मिल रही है। भाजपा के युवा तुर्कों को भी इस घालमेल के खिलाफ खड़ा होना चाहिए अन्यथा जैसे आज कांग्रेस की दुर्दशा है, कल को भाजपा की भी हो सकती है। तब भाजपा भाजपा नहीं काजपा बन सकती है, जिसका चाल, चरित्र और चेहरा बहुत कुछ कांग्रेस जैसा नजर आ सकता है।

देश की और दुनिया की सबसे पुरानी राजनीतिक पार्टियों में से एक है कांग्रेस। इस कांग्रेस में इस समय एक अजीब किस्म की हलचल है। कांग्रेस के युवा तुर्क तेजी से कांग्रेस छोड़कर इधर-उधर जा रहे हैं। लेकिन ये समझ में नहीं आ रहा है कि ये भगदड़ है या बगावत ? भगदड़ और बगावत में बुनियादी भेद है। पार्टी नेतृत्व को बदलने या चुनौती देने के बजाय युवा नेता बहाने बनाकर कांग्रेस से पल्ला झाड़ रहे हैं। ताजा उदाहरण राजस्थान के युवा तुर्क सचिन पायलट का है।

कांग्रेस का नेतृत्व यकींनन परिवारवादी है लेकिन उसे चुनौती देकर हटाने का संकल्प किसी युवा तुर्क में दिखाई नहीं देता.मुझे तो सचिन जैसे संभावनाशील नौजवानों को युवा तुर्क कहने में भी संकोच होता है, क्योंकि युवा तुर्क हथियार डालते नहीं बल्कि हथियार छीनते हैं और उनका प्रयोग करते हैं। कांग्रेस के परिवारवादी नेतृत्व से घबड़ाकर बागी तेवर अपनाने वाले सचिन पायलट न पहले व्यक्ति हैं और न आखरी होंगे। ये सिलसिला चलता ही रहता है लेकिन अपवादों को छोड़कर कोई ऐसा नेता अब तक सामने नहीं आया है जिसने कांग्रेस की विचारधारा का परित्याग किये बिना कांग्रेस को बदलने का काम किया हो।

देश में भाजपा के अलावा केवल और केवल कांग्रेस ऐसा राजनीतिक दल है जो सत्ता में न होते हुए भी उत्तर से दक्षिण तक और पूर्व से लेकर पश्चिम तक जाना-पहचाना जाता है, या जो एक विचारधारा के रूप में आज भी मौजूद है.कांग्रेस के नेतृत्व से आजिज आकर बाहर जाने वालों में से ममता बनर्जी जैसी एक-दो नेता हैं जिन्होंने अपनी अलग पहचान बनाई लेकिन वे भी कांग्रेस के परिवारवादी नेतृत्व का तख्ता पलट नहीं कर पाई, उन्होंने भी अपना प्रभाव क्षेत्र एक राज्य तक सीमित कर लिया। जिन नेताओं ने कांग्रेस छोड़ी वे या तो क्षेत्रीय नेता बन कर रह गए या फिर परिदृश्य से गायब हो गए, ज्योतिरादित्य सिंधिया या रीता बहुगुणा जैसों ने भाजपा में शरण लेकर अपना भविष्य सुरक्षित करने की कोशिश की, लेकिन विचारधारा के मामले में वे कहीं के नहीं रहे।

आपको याद होगा कि कांग्रेस के परिवारवादी नेतृत्व को आठवें दशक में स्वर्गीय नारायणदत्त तिवारी और अर्जुन सिंहऔर वीपी सिंह जैसे नेताओं ने चुनौती दी थी.अपना अलग राजनीतिक दल भी बनाया लेकिन जन स्वीकृति न मिलने के बाद वे फिर कांग्रेस में वापस लौट आये। गांधी परिवार के समानांतर खड़े रहने का बूता अब तक किसी में

नजर नहीं आया है और शायद यही वजह है कि कांग्रेस में गांधी परिवार अप्रासंगिक नहीं हो पा रहा है। ज्योतिरादित्य सिंधिया की पीढ़ी से कुछ उम्मीद थी लेकिन इस पीढ़ी ने भी पीठ ही दिखाई है और परिवर्तन की संभावनाओं को समाप्त कर दिया।

कांग्रेस हो या कोई अन्य राजनीतिक दल उसमें बगावत आम बात है किन्तु इस बगावत का कोई दूरगामी परिणाम सामने नहीं आ पाता. आज के सत्तारूढ़ दल भाजपा में भी बगावतें हुईं लेकिन नतीजा वो ही 'ढाक के तीन पात' वाला निकला.जो पार्टी से बाहर गया वो झक मारकर वापस आ गया। फिर चाहे बागी कल्याण सिंह रहे हं या उमा भारती या केशुभाई पटेल कहने को भाजपा देखने में दूसरे दलों से एकदम अलग है लेकिन यहां भी नेतृत्व एक परिवार का ही चलता है। परिवारवाद पर आधारित राजनीतिक दलों से राजनीति को मुक्त करना आसान काम नहीं है। जैसे भाजपा संघ परिवार से बाहर नहीं निकल पाती वैसे ही कांग्रेस गांधी परिवार से. सपा यादव परिवार से और बसपा बहन जी से। बड़े राजनीतिक दल ही नहीं अपितु रामविलास पासवान जैसों की मुहल्ले छाप पार्टियों में भी परिवारवाद मुख्य तत्व है।

अब सवाल ये है कि क्या निकट भविष्य में कांग्रेस गांधी परिवार के नेतृत्व को खारिज कर कोई नया नेतृत्व तलाश पाएगी? कांग्रेस की मौजूदा सुप्रीमो श्रीमती सोनिया गाँधी ने कांग्रेस को जो ऊंचाई दे सकतीं थीं दे चुकीं, उनके उत्तराधिकारी राहुल गांधी पार्टी की जितनी दुर्दशा कर सकते थे, कर चुके, लेकिन आगे क्या हो सकता है। राहुल की बहन प्रियंका बाड्रा यूपी जीतने के लिए चन्द वामपंथियों का सहारा लिए लखनऊ में डेरा डाले हुए हैं। कांग्रेस का आधार रहे जनाधार वाले पुराने सामंत तेजी से कांग्रेस छोड़ भाजपा में जा रहे हैं। शुरूवात मध्यप्रदेश से हो चुकी है.अभी सिंधिया और लोधी गए हैं कल को और भी जायेंगे, बावजूद इसके कांग्रेस का वजूद क्यों बना रहेगा या क्यों बना रहना चाहिए ?

दुर्भाग्य ये है कि कांग्रेस के पास कोई संघ परिवार नहीं है जो नए नेतृत्व को भविष्य की जरूरतों के हिसाब से तैयार कर सके। कांग्रेस को भी एक मोदी की जरूरत है लेकिन गांधी परिवार के पास अपना मोदी तैयार करने की न दृष्टि है और न कोई तैयारी। कांग्रेस आज भी अपना काम उम्रदराज नेताओं के सहारे चलना चाहती है। गुजरात में हार्दिक पटेल को अध्यक्ष बनाया जाना एक अपवाद है। कांग्रेस का असल जनाधार हिंदी पट्टी में था लेकिन इस हिंदी पट्टी में अब कांग्रेस के पास ऐसा कोई नेता नहीं है जो पार्टी की नाव को पार लगा सके। दक्षिण में भी कांग्रेस का सीराजा बिखर चुका है। वहां भी जगनमोहन जैसे लड़के कांग्रेस का दामन छोड़ चुके हैं। ऐसे में क्या सम्भव है कि कांग्रेस का मौजूदा नेतृत्व 2024 में भाजपा के लिए चुनौती बन सके।

क्या निकट भविष्य में कांग्रेस गांधी परिवार के नेतृत्व को खारिज कर कोई नया नेतृत्व तलाश पाएगी? कांग्रेस की मौजूदा सुप्रीमो श्रीमती सोनिया गाँधी ने कांग्रेस को जो ऊंचाई दे सकतीं थीं दे चुकीं, उनके उत्तराधिकारी राहुल गांधी पार्टी की जितनी दुर्दशा कर सकते थे, कर चुके, लेकिन आगे क्या हो सकता है।

पिछले एक दशक में देश ने देखा है कि कांग्रेस लगातार क्षीण हुई है लेकिन नेस्तनाबूद नहीं हुई है। जब-जब लगता है कि कांग्रेस जमीदोज हो रही है तब-तब उसमें अंकुर फुट पड़ते हैं। कांग्रेस मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ़, राजस्थान और, पंजाब में मर-मारकर खड़ी हो जाती है। भाजपा की देश को कांग्रेस मुक्त करने की कवायद को किसी न किसी वजह से धक्का पहुंचता है।

भाजपा का अपना सपना है और कांग्रेस का अपना सपना। दोनों को जनता के सपनों की परवाह नहीं है जबकि जनता के सपने इन्हीं दो दलों के सपनों में कहीं न कहीं निहित हैं। मेरा मानना है कि कांग्रेस में युवा तुर्कों को पार्टी में रहकर ही मौजूदा नेतृत्व के खिलाफ सीना तानकर खड़े होना चाहिए। उन्हें दुत्कारा जा कसता है, नकारा जा सकता है लेकिन जनता को इससे उम्मीद बंधती है और मुमकिन है कि इसी के चलते कांग्रेस किसी दिन परिवारवादी नेतृत्व से मुक्त होकर एक नए रूप में देश के सामने आ जाये।

आप देख रहे होंगे कि कांग्रेस में भगदड़ के कारण भाजपा आधी कांग्रेसमय हो गयी है। कांग्रेस के बागियों को भाजपा में बड़ी आसानी से शरण मिल रही है। भाजपा के युवा तुर्कों को भी इस घालमेल के खिलाफ खड़ा होना चाहिए अन्यथा जैसे आज कांग्रेस की दुर्दशा है, कल को भाजपा की भी हो सकती है। तब भाजपा भाजपा नहीं काजपा बन सकती है, जिसका चाल, चरित्र और चेहरा बहुत कुछ कांग्रेस जैसा नजर आ सकता है। भाजपा में एक दिन आप शुद्धता खोजते रह जायेंगे।

अब बेजान प्रतिमाएं

विक्रम कीर्ति मंदिर का यह 'कीर्ति शेष बरामदा' अवश्य आनेवाली पीढ़ियों को इस असाधारण कर्मठ कलाकार की हमेशा याद दिलाता रहेगा, मूर्तियाँ मौन और मूक सिसकती रहेंगी, शिल्पकार-निमार्ता चला गया, प्रतिमाएं बेजान हो गयीं। न जाने अब कौन खोलेगा इतिहास की परतें ? डॉ0 वाकणकर विलक्षण चित्रकार भी थे। वे खड़े-खड़े मिनटों में आपका 'स्केच' बना देते, तो खुदाई में से प्राप्त प्रतिमाओं को क्षण-तत्क्षण अपने केनवास पर सजीव बना देते। उनके द्वारा निर्मित अनेक चित्र स्केच-लैंडस्केप, नक्शे भारत के अनेक पुरातत्व संग्रहालयों का गौरव बढ़ा रहे हैं। पता नहीं समय कब उन चित्रों में रंग भरेगा। मगर आज तो वे स्याह-सफेद हो गये हैं।

डॉ0 वाकणकर अपनी युवावस्था में भारतीय

खो गया है भीमबेटका का खोजी

राजशेखर व्यास

सम्राट विक्रमादित्य की ज्योर्तिमयी नगरी उज्जयिनी का एक और जाज्वल्यमान नक्षत्र, नवरत्नों का सुवर्ण-सिंहासन खाली कर चला गया, सिंहासन फिर सूना हो गया, बत्तीस पुतलियाँ रोती रह गयीं।

आधुनिक उज्जयिनी का उपवन जिन विशिष्ठ महापुरूषों से सुशोभित था, उनमें से एक थे, वि0 श्री0 वाकणकर। पद्मभूषण पं0 सूर्यनारायण व्यास और डॉ0 भगवतशरण उपाध्याय पहले ही स्वगारोहण कर गये हैं। इसी तरह एक रात अनायास असमय चुपचाप 'विदेश यात्रा' का कह कर गये डॉ0 वाकणकर भी 'अनाम देश की यात्रा' पर चले गये।

विश्वविख्यात पुरातत्ववेता, इतिहासकार डॉ0 विष्णु श्रीधर वाकणकर, भारतीय संस्कृति और इतिहास के अनन्य साधक-उपासक थे और संभवतः यही कारण था कि वे भावात्मक लगाव के कारण अनेक असमंजस के बावजूद राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के एक साधारण स्वयंसेवक बने रहे, मगर यह भी एक विचित्र विडंबना ही कही जायेगी कि उनके जैसे विलक्षण राष्ट्रभक्त, स्वतंत्रता संग्राम के सेनानी का देहावसान भी स्वदेश में न होकर विदेश में हुआ। इसलिए भी कि शायद अभी तक हमने अपने विद्वानों का सम्मान करना नहीं सीखा।

मालवा के इतिहास और पुरातत्व के जीवित 'गजेटियर' डॉ0 वाकणकर सादगी और सरलता के जीवंत प्रतीक थे विनम्र और सज्जन, मुस्कुराते हुए वाकणकर जी से जो एक बार भी मिला होगा, मैं नहीं समझता उनके अकृत्रिम स्वभाव से प्रभावित न हुआ होगा। अपनी वेशभूषा के प्रति वे लापरवाह-से थे। इतिहास और पुरातत्व के प्रति उतने ही सजग दृष्टा वे थे। उनकी पैनी नजर से कोई चीज चुकने छूटने नहीं पाती।

विक्रम विश्वविद्यालय के पुरातत्व विभाग में रहते हुए उन्होंने 'भीमबेटका' की खुदाई कर उससे प्राप्त 'मृद्पात्र' और सिक्कों तथा अवशेषों के सहारे सारी दुनिया को चमत्कृत कर दिया था, मोहनजोदड़ो, हड़प्पा और मिस्र के 'तुतन खामन' के पिरामिड़ों को विश्व की प्राचीनतम सभ्यता माननेवाले पाश्चात्य विद्वानों की नजर भी डॉ0 वाकणकर के कार्यों पर नतमस्तक हो गयी थी। संसारभर में उनकी अगाध विद्वता को सराहा गया, प्रशंसा की गयी। विश्व के अनेक विश्वविद्यालयों और विख्यात प्राच्यविदों, पुराविदों ने उन्हें ससम्मान शोधपत्र वाचन हेतु आमंत्रित किया। इससे पूर्व भी डॉ0 वाकणकर ने उज्जैन की खुदाई कर पं0 सूर्यनारायण व्यास द्वारा संस्थापित सिंधिया प्राच्य विद्या शोध प्रतिष्ठान के प्राचीन प्रतिमा संग्रहालय को असंख्य दुर्लभ प्रतिमाओं से सुशोभित किया था।

स्वतंत्रता संग्राम के अग्रगण्य सैनिकों में से एक रहे। वे एक कर्मठ क्रांतिकारी थे और गांधीवाद में उनकी कोई आस्था नहीं थी। गीता के दर्शन 'षठम् प्रति शाठ्यम समाचरेत' उनका दर्शन था। आपातकाल के पुरोधाओं ने भी उनकी विलक्षण विद्वता को सराहा सम्मान दिया। उस काल में जब शासन 'संघ' के और कार्यकताओं को मीसा में बंद कर रहा था, तब डॉ0 वाकणकर को उनकी निष्ठा और समर्पण, त्याग-विद्वता और सेवाओं के उपलक्ष्य में 'पद्मश्री' के अलंकरण से सम्मानित किया गया। हालांकि यह सत्य है कि वे उन लोगों में से नहीं थे जो पद और विश्लेषण से शोभा पाते हैं, वे तो उनमें से थे जिनसे पद और विश्लेषण ही शोभा पाते हैं।

प्राचीन और दुर्लभ स्वर्ण-रजत सिक्कों का उनके पास अक्षय भंडार था और उनकी विलक्षण स्मरणशक्ति में सारे संसार का इतिहास कालक्रम से भरा पड़ा था। उनसे मिलना इतिहास के अधखुले पन्नों को पढ़ना होता था। वे स्वयं एक जीवित विश्वकोष हो चले थे, मानो संदर्भ ग्रंथ या मानक कोष।

मेरे पूज्य पिता पं0 सूर्यनारायण व्यास के प्रति उनके मन में अगाध श्रद्धा थी। वे पारिवारिक और आत्मीयता की हद तक एक-दूसरे से जुड़े थे। पूज्य पिताजी पर उन्होंने अनेक लेख लिखे थे। प्रायः ही वे भारती-भवन हमारे आवास चले आते थे और घंटों अंतरंग चर्चा का आल्हाद वहां झलकता था। महाकाल मैदान पर 'संघ' की शाखा लगती और शीत ऋतु की ठंडी-ठंडी सुबह अक्सर जब वे हाफ पेंट पहने, डंडा हाथ में लिये घर आ जाते तो अपने बचपन में मैं इस अद्भुत व्यक्तित्व को बड़े विस्मय से

देखा करता। उन दिनों मैं लगभग 8-9 वर्ष का रहा होऊंगा, बच्चों की एक हास्य-पत्रिका का एक कार्टून पात्र उनके जैसा ही दिखता था और मैं उनके आने पर उनसे वैसा ही मजाक करता था। मगर उस विलक्षण विद्वान ने कभी मुझ अबोध बालक की हरकतों का बुरा नहीं माना। प्रायः ही वे मुझसे मेरा नाम पूछते और मैं तुतलाते हुए 'आजशेखर' कहता। तब वे स्नेह से चपत लगाते हुए कहते -- 'आज शेखर है भाई तो कल क्या होगा ?'

बड़े होने पर तो शनैः शनैः उनके सानिध्य का निरंतर अवसर मिला और विश्वास बढ़ता ही गया, निकटता आती ही गई। पूज्य पिताजी उन पर सर्वाधिक गर्व करते थे और क्यों न करें उन्होंने सम्राट विक्रम के काल निर्धारण की उनकी शोध धारणाओं को सप्रमाण कृत काल गणना के संदर्भों में कृत संवत का स्वर्ण सिक्का प्राप्त कर संपुष्ट जो कर दिया था। इससे पहले पाश्चात्य-मति के भारतीय विद्वानों ने विक्रम समस्या को बड़ा उलझा रखा था - विक्रम हुआ भी या नहीं, कहां जन्मा, या कितने राजा विक्रम कहलाये-कब जनमें ? ऐसे निर्भीक प्रश्नों से विद्वान प्रमाण न होने से परेशान थे। पं. व्यास और डॉ0 वाकणकर की शोध ऐसे सारे विद्वानों का मुंहतोड उत्तर हुआ करती थी।

पं0 व्यास से आशीर्वाद और प्रेरणा लेकर उन्होंने भी भारती-भवन जैसा कला संग्रहालय भारती-कला उज्जयिनी में सुस्थापित किया था। आज भी मध्यप्रदेश की यह सर्वाधिक गतिमान संस्था कला, साहित्य, इतिहास, पुरातत्व का घर बनी हुई है। शायद ही मध्यप्रदेश में कहीं इतना बड़ा व्यक्तिगत संग्रहालय और किसी का हो। डॉ0 वाकणकर ने चित्रकला, इतिहास और पुरातत्व में अपने अनेक शिष्य तैयार किये थे। डॉ0 विष्णु भटनागर, श्रीकृष्ण जोशी, सुरेंद्र आर्य, डॉ0 श्यामसुन्दर निगम, डॉ0 भगवती लाल

कोरोना के खिलाफ संघर्ष एक -दो दिन का नहीं, एक -दो साल का है, जब तक कोई प्रामाणिक दवा बाजार में नहीं आ जाती तब तक इस महामारी से हिकमत अमली से ही निबटना होगा। यदि ग्वालियर के रणछोड़दासों की तरह दूसरे चिकित्सक भी भागने लगे तो फिर हो गयी जनसेवा।

राजपुरोहित, प्रमोद गणपत्ये जैसे अनेक सामर्थ्यवान, प्रतिभावान विद्वान उन्हीं की परंपरा के हैं तो कला जगत में चंद्रशेखर काले, बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' जैसे अनेक जाने-माने नाम उनकी प्रेरणा पाकर आगे आये हैं।

सारे संसार में अपने पुरातत्व ज्ञान और शोध अनुसंधान के लिए सराहे गये, डॉ0 वाकणकर की यह विडम्बना ही रही कि वे अपने शहर में अजनबी से रहे, उपेक्षित और विश्वविद्यालय द्वारा अपमानित भी।

विक्रम विश्वविद्यालय जिसने हजारों चापलूस राजनेताओं और सैकड़ों छुटभैये साहित्यकारों को 'डॉक्टरेट' की उपाधियाँ चाट-पकौड़े की तरह बाँटी। डॉ0 वाकणकर को इस योग्य नहीं समझा और उन्हें बाकायदा एम.ए., पी.एच.डी. करने के बाद ही उनके नाम के साथ डाक्टरेट शब्द जुड़ा। उत्तरप्रदेश से आये एक शोमेन के शासन में तो डॉ0 भगवतशरण उपाध्याय और डॉ0 वाकणकर के साथ बहुत निम्न स्तरीय व्यवहार किया गया, जिसे लेकर वे अंत तक दुखी भी रहे। फिर भी वे अपने एक-एक क्षण का सदुपयोग करने में लगे रहे।

वह अथक खोजीः

'लुप्त सरस्वती नदी' की खोज में वे अपनी अस्वस्थता में भी लगे रहते थे। दंगवाड़ा की खुदाई में तो वे मरते-मरते बचे, मगर उन्होंने अपने स्वास्थ्य और जीवन की कभी परवाह भी नहीं की।

'पद्मश्री' मिलने पर जब हम लोगों ने उनका सम्मान किया था तो बड़े विकल मन से उन्होंने एक मालवी कविता सुनायी थी -

'म्हारे भाटो समझी ने
फेंकी मत दीजो
हूं नरा काम की चीज हूं।'

-मुझे पत्थर समझकर कर फेंक मत देना, मैं बडे काम का हूं! हजारों मौन-मूक प्रतिमाओं से रोजाना ही उनका साक्षात्कार इतिहास की भूली-बिसरी कितनी ही कहानियां होती है। हमारे विस्मृत उज्जवल अतीत के इतिहास को ज्योतिर्मान करने वाले डा0 वाकणकर के लिए क्या कभी हम कुछ कर पाएगें? जिस उज्जयिनी ने पं0 सू. ना. व्यास, डॉ भगवतशरण उपाध्याय को ही भूला दिया। वह वाकणकर जी को क्यों याद कर पाएगी ?

निस्संदेह विक्रम और वाकणकर जी की उज्जयिनी सांदीपनी और सूर्यनारायण व्यास की उज्जयिनी, फिर से विधवा हो गयी है। पता नहीं 'परभोगी मालवा के भाग्य में यह वेधव्य रुदन ही लिखा है? अब कोई दूसरा वाकणकर यहां नहीं जनमेगा!

कटे बाघ का सिर देखकर इंदिरा जी दहल गईं! फिर ऐसा कड़ा कानून बनाया कि...

जयराम शुक्ल

चीन भले ही अपने काल्पनिक/भुतहे ड्रैगन (अजदहा) को लेकर इतराता रहे लेकिन हम वास्तव में 'टाइगर नेशन' हैं। विश्व बाघ दिवस की पूर्व संध्या पर केन्द्रीय वन एवं पर्यावरण मंत्री प्रकाश जावडेकर ने भारत में बाघों को लेकर जानकारी साझा की है, जिसके अनुसार भारत में बाघों की संख्या बढ़कर 2963 पहुँच गई जो विश्व की 70 प्रतिशत है। यह आँकड़े 2018 की बाघ गणना के निष्कर्ष हैं।

वर्ष 2000 से 2014 का अंतराल बाघों की सुरक्षा की दृष्टि से बेहद संकट पूर्ण रहा। 2006 बाघों की संख्या घटकर 1411 हो गई थी।

यह वही दौर था जब राजस्थान के सरिस्का और मध्यप्रदेश का पन्ना टाइगर रिजर्व बाघ विहीन हो चुका था। पन्ना टाइगर रिजर्व में तो 2009 में बाघों का पुनर्वास किया गया। पन्ना की यह घटना वन्यजीव जगत की अनोखी है, जहां कैपटिव टाइगर को वाइल्ड बनाया गया। आज पन्ना टाइगर इसकी बड़ी दिलचस्प कहानी है, अलग से सुनने सुनाने लायक।

बहरहाल 2014 से बाघ संरक्षण कार्यक्रम ने गति पकड़ा तब 2226 बाघ थे जो चार वर्ष में बढ़कर 2967 हो गए। अब स्थिति यह कि बाघों के लिए जंगल का दायरा ही छोटा पड़ने लगा। बाघों की संख्या 6 प्रतिशत के मान से बढ़ रही है इसके मद्देनजर सरकार को कुछ और टाइगर रिजर्व बनाने की योजना पर विचार करना पड़ रहा है।

बाँधवगढ़ नेशनल पार्क व टाइगर रिजर्व को विश्व की सबसे घनी बाघ आबादी का गौरव बरकरार है। नेशनल जियाग्रफी और डिस्कवरी में दिखने वाला हर दूसरा बाघ यही का है। बाँधवगढ नेशनल पार्क की कोर एरिया और बफर में बाघों की संख्या बढ़कर 124 हो गई है।

इधर 2010 तक बाघ विहीन रहे संजय नेशनल पार्क में भी अब 12 से 14 बाघ बताए जाते हैं। इसका एक बड़ा हिस्सा अब छत्तीसगढ़ में गुरुघासीदास नेशनल पार्क के नाम पर है और वहां भी बाघों की अच्छी खासी आबादी बढ़ चुकी है।

कान्हा-बाँधवगढ़-पन्ना और संजय नेशनल पार्क में बाघों का कारीडोर प्रस्तावित है लेकिन जरूरत इन्हें तत्काल जोड़ने की है नहीं तो बाघों की बढ़ती आबादी से जल्दी ही एक नया संघर्ष शुरू होने वाला है। जंगल में टेरीटरी बनाने के लिए और गाँवों को उस दायरे में शामिल करने के लिए।

भारत में बाघकथा बड़ी दर्दनाक रही है। सबसे पहले मुगलों ने बाघों के शिकार की परंपरा को नबावी बनाया। फिर अँग्रेजों ने इसे खेल में बदलते हुए गेम सेंचुरी का नाम दे दिया। यह गेम सेंचुरी देसी राजे रजवाड़ों के प्रबंधन में शुरू हुई।

आजादी के पहले तक भारत में गेम सेंचुरी का कारोबार 445 करोड़ रु. सालाने का था। विदेशों की टूर एवं ट्रेवेल एजेंसियां इसे संचालित करती थी।

राजाओं, इलाकेदारों के लिए यह व्यवसाय की भाँति था। ये शिकार अभियानों के साथ ही बाघ के शिरों की ट्राफी और उसकी खाल, नाखून व हड्डियों का व्यापार करते थे।

यह सिलसिला 1972 तक चलता रहा जबतक कि वन्यसंरक्षण कानून अस्तित्व में नहीं आया। शिकार के इसी सिलसिले ने भारत के जंगलों से चीता का वंशनाश कर दिया।

एक बाघ के कटे हुए सिर ने इंदिरा गाँधी को इतना विचलित कर दिया कि जब वे प्रधानमंत्री बनीं तो वन्यजीवों के शिकार के खिलाफ कड़ा कानून बनाया। यह घटना बेहद मर्मस्पर्शी है और इसका एक सिरा रीवा से जुड़ा है इसलिए जानना जरूरी है।

पंडित नेहरू को रीवा के महाराज ने एक जवान बाघ के सिर की रक्त रंजित ट्राफी और खाल भेंट की..तो उसे देखकर इंदिरा जी का दिल दहल गया.. आँखों में आँसू आ गए.. काश यह आज जंगल में दहाड़ रहा होता..। राजीव गाँधी को लिखे अपने एक पत्र में इंदिरा जी ने यह मार्मिक ब्योरा दिया है।

प्रधानमंत्री बनने के बाद इंदिरा जी ने वाइल्ड लाइफ प्रोटेक्शन एक्ट समेत वन से जुड़े सभी कड़े कानून संसद से पास करवाए। राष्ट्रीय उद्यान, टाइगर रिजर्व, व अभयारण्य एक के बाद एक अधिसूचित करवाए। आज वन व वन्यजीव जो कुछ भी बचे हैं वह इंदिरा जी के महान संकल्प का परिणाम है।

इंदिरा जी का वो मार्मिक पत्र

'हमें तोहफे में एक बड़े बाघ की खाल मिली है. रीवा के महाराजा ने केवल दो महीने पहले इस बाघ का शिकार किया था. खाल, बॉलरूम में पड़ी है. जितनी बार मैं वहां से गुजरती हूं, मुझे गहरी उदासी महसूस होती है. मुझे लगता है कि यहां पड़े होने की जगह यह जंगल में घूम और दहाड़ रहा होता. हमारे बाघ बहुत सुंदर प्राणी हैं....'

-इंदिरा गांधी

(राजीव गांधी को 7 सितंबर 1956 को लिखे पत्र के अंश)

इंदिरा जी ने वन्यजीव संरक्षण कानून 1972 बनाया। इसके बाद जब जंगलों का ही नाश होने लगा तो वन संरक्षण कानून 1980 आया।

2002 में वन्य संरक्षण कानून इतना कड़ा कर दिया गया कि आदमी की हत्या से कोई मुजरिम बच भी सकता है लेकिन शिड्यूल्ड प्राणियों की हत्या के आरोपी की जिंदगी जेल में ही कटेगी।

नेशनल पार्कों व टाइगर रिजर्व की परियोजनाओं का विस्तार के पीछे भी इंदिरा जी की ही सोच थी। आज देश में 50 से ज्यादा टाइगर रिजर्व हैं।

नेशनल क्राइम ब्यूरों की तर्जपर वन्यप्राणियों के प्रति अपराध रोकने के ब्यूरो और कानून बने। आप कल्पना कर सकते हैं कि यदि वन्यप्राणियों के संरक्षण के प्रति इंदिरा जी ने ऐसी दृढ़ इच्छाशक्ति न दिखाई होती तो आज हमारे जंगल चीतों की भाँति बाघों से भी विहीन होते।

2010 तक बाघ विहीन रहे संजय नेशनल पार्क में भी अब 12 से 14 बाघ बताए जाते हैं। इसका एक बड़ा हिस्सा अब छत्तीसगढ़ में गुरुघासीदास नेशनल पार्क के नाम पर है और वहां भी बाघों की अच्छी खासी आबादी बढ़ चुकी है। कान्हा-बाँधवगढ़-पन्ना और संजय नेशनल पार्क में बाघों का कारीडोर प्रस्तावित है लेकिन जरूरत इन्हें तत्काल जोड़ने की है नहीं तो बाघों की बढ़ती आबादी से जल्दी ही एक नया संघर्ष शुरू होने वाला है।

बाघ हमारी संस्कृति के अटूट हिस्से हैं। वे दैवीय हैं और ईश्वर के अवतारी। इन्हें भौतिकवादी प्रगतिशीलों ने कभी इस नजरिए से नहीं देखा। बाघ सनातन से हमारी आस्थाओं में हैं। इसलिए बाघों के प्रति मेरा नजरिया वन्यप्रेमी, प्राणिशास्त्री से अलग हटकर है।

अपन को जब भी मौका मिलता है जंगल निकल लेता हूँ। जंगल प्रकृति की पाठशाला है, हर बार कुछ न कुछ सीख मिलती है। जानवर, पेंड़-पौधे, नदी, झरने सभी शिक्षक हैं, बशर्ते उन्हें ध्यान से देखिए, सुनिए समझिए। ये सब उस विराट संस्कृति के हिस्से हैं जो सनातन से चलती चली आ रही है। ये सह अस्तित्व के प्रादर्श थे कभी।

जब से सत्ता व्यवस्था शुरू हुई तभी से जंगल में संघर्ष की स्थिति बनी। समूचा वैदिक वांगमय जंगल में ही रचा गया। इसलिए पशु-पक्षियों की बात कौन करे पेड़-पौधे, नदी, पहाड़, झरने सभी जीवंत पात्र हैं। पुराण कथाओं में वे संवाद भी करते हैं।

रामायण, रघुवंश, अभिग्यान शाकुंतलम और भी कई ग्रंथों ने अरण्यसंस्कृति को स्थापित किया। इसके समानांतर एक लोकसंस्कृति की भी धारा फूटी जिसके अवशेष अभी भी वनवासियों के बीच देखने को मिलती है। इस बार के जंगल प्रवास में यही सबकुछ देखा और अंतस से महसूस भी किया।

सात साल पहले ..कहानी सफेद बाघ की..पुस्तक की सामग्री जुटाने के तारतम्य में जंगल से जो रिश्ता बना वो साल दर साल गाढा होता गया।

एकांत क्षणों में मैं महसूस करता हूँ कि जंगल मुझे बुला रहा है। जब वहां जाता हूँ तो हर जगह देखकर ऐसा लगता है कि ...हो न हो यह मेरा देखा हुआ..। मेरा ही क्यों हर किसी का यहाँ से जन्म जन्मांतर का रिश्ता है। जरूरत है श्रवणग्राहिता और दृष्टिक्षमता की।

सुनने और देखने का तरीका ही हमारी संवेदनाओं का सूचकांक है। जंगलों में पशु पक्षियों के शिकार वाल्मीकि और सिद्धार्थ से पहले भी होते रहे हैं। संवेदना ने वाल्मीकि को आदि कवि बना दिया और सिद्धार्थ को भगवान गौतमबुद्ध।

ईश्वर ने आँख और कान सबको इन्हीं जैसे दिए हैं फिर भी कोटि वर्षों में कोई वाल्मीकि, कोई गौतमबुद्ध पैदा होता है। इसीलिए जंगल प्रकृति की ऐसी

पाठशाला हैं जहाँ पढकर मनुष्य भी ईश्वर समतुल्य बनकर निकलता है।

बाणभट्ट ने कादंबरी में जिस विन्ध्याटवी का वर्णन किया है। वही विन्ध्याटवी सफेद बाघों का प्राकृतिक पयार्वास है। इतिहासवेत्ता और वनस्पतिशास्त्री इस क्षेत्र को बाँधवगढ, संजय नेशनल पार्क के साथ वर्णन जोड़ते हैं।

मेरे अध्ययन व भ्रमण का क्षेत्र भी यही रहा। सफेद बाघ मोहन जिसकी संतानें आज दुनियाभर के अजायबघरों में मौजूद हैं, संजय नेशनल पार्क के बस्तुआ बीट के बरगड़ी के जंगल से पकड़ा गया था। इस जंगल में अभी भी पचास से ज्यादा वन्यग्राम हैं। वहां अब सभ्यता पहुंच गई, बिजली, मोबाइल, जैसी चीजें, फिर भी वनों की लोकसंस्कृति के अवशेष देखने को मिल जाते हैं।

पिछले प्रवास में एक घर के भित्तिचित्र ने ध्यान खींचा था, जिसमें हाथी बाघ से हाथ मिलाते हुए चित्रित था। उस घर के मालिक वनवासी भाई से पूछा तो उसके लिए बस यूं ही ऐसी कलाकारी थी, जो उसके पुरखे के जमाने से चलती चली आ रही है।

इस बीच संदर्भ के लिए ..प्रो.बेकर की पुस्तक.. बघेलखंड द टाईगर लेयर..पढने को मिली। तो पता चला कि विन्ध्य के जंगल कभी हाथियों की घनी आबादी के लिए जाने जाते थे।

यहां के राजा का हाथियों के बेचने का कारोबार था। सीधी जिले के जिस मडवास रेंज के वन्यग्राम में वो भित्तिचित्र देखा उसी मड़वास के हाथियों के बारे में ..रीवा राज्य का इतिहास..के लेखक गुरू रामप्यारे अग्नीहोत्री ने लिखा कि -"एक बार राजा ने यहां से 30 हाथी पकड़वाए इसके बाद वे यह भूल गए कि इनका करना क्या है परिणाम यह हुआ की तीसों हाथी भूख से तड़प के मर गए थे।" यानी इस जंगल में हाथी और बाघ सहअस्तित्व के साथ रहा करते थे।

भित्तिचित्र का संदेश भी दोनों की दोस्ती की कथा बताता था। इसी क्षेत्र में सात सफेद बाघों के मारे जाने का रिकॉर्ड बॉम्बे जूलाजिकल सोसाइटी की जंगल बुक में दर्ज है।

रीमाराज्य की तीन पीढी के राजाओं ने अपने हिस्से के जंगल में तीस साल के भीतर 2 हजार बाघ मारे थे। सरगुजा के राजा के नाम से तो 17 सौ बाघों को मारने का विश्व रेकार्ड कायम है। इन्होंने भी इसी समयकाल में शिकार किए।

सात साल पहले मैं जब इस जंगल में गया था तब एक भी बाघ नहीं थे। हाथी तो इतिहास की बात हैं।

इस बार जंगल प्रवास में एक वन्यग्राम के घर में बने भित्तिचित्र ने फिर ध्यान खींचा। गोबर से लीपी हुई भीत पर कोयले के रंग से एक बाघ उसके सामने एक गाय और बीच में बछडे.का चित्र था।

यह चकरा देने वाला मामला था। हाथी की दोस्ती तो चलो बराबरी की, पर इस गाय की भला बाघ के सामने क्या बिसात..? पूर्व की भाँति इस बार भी मकान मालिक का जवाब वही-पुरखों के समय से ऐसे ही

भारत में बाघकथा बड़ी दर्दनाक रही है। सबसे पहले मुगलों ने बाघों के शिकार की परंपरा को नबावी बनाया। फिर अँग्रेजों ने इसे खेल में बदलते हुए गेम सेंचुरी का नाम दे दिया। यह गेम सेंचुरी देसी राजे रजवाड़ों के प्रबंधन में शुरू हुई। आजादी के पहले तक भारत में गेम सेंचुरी का कारोबार 445 करोड़ सालाने का था। विदेशों की टूर एजेंसियां इसे संचालित करती थी।

कुछ न कुछ उरेहते आए हैं।

मेरे स्मृति पटल में कालिदास के रघुवंश की वह कथा आ गई जिसमें राजा दिलीप बाघ से यह निवेदन करते हैं कि गाय की जगह वह उन्हें अपना शिकार बना ले। पर इस भित्तिचित्र के साथ इस कथा का कोई तारतम्य जमा नहीं।

उधेड़बुन में माताजी का बहुला चौथ उपवास और वो ब्रतकथा याद आ गई। एक बार वह ब्रतकथा मुझे सुनानी पड़ी थी, क्योंकि पंडित नहीं आए थे।

संक्षेप में कथा कुछ इस तरह थी- जंगल चरने गई गाय से बाघ का सामना हो गया। बाघ शिकार करने ही वाला था कि गाय ने उससे विनती शुरू कर दी, बोली- आज मुझे मत खाओ, घर में मेरा बछड़ा भूखा इंतजार कर रहा होगा, मैं जाकर उसे अपना दूध पिला आऊं फिर मुझे खा लेना।

बाघ बोला-तू मुझे बुद्धू बना रही है, क्या गारंटी कि तू लौटके आएगी ही। कातर स्वर से गाय बोली- भैय्या मैं अपने बछडे. की कसम खाती हूँ उसे दूध पिलाने के बाद पल भर भी नहीं रुकूंगी, मेरा विश्वास मानो भैय्या। गाय के मुँह से भैय्या का शब्द बाघ के अंतस को छू गया, फिर भी बाघ तो बाघ। गाय ने फिर अश्रुपूरित स्वरों में कहा-आप जंगल के राजा जब आप ही मेरी बात का विश्वास नहीं करेंगे तो फिर क्या कहें, अब आपकी मर्जी।

इस बार बाघ कुछ पसीजा बोला- जा बछडे.को दूध पिला आ, पर लौटके आना जरूर। गाय जंगल से भागती, रँभाती गांव पहुंची। बछडे.से कहा चल जल्दी दूध पी ले।

बछडे. को संदेह हुआ कि कुछ न कुछ बात जरूर है। वह बोला- माँ ..मेरी कसम, पहले सच सच बताओ क्या बात है तभी थन में मुँह लगाऊंगा। गाय ने बाघ वाली पूरी बात बता दी।

बछडे.ने कहा- चिंता की कोई बात नहीं माँ कल सुबह मैं तुम्हारे साथ चलूंगा। कैसे भी रात बीती। पूरे गांव को गाय और बाघ की बात पता चल गई। वचन से बँधी गाय बाघ की मांद की ओर लंबे डग भरते हुए चल दी। बछड़ा आगे आगे।

बाघ ने दूर से देखा कि गाय तय वक्त से पहले ही आ रही है। जाकर गाय बाघ के सामने स्वयं को शिकार के रूप में प्रस्तुत किया। बछड़ा चौकड़ी भरता बीच में आ गया। बोला- बाघ मामा मुझे खा लो माँ को छोड़ दो, माँ बची रही तो आपके लिए मेरे जैसे शिकार पैदा करती रहेगी।

बाघ यह सुनकर सन्न रह गया। उसकी आँखों आँसू आ गए, गाय से बोला-जा बहना जा, भाँन्जे का ख्याल रखना। बाघ ने अभयदान दे दिया। इधर समूचा गांव ताके बैठा था कि क्या होगा..।

गोधूली बेला में जंगल से बछड़े के साथ सही सलामत आती गाय को देखकर सभी की जान में जान आई। घरों में चना जैसे कच्चे अन्न से गाँव वालों का उपवास टूटा।

तभी से बहुला चौथ की ब्रत अपनी परंपरा में आया, जिसमें माँ, बहने अपने भाई के कुशलमंगल के लिए यह ब्रत रखती हैं। गाय बाघ के कुशलमंगल और दीघार्यु के लिए ब्रत रखे..विश्व के किसी विचार दर्शन और कथानक में इसकी कल्पना नहीं की जा सकती।

यह है हमारी अरण्यसंस्कृति, हमारी लोकधारा जो जंगल से वन्यजीवों के बीच से फूटती है। वन्यजीव सरकारी सप्ताह के आयोजनों से नहीं बचेंगे।

हमारी संस्कृति और परंपरा ही बचा सकती है इन्हें। जंगल को सुनने व देखने की श्रवणग्राहिता और दृष्टिक्षमता लानी होगी और वह जंगल के सरकारी कानूनों से नहीं आने वाली।

संपर्क : 8225812813

राकेश अचल

विक्रम हमें माफ कर देना

गाजियाबाद के पत्रकार विक्रम जोशी ने जैरे इलाज अस्पताल में दम तोड़ दिया, अपनी भानजी से छेड़छाड़ का विरोध करने पर बदमाशों ने उनके ऊपर बीती रात जानलेवा हमला किया था। विक्रम पर जब हमला हुआ और उन्हें गोली मारी गयी तब उनके साथ उनकी दो बेटियां भी थी, अब ये बेटियां ताउम्र इस बात के लिए अफसोस करेंगी कि उनके पिता गाजियाबाद में क्यों रह रहे थे, क्या वे नहीं जानते थे की यूपी में उस महात्मा का राज है, जहां की पहचान अब अराजकता बन चुकी है।

तीन दिन पहले आरोपी युवकों ने उनकी भांजी पर अश्लील फब्तियां कसी थी, जिसको लेकर मारपीट भी हुई थी। भांजी के साथ हुई छेड़छाड़ की घटना की बाबत रिपोर्ट विजय नगर थाने में दर्ज कराई थी, जिसके बाद से उपरोक्त घटनाक्रम में आरोपी युवक लगातार धमकी दे रहे थे। मुकदमा होने के 3 दिन बाद तक उनके खिलाफ पुलिस द्वारा कोई भी कार्यवाही नहीं की गई। इसी का नतीजा था कि उन्होंने विक्रम को घेरकर गोली मार दी।विक्रम भूल गए थे कि यूपी की पुलिस गुंडों के हाथों से जब अपनी पुलिस के जवानों को मरने से नहीं बच सकती तो उन्हें आखिर किस मुंह से बचाती ? पुलिस उनके हत्यारों को विजय दुबे की तरह मुठभेड़ में भी नहीं मार गिरा सकती क्योंकि गुंडों ने पुलिसकर्मियों की नहीं बल्कि एक पत्रकार की हत्या की है।

कलम के सिपाही विक्रम की हत्या के बाद यूपी की बहादुर पुलिस ने उनकी हत्या के आरोपियों को पकड़ कर अपनी कथित कर्तव्यनिष्ठा का परिचय दिया है लेकिन इस वारदात से यूपी की सरकार और पुलिस के दामन पर अराजकता का जो कलंक लगा है उसके बारे में अब बाकी लोगों को सोचना चाहिए। विक्रम की अकाल मौत से उनका परिवार अनाथ हो गया है। मुमकिन है कि यूपी के उदारमना मुख्यमंत्री हमेशा की तरह मृतक के परिजनों को मुख्यमंत्री आवास पर बुलाकर उनके सर पर सांत्वना का हाथ भी रखें और कुछ नगद इमदाद भी दे दें लेकिन ये भी सूबे में दिनोंदिन बढ़ रही अराजकता की आग को कम नहीं कर पायेगा, ये आग तो लगातार बढ़ रही है। बदमाश सरेआम अपना काम कर रहे हैं। यूपी में ही बलात्कार के एक आरोपी ने फरियादी लड़की और उसकी माँ को ट्रेक्टर से कुचल कर मार दिया।

चूंकि मेरी जन्मभूमि यूपी है इसलिए मै इस सूबे को लेकर हमेशा संवेदनशील रहता हूँ। मुझे अब लगने लगा है कि यूपी में राम राज दरअसल वक्त से पहले आ गया। यूपी के राम राज (योगी राज) में शिकार और शिकारी एक घाट पर हैं। शिकारी अभय हैं और शिकार भयाक्रांत। मुख्यमंत्री को किसी की चिंता नहीं है, वे अयोध्या में राममंदिर के शिलान्यास की तैयारियों में व्यस्त हैं। वे तो कोरोनाकाल में भी इतने व्यस्त थे कि अपने पिता की अंत्येष्टि में भी शामिल नहीं हुए थे तो वे विक्रम की मौत से आहत क्यों होंगे, वे तो योगी हैं और योगी सुख-दुःख से ऊपर होते हैं। उनके ऊपर दैहिक, दैविक आपदाओं का कोई असर नहीं होता।

विक्रम की हत्या की जांच की जरूरत ही नहीं है क्योंकि पुलिस ने उनकी हत्या के आरोपियों को पकड़ लिया है, चौकी प्रभारी को निलंबित कर दिया है। इसलिए पत्रकारों को खामोश बैठना चाहिए और सूबे में 5 अगस्त को राम मंदिर के शिलान्यास समारोह में आ रहे प्रधानमंत्री के स्वागत की तैयारी करना चाहिए।

हमारे अनेक पत्रकार मित्र योगी के अनन्य भक्त हैं और मुमकिन है कि वे इसी भक्तिभाव के कारण विक्रम की मौत के लिए यूपी की सरकार, मुख्यमंत्री, और पुलिस को दोषी न मानें। उनके लिए विक्रम की मौत कानून और व्यवस्था का साधारण सा मामला हो इसलिए वे कोई आंदोलन भी न करें लेकिन मै इस हत्या के लिए यूपी के प्रथम परुष को ही जिम्मेदार मानता हूँ। मेरी भगवान से प्रार्थना है कि वो सूबे की जनता को इस अराजकता से बचाये, क्योंकि यूपी में सरकार को नाथने वाला न विपक्ष है और न मीडिया। सब शीतनिद्रा में हैं।

रिवायत के तहत यूपी में कांग्रेस की जड़ें सींच रहीं श्रीमती प्रियंका गांधी ने और आप के संजय सिंह के अलावा दूसरे नेताओं ने विक्रम की मौत को लेकर ट्वीट कर दिए हैं। लेकिन इन ट्विटर मास्टरों को नहीं पता की विरोध सड़कों पर किया जाना चाहिए, ट्वीट करने से कुछ नहीं होता जैसा की हमारे लेख लिखने से कुछ होने वाला नहीं है। हम अपना गुस्सा थूक रहे हैं और विक्रम से माफी चाहते हैं कि हम उनकी शहादत का न बदला ले सकते हैं और न उनके खून की शहादत को बेकार जाने का भरोसा दिला सकते हैं, क्योंकि हम भी विक्रम की तरह असुरक्षित हैं। यूपी में कभी भी, किसी भी दूसरे विक्रम को गोली मारी जा सकती है, क्योंकि यहां वक्त से पहले राम राज आ चुका है। विक्रम की हत्या की जांच की जरूरत ही नहीं है क्योंकि पुलिस ने उनकी हत्या के आरोपियों को पकड़ लिया है, चौकी प्रभारी को निलंबित कर दिया है। इसलिए पत्रकारों को खामोश बैठना चाहिए और सूबे में 5 अगस्त को राम मंदिर के शिलान्यास समारोह में आ रहे प्रधानमंत्री के स्वागत की तैयारी करना चाहिए।

अजय कुमार

अब योगी सरकार के खिलाफ फूटा भाजपा सांसद जय प्रकाश का गुस्सा

उत्तर प्रदेश की योगी सरकार के खिलाफ एक-एक कर पार्टी विधायक/सांसद खुलकर सामने आते जा रहे गए हैं। हरदोई के गोपामऊ से विधायक श्याम प्रकाश के बाद अब हरदोई सुरक्षित संसदीय क्षेत्र के सांसद जय प्रकाश रावत ने अपनी बेबसी जता दी है। सोशल मीडिया पर जय प्रकाश रावत ने अपना दर्द बयां किया है। सासंद जय प्रकाश रावत ने लिखा है कि 30 वर्ष से राजनीति में हैं, लेकिन ऐसी बेबसी नहीं देखी है। सांसद ने फेसबुक पर अपनी भड़ास निकाली और लिखा कि हमको कौन सुनता है। 30 वर्ष की राजनीति में और अपनी ही पार्टी के कार्यकाल में ऐसी बेबसी नहीं देखी है।

हरदोई से भाजपा सांसद जय प्रकाश ने भी फेसबुक पर अपने मन की व्यथा व्यक्त की है, उन्होंने लिखा कि जब से ऊपर से आदेश हो गया कि अधिकारी अपने विवेक से काम करें, तो हमको कौन सुनेगा। हमने तो 30 वर्ष के कार्यकाल में ऐसी बेबसी कभी महसूस नहीं की। प्रदेश में तो एमपी-एमएलए की कोई सुनने वाला नहीं है। दरअसल सांसद के समर्थकों ने कोरोना संक्रमण से बचाने के लिए सांसद की निधि से जिला अस्पताल में वेंटीलेटर खरीदने की बात फेस बुक पर लिखी थी। सांसद जयप्रकाश रावत ने फेसबुक पर अधिकारियों के खिलाफ खिन्नता जाहिर की है।

वैसे योगी सरकार के खिलाफ नाराजगी का यह पहला मामला नहीं है। कुछ माह पूर्व लखनऊ की मोहनलालगंज सीट से सांसद कौशल किशोर ने लखनऊ के एसएसपी के कार्यप्रणाली पर हमला करते हुऐ अपनी फेसबुक वाल पर लिखा है कि ह्यपुलिस के नकारात्मक रवैये के चलते अपराधी निरंकुश हो गये हैं। दिसंबर 19 में विधायकों की ऐसी ही नाराजगी विधान सभा में सामने आई थी। उत्तर प्रदेश विधानसभा में तब एक दुर्लभ नजारा देखने को मिला जब अपने एक सहयोगी का समर्थन करते हुए भाजपा विधायक अपनी ही सरकार के खिलाफ धरने पर बैठ गए थे। भाजपा के एक विधायक विधानसभा में अपने उत्पीड़न का मुद्दा उठाना चाहते थे लेकिन उन्हें सदन में बोलने की अनुमति नहीं दी गई थी।तब गाजियाबाद स्थित लोनी के विधायक नंद किशोर गुर्जर ने आरोप लगाया कि सरकार के अधिकारी उनका उत्पीड़न कर रहे हैं और उन्होंने मांग की कि उन्हें सदन में पेश किया जाए। इस दौरान बड़ी संख्या में भाजपा विधायकों के साथ समाजवादी पार्टी और कांग्रेस के विधायकों ने भी गुर्जर की बात सुने जाने की मांग की। सपा और कांग्रेस के विधायक गुर्जर के लिए न्याय की मांग करते हुए वेल में आ गए थे।

हरदोई से भाजपा सांसद जय प्रकाश ने भी फेसबुक पर अपने मन की व्यथा व्यक्त की है, उन्होंने लिखा कि जब से ऊपर से आदेश हो गया कि अधिकारी अपने विवेक से काम करें, तो हमको कौन सुनेगा। हमने तो 30 वर्ष के कार्यकाल में ऐसी बेबसी कभी महसूस नहीं की। प्रदेश में तो एमपी-एमएलए की कोई सुनने वाला नहीं है।

विधानसभा की कार्रवाई कई बार रोके जाने के बाद स्पीकर ने कार्यवाही को एक दिन के लिए स्थगित कर दिया क्योंकि सत्ताधारी भाजपा के विधायकों के साथ विपक्ष भी लगातार गुर्जर की बात सुने की मांग कर रहा था।

गुर्जर का आरोप था कि उनकी जिंदगी खतरे में है और वे विधानसभा में अपनी प्रताड़ना का मुद्दा उठाना चाहते हैं. इसके बावजूद जब स्पीकर विधानसभा की कार्यवाही को आगे बढ़ाने जा रहे थे तब सुहेलदेव भारतीय समाज पार्टी (एसबीएसपी) प्रमुख ओम प्रकाश राजभर ने कहा कि गुर्जर को अपना मुद्दा उठाने का अवसर दिया जाना चाहिए. हालांकि, भाजपा के पूर्व गठबंधन सहयोगी राजभर से खन्ना ने कहा कि यह उनकी पार्टी का मामला है और वे इसे संभाल लेंगे।

इस मामले पर पूर्व मुख्यमंत्री अखिलेश यादव ने ट्वीट कर कहा था, 'उत्तर प्रदेश विधानसभा से हमें अजीब खबर मिल रही है कि भाजपा के एक विधायक शोषण को लेकर भाजपा सरकार के खिलाफ 200 अन्य विधायकों के साथ धरने पर बैठ गए हैं और अन्य विधायकों ने भी विरोध का समर्थन किया है। मुख्यमंत्री के शासन के दौरान उनके ही विधायक नाखुश हैं।

सूत्रों के अनुसार उत्पीड़न को लेकर सदन में आवाज उठाने वाले गुर्जर कई बार अफसरों के खिलाफ मोर्चा खोलते रहे थे, इस बार वह अपने और समर्थकों के खिलाफ मारपीट और जान से मारने की धमकी का मामला दर्ज होने से नाराज थे। विधायक अफसरों की शिकायत को लेकर कई बार मुख्यमंत्री को भी पत्र लिख चुके थे. विधायक का आरोप था कि इन पत्रों के बावजूद अफसरों पर कोई कार्रवाई नहीं हुई थी।

बीते दिसंबर की ही बात है। गुजरात के सूरत में आयोजित एक कार्यक्रम में जौनपुर की बदलापुर सीट से निर्वाचित भाजपा विधायक रमेश मिश्र ने आरोप लगाया था कि आईपीएस-आईएएस

भ्रष्टाचार की पराकाष्ठा हैं। इसी लिए समाज में हर कोई अपने बच्चे को नेता न बना कर आईएएस-आईपीएस बनाना चाहता है। हाल ही में बरेली की कैंट सीट से भाजपा विधायक डॉ अरुण सिन्हा ने योगी सरकार पर हमलावर होते हुए कहा था कि अफसरशाही की जो लूट इस सरकार में देख रहा हूँ वैसा सोचा भी नहीं था। हम सत्ताधारी दल के विधायक हैं फिर भी हमें यह कुबूल करने में कोई हिचकिचाहट नहीं है कि मैं कोई काम नहीं करवा पा रहा हूँ। मेरी सरकार में ऊपर मेरी बात नहीं सुनी जा रही है।

उन्होंने कहा कि मेरी तरह और भी विधायक हैं जिनकी बात सरकार में नहीं सुनी जा रही है। यदि अफसरों से नाराजगी का आंकड़ा इकट्ठा करेंगे तो पता चलेगा कि जब से प्रदेश में भाजपा की सरकार बनी है शायद ही कोई ऐसा जिला होगा जंहा भाजपा सांसद, विधायक और उनके नेताओं की स्थानीय प्रशासन से सामंजस्य बिल्कुल ठीक रहा होगा। इसी सरकार में बस्ती जिले में भाजपा के सांसद और विधायकों पर उस समय मुकदमा पंजीकृत हुआ जब किसी मांग को लेकर ये लोग धरना दे रहे थे। विधायक जी यहीं नहीं रूके उन्होंने कहा फिलहाल जिस सरकार में मंत्री रो रहा हो कि मेरे पास कुछ करने का अधिकार नहीं है, विभागीय प्रमुख सचिव सुनता ही नहीं, तो हमारी क्या हैसियत है। हद तो तब हो गई जब ममता विभागीय प्रमुख सचिवों से परेशान कई संघी पृष्टभूमि के मंत्रियों ने मुख्यमंत्री से नौकरशाहों की शिकायत किया तो उन्होंने टका का जवाब दिया कि अभी इन्हीं से काम चलाओ फिर देखेंगे। इस तरह से काम कर रही है योगी सरकार।

लब्बोलुआब यह है कि योगी ने शपथ ग्रहण करते समय ही यह कह दिया था कि हमारा कोई नेता-कार्यकर्ता, थाना-चैकी या किसी अधिकारी के पास सिफारिश के लिए नहीं जाएगा। इसी का फायदा ब्यूरोक्रेसी, पुलिस अधिकारी और शासन-प्रशासन उठा रहा हैं। हालात यह है कि शासन-प्रशासन विपक्ष के नेताओं से भी कम तरजीह भाजपा के चुने हुए नुमांइदों को दे रहे हैं। अगर कोई भाजपाई किसी अधिकारी के खिलाफ मुंह खोलते हुए अपना पक्ष रखता है तो उसे योगी का 'फरमान' याद दिला दिया जाता है।

योगी ने शपथ ग्रहण करते समय ही यह कह दिया था कि हमारा कोई नेता-कार्यकर्ता, थाना-चैकी या किसी अधिकारी के पास सिफारिश के लिए नहीं जाएगा। इसी का फायदा ब्यूरोक्रेसी, पुलिस अधिकारी और शासन-प्रशासन उठा रहा हैं। हालात यह है कि शासन-प्रशासन विपक्ष के नेताओं से भी कम तरजीह भाजपा के चुने हुए नुमांइदों को दे रहे हैं। अगर कोई भाजपाई किसी अधिकारी के खिलाफ मुंह खोलते हुए अपना पक्ष रखता है तो उसे योगी का 'फरमान' याद दिला दिया जाता है।

कब होगा नगा मसले का स्थायी समाधान ?

दिनकर कुमार

महामारी ने भारत में स्वास्थ्य और शिक्षा के क्षेत्र में विनाशकारी अभाव को उजागर करके रख दिया है। यह सरकार की लंबी उपेक्षा और बढ़ते निजीकरण और व्यावसायीकरण का प्रमाण है। डूटा ने सरकार से शिक्षा को रौंद देने वाले बदलावों से बाज आने की मांग करते हुए कहा कि हमारे देश के लिए इसके गंभीर नतीजे होंगे।

नगालैंड आधी सदी से अधिक समय से हिंसक संघर्ष में उलझा हुआ है, और प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी एशिया में सबसे लंबे समय तक चलने वाले नगा सशस्त्र विद्रोहियों के साथ सम्झौता कर इस मसले का स्थायी हल करना चाहते हैं, जिसमें हजारों लोग मारे गए हैं। भारत सरकार ने 2015 में विवाद को हल करने की दिशा में अपना पहला कदम उठाते हुए 2015 में नगा राष्ट्रवादी समूह नेशनल सोशलिस्ट काउंसिल ऑफ नगालिम - इसाक-मुइवा (एनएससीएन-आईएम) के साथ एक फ्रेमवर्क समझौता किया। समझौते में से एक प्रावधान के तहत भारत के भीतर नगा लोगों को "विशेष दर्जा" देने की बात कही गई।

अगस्त 2019 में मोदी ने वातार्कार और नगालैंड के वर्तमान गवर्नर आर एन रवि को एनएससीएन-आईएम के साथ वार्ता समाप्त करने और तीन महीने के भीतर संघर्ष को समाप्त करने के लिए एक अंतिम समझौते पर हस्ताक्षर करने के लिए कहा।

एक वर्ष बीत चुका है, और संघर्ष के खत्म होने के आसार नजर नहीं आ रहे है। इस वर्ष जुलाई में तनाव बढ़ गया जब भारतीय सेना और अर्धसैनिक बलों ने हथियारों के व्यापार और गोला-बारूद को निशाना बनाते हुए, अरुणाचल प्रदेश और नगालैंड में एनएससीएन-आईएम के विद्रोहियों पर शिकंजा कसना शुरू कर दिया।

एक सरकारी अधिकारी ने कहा कि गवर्नर रवि एनएससीएन-आईएम के धन के स्रोतों पर हमला करके बातचीत की मेज पर मजबूर करना

चाहते हैं। समझौते को अंतिम रूप देने में नगा नेताओं ने बार-बार बातचीत में देरी की है।

नई दिल्ली के इंस्टीट्यूट ऑफ पीस एंड कनफ्लिक्ट स्टडीज के एक शोधकर्ता अंगशुमान चौधरी ने कहा, "एनएससीएन एक अलग नगा ध्वज और मान्यता प्राप्त संविधान की अपनी मांग पर अडिग है, जो कि सरकार के लिए स्वीकार करना कठिन है।"

भारत की आजादी से पहले नगालैंड संघर्ष की उत्पत्ति का पता लगाया जा सकता है। पूर्वोत्तर भारत के कई राज्यों और म्यांमार के कुछ हिस्सों में नगा जनजातियाँ फैली हुई हैं। उन्होंने अंग्रेजों के भारत छोड़ने से पहले अपनी स्वतंत्रता की घोषणा की, लेकिन 1947 में उन्हें जबरदस्ती भारत के गणतंत्र में आत्मसात कर लिया गया।

गौरतलब है कि 1955 में नगा मसला जटिल हो गया था जब भारत सरकार ने नगा राष्ट्रीय परिषद (एनएनसी) को निशाना बनाया था, जो पहला संगठित नगा राजनीतिक संगठन था, जिसके अधिकांश नेता भूमिगत हो गए थे। एनएनसी का हिस्सा अंततः दो गुटों में विभाजित हो गया - एनएससीएन-आईएम और एनएससीएन-खापलांग। भारत सरकार ने नए विभाजन का लाभ उठाया।

एनएससीएन-आईएम के साथ बातचीत जटिल बनी हुई है, क्योंकि नगा अपने पैतृक घरानों के एकीकरण की मांग कर रहे हैं, जिसमें असम, मणिपुर और अरुणाचल प्रदेश के भूखंड शामिल हैं। तीनों राज्यों ने नगाओं को जमीन देने से इनकार कर दिया है।

नगालैंड की राजधानी कोहिमा में स्थित एक वकील ने कहा कि नगा जनजाति एक समाधान चाहती है "लेकिन नगा राष्ट्रीय इतिहास को दफनाने की कीमत पर नहीं।"

"हम ब्रिटेन और स्कॉटलैंड की तरह एक व्यवस्था पसंद करेंगे," उन्होंने कहा।

विरोधी राज्यपाल रवि की आलोचना इस बात के लिए कर रहे हैं कि वह मसले का राजनीतिक हल ढूंढने के बजाय "कानून प्रवर्तन मुद्दे" की तरह नगालैंड समस्या के साथ पेश आ रहे हैं।

पत्रकार सुबीर भौमिक ने कहा, "रवि एक पुलिसकर्मी है जो केवल कानून और व्यवस्था को समझते है और उसी लेंस के माध्यम से सब कुछ देखते है।"

भौमिक ने कहा कि सरकार ने 2015 में एनएससीएन-आईएम के साथ एक फ्रेमवर्क समझौते पर हस्ताक्षर नहीं किया होता "यदि नगालैंड मसला कानून और व्यवस्था का मुद्दा था।" पत्रकार के अनुसार, नगा लोगों के इतिहास और पहचान के बारे में गलतफहमी के कारण बातचीत में रुकावट आती है।

केंद्र नगालैंड को "अशांत क्षेत्र" के रूप

विरोधी राज्यपाल रवि की आलोचना इस बात के लिए कर रहे हैं कि वह मसले का राजनीतिक हल ढूंढने के बजाय 'कानून प्रवर्तन मुद्दे' की तरह नगालैंड समस्या के साथ पेश आ रहे हैं।

''शांति प्रक्रिया (ढांचा समझौता) अभी भी चल रही है और समझौते के पीछे क्या है कोई नहीं जानता। किसी भी समाधान की बात सामने नहीं आ रही है जबकि इसके 5 साल बीत चुके हैं''।

एच.के. झिमोमी, अध्यक्ष, नगा होहो

में देखता है और राज्य को एक सशस्त्र सशस्त्र बल विशेष अधिकार अधिनियम के तहत रखा है। यह अधिनियम सेना को व्यापक शक्तियों का विस्तार करता है, जिसमें बिना वारंट के बल और गिरफ्तारी का उपयोग शामिल है।

दूसरी तरफ नगाओं के शीर्ष आदिवासी निकाय नगा होहो ने प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी को एक पत्र लिखा है जिसमें राज्य के विभिन्न अनसुलझे मुद्दों की चर्चा की गई है। पत्र में उन्होंने जिन प्रमुख मुद्दों को उठाया है वे हैं--2015 में हस्ताक्षरित फ्रेमवर्क समझौता, नगालैंड को फिर से अशांत क्षेत्र घोषित किया जाना और राज्यपाल आर एन रवि की भूमिका जो नगालैंड मुद्दे में वाताकार भी हैं।

नगा होहो के अध्यक्ष एच.के. झिमोमी ने कहा, "शांति प्रक्रिया (ढांचा समझौता) अभी भी चल रही है और समझौते के पीछे क्या है कोई नहीं जानता। किसी भी समाधान की बात सामने नहीं आ रही है जबकि इसके 5 साल बीत चुके हैं''।

नागालैंड को अशांत क्षेत्र घोषित किए जाने के मुद्दे पर झिमोमी ने कहा, "इसलिए हमने पीएम मोदी को पत्र लिखा है। ऐसे समय में जब वे शांति बहाल करने की कोशिश कर रहे हैं, अफस्पा का क्या मतलब है?"

हाल ही में नगालैंड खबरों में रहा है जब आयुक्त और सचिव द्वारा राज्य में सरकारी कर्मचारियों के नगा भूमिगत समूहों में शामिल रिश्तेदारों के विवरण के लिए एक पत्र भेजा गया था। इससे पहले नगालैंड के मुख्यमंत्री नीफिउ रियो ने कहा कि राज्य सरकार राज्यपाल आर एन रवि के साथ "भूमिगत समूहों के रिश्तेदारों के सरकारी अधिकारियों के प्रोफाइलिंग" के मुद्दे पर संघर्ष या मतभेद नहीं बढ़ाना चाहती है। झिमोमी ने कहा कि ''इससे राज्य में राज्यपाल की भूमिका बढ़ गई है क्योंकि आर एन रवि राज्य सरकार को निर्देशित करने की कोशिश कर रहे हैं। हमें राज्यपाल की मंशा पर संदेह है। जब एक निर्वाचित सरकार होती है, लोकतंत्र के अनुसार, राज्यपाल कमांडर नहीं होता है क्योंकि वह कैबिनेट की सलाह पर काम करता है। हां, विशेष पूर्व संशोधन के तहत राज्यपाल कुछ शक्तियों का प्रयोग कर सकते हैं, लेकिन वह इसे समग्र रूप से नहीं मानते हैं। अभी वह राज्य सरकार को निर्देश दे रहे है। क्या यह संसदीय लोकतंत्र है?'', झिमोमी ने कहा।

राज्य सरकार के वर्तमान कामकाज के मुद्दे पर झिमोमी ने कहा, "हम यह भी पूछ रहे हैं कि क्या राज्य सरकार राज्यपाल के साथ संयुक्त शासन चला रही है? क्योंकि ऐसा लगता है कि राज्यपाल नौकरशाही को निर्देशित कर रहे हैं। नगालैंड की तुलना दिल्ली से नहीं की जा सकती है क्योंकि दिल्ली केंद्र शासित प्रदेश है, जबकि नागालैंड एक पूर्ण विकसित राज्य है''।

संपर्क: 9435103755

विनोद दुआ के खिलाफ मामला

कोई धारणा बनाने से पहले इस महानायक को जान भी लीजिए

उन दिनों चुनाव परिणाम हाथ से मतपत्रों की गिनती के बाद घोषित किए जाते थे। रात दिन दूरदर्शन पर खास प्रसारण चलता था। विनोद दुआ और डॉक्टर प्रणव रॉय की जोड़ी इन चुनाव परिणामों और रुझानों का चुटीले अंदाज में विश्लेषण करती थी। कांग्रेसी नेताओं की जमकर बखिया उधेड़ती तो बीजेपी के नेता भी पानी माँगते थे। कम्युनिस्ट दलों के प्रति भी उतनी ही निर्मम रहती थी।

राजेश बादल

इन दिनों विनोद दुआ के खिलाफ भारतीय जनता पार्टी के एक प्रवक्ता की ओर से दर्ज कराई गई प्राथमिकी की चर्चा है। आरोप है कि अपनी तल्ख और बेबाक टिप्पणियों से उन्होंने इस पार्टी के नियंताओं को जानबूझ कर परेशान किया है। किसी भी सभ्य लोकतंत्र में असहमति के सुरों को दण्डित करने की इस साजिश की अनुमति क्यों दी जानी चाहिए। इस मामले के बाद उनके बारे में मनगढंत कथाओं की बाढ़ आ सी आ गई है। इस कारण मुझे यह टिप्पणी लिखने पर मजबूर होना पड़ा है। मैं मामले का पोस्ट मार्टम नहीं करना चाहता। अलबत्ता यह कह सकता हूँ कि इस तरह के षड्यंत्र केवल परेशान करने के लिए ही रचे जाते हैं। उनका कोई सिर - पैर नहीं होता। समय के साथ वे कपूर की तरह उड़ जाते हैं। मानसिक उत्पीड़न का यह सिलसिला यकीनन परेशान करता है। छोटे परदे पर उपलब्धियों का कीर्तिमान रचने वाले विनोद दुआ को अपने ही मुल्क में सम्मान की जगह संत्रास दिया जा रहा है-इसके लिए आने वाली नस्लें हमें माफ नहीं करेंगी। वैसे भी हम भारतीय किसी बेजोड़ शख़्सियत के योगदान का उसके जीते जी मूल्यांकन नहीं करने के लिए कुख्यात हैं। जब वह नहीं रहता तब हमें उसके काम याद आते हैं।

दो दिन से उनके बारे में क्या क्या नहीं कहा गया। वे कांग्रेसी हैं, वामपंथी हैं। अव्वल तो वे न कांग्रेसी हैं और न वामपंथी हैं। वैसे अगर होते भी तो बहुदलीय लोकतंत्र में यह कोई अपराध नहीं है। कहा गया कि उन्होंने अनाप शनाप दौलत अनुचित तरीकों से कमाई है। भारत की जिम्मेदार जाँच एजेंसियों के लिए यह खुली चुनौती हो सकती है। हमने तो फटेहाल नेताओं को पार्टी के सत्ता में आते ही घर भरते देखा है। इन पार्टियों के राज नेताओं की अनेक अंतर कथाएँ मय सुबूतों के पिछले तैंतालीस बरस की पत्रकारिता में मेरे सामने आती रही हैं। उन पर आज तक ऊँगली नहीं उठाई गई। चालीस बरस तक देश की राजधानी में प्रथम श्रेणी के प्रसारक, प्रस्तोता और पत्रकार रहे ईमानदार भारतीय की जेब टटोलने वालों को अपने गिरेबान में भी झाँकना चाहिए। पहले उनके विरुद्ध मी टू अभियान चलाकर चरित्र हनन करके उनकी जबान पर ताला डालने की कोशिश की गई। वह भी फुस्स हो गया। अब इस तरह के मामलों से उन्हें परेशान करने का कुचक्र चलाया जा रहा है लेकिन यहाँ आरोप - प्रत्यारोप की अदालत लगाकर मैं नहीं बैठा हूँ। मैं सिर्फ यह बताना चाहता हूँ कि विनोद दुआ क्या हैं?

इस देश में टेलिविजन ने 1959 में दस्तक दी। लेकिन सही मायनों में उसे अस्सी के दशक में पंख लगे। जाहिर है अकेला सरकारी दूरदर्शन था तो उसने उस जमाने में पक्ष और प्रतिपक्ष, दोनों की सशक्त भूमिका निभाई। आज तो यह सत्ता का प्रवक्ता बनकर रह गया है। इसीलिए संसार का सबसे बड़ा नेटवर्क होते हुए भी स्वतंत्र पहचान के लिए छटपटा रहा है। मगर उस दौर का डीडी ऐसा नहीं था। एक बेहद लोकप्रिय शो जनवाणी आया करता था। उसके कर्त्ता -धर्ता विनोद दुआ ही थे। सरकार कांग्रेस की थी। उस कार्यक्रम में सरकार के मंत्रियों की ऐसी खबर ली जाती थी कि उनकी बोलती बंद हो जाती। अनेक दिग्गज मंत्रियों ने प्रधानमंत्री से शिकायत की कि विनोद दुआ तो संघी हैं। विपक्ष की तरह व्यवहार करते हैं। सरकार के दूरदर्शन पर यह नहीं दिखाया जाना चाहिए। प्रधानमंत्री ने उन्हें ठंडा पानी पिलाकर चलता किया। उनसे कहा कि पहले अपना घर ठीक करो। फिर शिकायत लेकर आना। एक उदाहरण ही काफी होगा। इन दिनों राजस्थान के मुख्यमंत्री किसी जमाने में देश के नागरिक उड्डयन मंत्री होते थे। एक बार वे जनवाणी में आए।उनका इस साक्षात्कार में इतना दयनीय प्रदर्शन था कि उन्हें पद से हटा दिया गया। आज भी निजी मुलाकात में अगर परख का ज़िकर आ जाए तो वे यह घटना सुनाना नहीं भूलते।

उन दिनों चुनाव परिणाम हाथ से मतपत्रों की गिनती के बाद घोषित किए जाते थे। इस प्रक्रिया में दो -तीन दिन लग जाते थे। रात दिन दूरदर्शन पर खास प्रसारण चलता था। विनोद दुआ और डॉक्टर प्रणव रॉय की जोड़ी इन चुनाव परिणामों और रुझानों का चुटीले अंदाज में विश्लेषण करती थी। यह जोड़ी सार्थक और सकारात्मक पत्रकारिता करती थी। कांग्रेसी नेताओं की जमकर बखिया उधेड़ती तो बीजेपी के नेता भी पानी माँगते थे। कम्युनिस्ट दलों के प्रति भी उतनी ही निर्मम रहती थी। इसके बावजूद राजीव गांधी से लेकर अटल बिहारी वाजपेयी, लाल कृष्ण आडवाणी, सिकंदर बख़्त, कुशाभाऊ ठाकरे, इंद्रजीत गुप्त, बसंत साठे, अर्जुनसिंह, शरद पंवार, मधु दंडवते, बाल ठाकरे, जॉर्ज फर्नांडिस और ज्योति बसु जैसे धुरंधर इन दोनों के मुरीद थे।

लोगों को याद है कि 1989 और 1991के चुनाव में राजीव गांधी, वीपी सिंह और चंद्रशेखर की आलोचना तिलमिलाने वाली होती थी। कभी उन पर किसी दल विशेष का पक्ष लेने या विरोध करने का आरोप नहीं लगा। नरसिंह राव सरकार बनी तो विनोद दुआ को साप्ताहिक समाचार पत्रिका परख की जिम्मेदारी सौंपी गई। मैं स्वयं पहले एपिसोड से आखिरी एपिसोड तक परख की टीम में था। परख में उन दिनों संवाद उप शीर्षक से एक खंड होता था। इसमें भी देश के शिखर नेताओं और अलग अलग क्षेत्रों के विशेषज्ञों के साक्षात्कार होते थे। कई बार इस कार्यक्रम में मंत्रियों के लगभग रोने की स्थिति बन जाती। उनके पास अपने मंत्रालयों की ही पुख़्ता जानकारी नहीं होती थी। उन्होंने भी प्रधानमंत्री से विनोद दुआ की शिकायत की।कहा कि विनोद दुआ भाजपाई हैं, हिंदूवादी हैं। नरसिंह राव ने भी उन्हें वही उत्तर दिया, जो राजीव गांधी ने दिया था।उन्होंने कहा कि अपना काम और मंत्रालय का काम सुधारिए।

परख की एक रिपोर्ट मैंने गुजरात जाकर सरदार सरोवर की ऊंचाई के मुद्दे पर की थी। उन दिनों विद्याचरण शुक्ल जैसे तेज तर्रार मंत्री प्रधानमंत्री के खास थे। उनके पास जल संसाधन विभाग था। उन तक पहले ही खबर पहुँच गई कि परख में ऐसी रिपोर्ट दिखाई जा रही है, जिससे विभाग की उलझन बढ़ जाएगी। उन्होंने एड़ी चोटी का जोर लगा दिया, लेकिन मेरी वह रिपोर्ट नहीं रोक पाए। बाद में उस रिपोर्ट से संसद में बड़ा हंगामा हुआ। खुद विद्याचरण शुक्ल ने मुझे बरसों बाद यह बात बताई। इसी तरह उनदिनों मध्यप्रदेश में डायन बताकर महिलाओं की हत्या करने के अनेक मामले आए। कांग्रेस सरकार थी। दिग्विजय सिंह मुख्यमंत्री थे। इस रिपोर्ट को रुकवाने के खूब प्रयास हुए। पर नाकाम रहे। जब रिपोर्ट प्रसारित हुई तो केंद्रीय गृह मंत्रालय ने राज्य सरकार को फटकार लगाई। विनोद दुआ के कार्यक्रम पर कोई असर नहीं पड़ा। मैंने एक रिपोर्ट महाराष्ट्र के जलगाँव से की थी। एक सेक्स स्केंडल हुआ था। उसमें राजनेता भी शामिल थे। उस रिपोर्ट का प्रसारण रुकवाने के जमकर प्रयास हुए लेकिन किसी की नहीं चली। परख की कामयाबी के बाद सरकार ने विनोद दुआ को न्यूज वेब नामक दैनिक बुलेटिन सौंपा। भारत का यह पहला निजी बुलेटिन था। इसके भी पहले से लेकर अंतिम बुलेटिन तक विनोद दुआ के साथ मैंने काम किया। क्या धारदार बुलेटिन था। सरकारें काँपती थीं।विनोद दुआ ने पत्रकारिता की निर्भीकता और निष्पक्षता से कभी समझौता नहीं किया। न्यूजवेब के साथ बाद में ब्यूरोक्रेसी ने कुछ कारोबारी शर्तें रखीं। विनोद नहीं झुके और बुलेटिन की चंद महीनों में ही हत्या हो गई।

छोटे परदे पर उपलब्धियों का कीर्तिमान रचने वाले विनोद दुआ को अपने ही मुल्क में सम्मान की जगह संत्रास दिया जा रहा है-इसके लिए आने वाली नस्लें हमें माफ नहीं करेंगी। वैसे भी हम भारतीय किसी बेजोड़ शख़्सियत के योगदान का उसके जीते जी मूल्यांकन नहीं करने के लिए कुख्यात हैं। जब वह नहीं रहता तब हमें उसके काम याद आते हैं।

इसके बाद भी विनोद दुआ की पारी स्वाभिमान और सरोकारों वाली पत्रकारिता की रही है।दशकों से एनडीटीवी के डॉक्टर प्रणव रॉय के वे खास दोस्त थे। एनडीटीवी पर अपना खास बुलेटिन करते थे। इसके अलावा जायके का सफर भी उनकी बड़ी चर्चित श्रृंखला थी। उसमें भी उन्होंने अपने पत्रकारिता धर्म से कोई समझौता नहीं किया। एक रात कुछ बात हुई और एक झटके में विनोद ने एनडीटीवी को सलाम बोल दिया। न्यूजट्रैक, ऑब्जर्वर न्यूज चैनल और सहारा चैनल से भी उन्होंने कुछ ऐसे ही अंदाज में विदाई ली। पत्रकारिता के मूल्यों को उन्होंने कभी नहीं छोड़ा, लाखों की नौकरियां पल भर में छोड़ ते रहे।

कम लोग यह जानते हैं कि इण्डिया टीवी के सर्वेसर्वा रजत शर्मा ने विनोद दुआ के नेतृत्व में ही टीवी की पारी शुरू की थी। टीवी का ककहरा रजत शर्मा ने परख में ही सीखा था। वे पंजाब और हरियाणा से रिपोर्टिंग करते थे और मैं मध्यप्रदेश (उन दिनों छत्तीसगढ़ नहीं बना था) महाराष्ट्र, गुजरात और उत्तरप्रदेश से रिपोर्टिंग करता था। आज जो लोग विरोध कर रहे हैं, वे रजत शर्मा से विनोद दुआ की पत्रकारिता के बारे में पूछ सकते हैं। जाने माने पत्रकार और संपादक रहे दिलीप पडगांवकर आज इस दुनिया में नहीं हैं मगर उन्होंने भी विनोद दुआ के दफ़्तर में बैठकर टीवी की बुनियादी बातें जानी थीं। बाद में उन्होंने अपनी टीवी कंपनी बनाई, जिसने दूरदर्शन पर लोकप्रिय सुबह सवेरे कार्यक्रम प्रारंभ किया था। यह भी लोग नहीं जानते कि परख की टीम में संघ और बीजेपी की नब्ज समझने वाले विजय त्रिवेदी शामिल थे तो वामपंथ की ओर झुके मुकेशकुमार भी थे। लेकिन पत्रकारिता के दरम्यान कभी वैचारिक प्रतिबद्धताएँ आड़े नहीं आईं।

अंत में बता दूँ कि खाने-पीने के शौकीन विनोद दुआ बहुत अच्छे गायक भी हैं। पुरानी फिल्मों के गीत जब वे और उनकी दक्षिण भारतीय डॉक्टर पत्नी डूबकर गाते हैं तो सुनने वाले दंग रह जाते हैं। यह पीड़ादायक है कि अपने ही देश में पत्रकारिता के इस महानायक के साथ यह बरताव हो रहा है। विनोद दुआ यूरोप या पश्चिम के किसी देश में होते तो देवता की तरह पूजे जाते। जैसे कि कार्टूनिस्ट आर के लक्ष्मण को संसार भर के कार्टूनिस्ट एक देवता जैसा मानते हैं और अपने देश में ही लक्ष्मण गुमनामी में खोये रहे और इस संसार से विदा हो गए। लेकिन हम भारतीय इतने कृतघ्न हैं कि अपने इन हस्ताक्षरों का उपकार मानना तो दूर, उन्हें व्यर्थ के विवादों में उलझाते हैं। किसी को उत्तर देना है तो विनोद दुआ के आँकड़ों और जानकारी को झूठा साबित करके बताए। इससे अधिक मैं क्या कहूँ।

संपर्क : 9910068399

हर्षवर्धन पाण्डे

संजय द्विवेदी होने के मायने

मीडिया के लिए क्यों खास हैं आईआईएमसी के नए महानिदेशक?

बादशाह तो मैं कहीं का भी बन सकता हूँ
पर तेरे दिल की नगरी में हुकूमत का मजा कुछ और है

देश के जाने-माने पत्रकार एवं ख्याति प्राप्त मीडिया शिक्षक प्रो. संजय द्विवेदी को अखिल भारतीय जनसंचार संस्थान का महानिदेशक बनाये जाने का समाचार उमस में ठंडी हवा के झोंके जैसा बेहद सुखद है। अभी महीने पहले उनको माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता एवं संचार विश्वविद्यालय भोपाल का प्रभारी कुलपति नियुक्त किया गया है। इससे पहले वे दो बार विश्वविद्यालय के कुलसचिव की जिम्मेदारी का निर्वहन कर चुके हैं।

बहुमुखी प्रतिभा के धनी, सरस्वती के उपासक, मीडिया शिक्षण को अपनी पुस्तकों और शोध पत्रों के माध्यम से नई दिशा देने वाले संजय के आई आई एम सी में महानिदेशक बनाये जाने के फैसले की हर तरफ सराहना हो रही है। अखिल भारतीय जनसंचार संस्थान (आई आई एम सी) देश का प्रतिष्ठित मीडिया संस्थान है जो सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय के अंतर्गत काम करता है और बेहद कम समय में महानिदेशक के पद पर पर पहुँचकर संजय ने एक नया मुकाम हासिल किया है।

उत्तर प्रदेश के बस्ती जिले के एक मध्यमवर्गीय परिवार से ताल्लुक रखने वाले संजय बचपन से लेखन में सक्रिय रहे हैं और अपने आसपास घटित होने वाली घटनाओं पर अपने नाम के अनुरूप दिव्य दृष्टि कलम के माध्यम से देते रहे हैं। उनके पिता परमात्मानाथ द्विवेदी अपने दौर के कुशल शिक्षक और लेखक रहे हैं। संजय बस्ती के सुशिक्षित और सुसंस्कृत संपन्न परिवार से हैं जिस कारण अनुशासन और सुसंस्कारों के धनी उनके पिता के सभी संस्कार संजय में देखे जा सकते हैं। शिक्षण और लेखन में जिस एकाग्रता की जरुरत होती है, वह संजय को अपने पिता से प्राप्त हुई। उसी एकाग्रता ने संजय को लेखन और पत्रकारिता में अपनी पूंजी को बटोरने में समर्थवान बनाया। होनहार बिरवान के होत चिकने पात को सही मायनों में उन्होंने बचपन में ही साबित कर दिया, तब बालसुमन जैसी कई पत्रिकाओं का संपादन उन्होंने खुद के बूते कर दिखाया। इंटर की पढाई अपने गृह जनपद में पूर्ण करने के बाद स्नातक की पढाई लखनऊ विश्वविद्यालय से पूरी करने के बाद वह भोपाल के माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता विवि पहुँचते हैं जहाँ उनके पत्रकारिता के सपने को नई उड़ान मिलती है। यहीं रहते हुए सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, बाबूराव विष्णु पराड़कर, माधव राव सप्रे और माखनलाल चतुर्वेदी को पढ़ते पढ़ते वे उनके लेखन के मुरीद बन गए। भोपाल से पत्रकारिता का प्रशिक्षण लेकर वह दिल्ली, मुंबई, बिलासपुर, रायपुर जा पहुचे और अपनी कलम के जरिये समाज से जुड़े मुद्दों को आवाज देते रहे।

संजय जिस संस्थान में भी गए उसे अपने काम और मेहनत के बूते स्थपित करने में कोई कसर नहीं छोड़ी। छत्तीसगढ़ में स्वदेश को जमाने में उनकी भूमिका अहम रही वहीँ रायपुर में हरिभूमि और दैनिक भास्कर को बड़ा ब्रांड बनाने में उनके योगदान को कोई भूल नहीं सकता।

रायपुर में जी 24 घंटे राज्य के पहले सेटेलाइट समाचार चैनल को भी पहले पायदान पर काबिज कराने में परदे के पीछे उनकी बड़ी भूमिका रही। देश की आर्थिक राजधानी मुंबई में भी अपनी पत्रकारिता की धमक दिखाई। टीवी न्यूज चैनल की इस पारी के बाद उन्होंने अकादमिक दुनिया में कदम रखा। बिलासपुर में गुरु घासीदास विवि में अतिथि शिक्षक की नई बदली हुई भूमिका में नजर आये। कुशाभाऊ ठाकरे विवि रायपुर में पत्रकारिता विभाग को न केवल अपने प्रयासों से स्थापित किया बल्कि वहां कुछ समय संस्थापक विभागाध्यक्ष के तौर पर भी काम किया जिसके बाद 2009 में उनका आगमन एशिया के एकमात्र पत्रकारिता विश्वविद्यालय में होता है जिसे देश में पत्रकारिता का बड़ा देवालय कहा जाता है। माखनलाल पत्रकारिता विवि में आने पर संजय जनसंचार विभागाध्यक्ष बनाये जाते हैं। दस बरस विभागाध्यक्ष के बाद वे कार्यवाहक कुलसचिव की भूमिका में नजर आते हैं। उसके बाद कुलसचिव की पूर्ण भूमिका में उनका नया अवतार होता है। मध्य प्रदेश में कांग्रेस की कमलनाथ सरकार के आने के बाद उनको कुलसचिव की कुर्सी से हाथ धोना पड़ा। साथ ही उनके कई करीबियों को भोपाल से दूर कर दिया गया जिसके बाद भी वह विरोधियों के प्रति सदाशयता दिखाने से पीछे नहीं हटे। कर्मों में कुशाग्रता, सकारात्मक व्यवहार, मन में निश्चलता और हृदय में एकाग्रता, विनम्रता, स्पष्टवादी हंसमुख स्वभाव सहित तमाम नीति निपुणता उनकी विशेषता को सुन्दर बनाती है और यही अलहदा पहचान संजय को अन्य प्रोफेसरों से अलग करती है।

संजय के लेखन में सत्यनिष्ठता, ईमानदारी और भारतीय विचारधारा का विलक्षण समन्वय है। विनम्रता का भाव उनमें पूरी प्रतिष्ठा रखता है। माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता विश्वविद्यालय भोपाल में कुलपति के शीर्ष पद पर पहुँचने के बाद भी उनमें जरा सा भी घमंड नहीं आया है। वह अपने गुरुजनों, विद्यार्थियों और सहकर्मियों के साथ आज भी बड़ा आदरभाव रखते हैं और हर किसी से गर्मजोशी के साथ मिलते हैं।एक राजनीतिक विश्लेषक के तौर पर उन्होंने दशकों से राजनीतिक विश्लेषण और लेखन किया और हर विषय पर खुलकर लिखकर अपनी बात रखी। उनको राजनीती के हर खेमे से तारीफ ही तारीफ मिली। संजय को चाहने वाले आज हर राजनीतिक दल में मौजूद हैं जिनके साथ उनके घनिष्ठ सम्बन्ध आज तक बने हुए हैं। संजय ने जहाँ जहाँ नौकरी की वहां उन्होंने अपने काम और व्यवहार से अपने आसपास चाहने वाले प्रशंसकों की बड़ी फौज खड़ी कर ली और सबका दिल जीत लिया। संजय एक दशक से भी अधिक समय तक अपने हजारों भाषाई नवयुवक पत्रकारों की भारी फौज तैयार कर चुके हैं। सबसे बड़ी बात यह है वो आज की युवा पीढ़ी के लिए किसी रोल माडल से कम नहीं हैं। उन्होंने अपने छात्रों को एक ही मंत्र दिया है खूब पढ़ो और खूब लिखो। संजय अपने पत्रकारिता विभाग के विद्यार्थियों को हमेशा सच के साथ खड़े होने के गुर सिखाते हैं। साथ ही अपनी संवेदनाओं से समाज को देखने का नया नजरिया विकसित करने पर जोर देते हैं। वो मानते हैं मीडिया को मूल्यानुगत होना चाहिए। वो पत्रकारिता की पढाई को डिग्री लेने का माध्यम भर नहीं, समाज के दुःख दर्द को संबल प्रदान करने वाला बेहतरीन

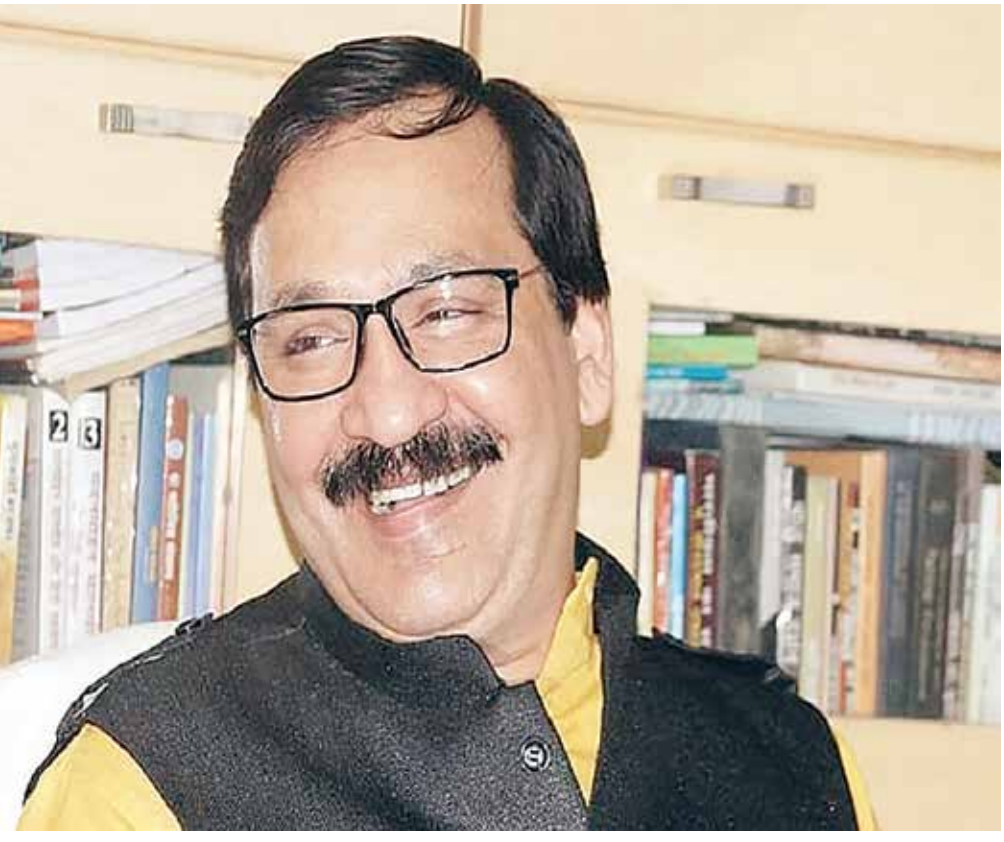

जरिया मानते हैं। सूचनाओं के साथ वर्तमान दौर की मिलावट को वो पत्रकारिता के भविष्य के लिए ठीक नहीं मानते। एजेंडा आधारित पत्रकारिता के बजाय वह मूल्य और तथ्य आधारित पत्रकारिता पर बल देने की बात दोहराते रहे हैं।

समाज के लोग संजय द्विवेदी को आज एक प्रतिबद्ध शिक्षक, एक कुशल प्रशासक, विद्वान शिक्षाविद, भारतीय चिन्तक, गहन मनीषी के रूप में जानते हैं तो इसका कारण उनका लेखन है जिसने सामाजिक जीवन के व्यवहारिक पक्षों को अपनी लेखनी के माध्यम से नया स्वर दिया है। हमें उनसे शिक्षा प्राप्त करने का अवसर तो नहीं मिला लेकिन उनके विशाल वटवृक्ष के नीचे जो भी आया उसे देश, दुनिया और समाज की बेहतर समझ हो जाती है। संजय कभी भी सिस्टम के गुलाम नहीं रहे हैं। आमतौर पर यह कहा जाता है आज के दौर में गाइड जहाँ शोधार्थियों को परेशान करते हैं और अपने निजी काम उनके मार्फत करवाते हैं वहीँ शोध निर्देशन की भूमिका में वह शोधार्थियों के लिए हमेशा सहयोगी बने रहे हैं। ऐसा उनके साथ शोध करने वाले लोग बताते हैं।

संजय की संवाद शैली उन्हें एक कुशल संचारक बनाती है। वह जब बोलते हैं तो आपको अपनी चिर परिचित मुस्कान के साथ मंत्रमुग्ध कर

जिस इंसान ने वास्तव में सत्यमेव जयते शब्द को अपने जीवन में अपना लिया हो और वह इन वाक्यों को ब्रह्मवाक्य समझकर जीवन में आगे बढ़ता है तो वास्तव में वह इंसान खूब तरक्की करता है। संजय द्विवेदी उसी इंसान का नाम है।

देते हैं और जब वह लिखते हैं तो बेहद संतुलित भाषा का इस्तेमाल करते हैं। अब तक देश के तमाम समाचार पत्र पत्रिकाओं में उनके समसामयिक, राजनीतिक, सामजिक विषयों पर हजारों लेख भी प्रकाशित हो चुके हैं। इसके साथ ही तमाम विमर्शों में वह टेलीविजन चैनलों का अहम चेहरा भी बन चुके हैं। मीडिया विमर्श नाम की संजय की त्रैमासिक पत्रिका ने बीते 14 बरसों से शैक्षणिक जगत में एक खास पहचान बनायी है जो मीडिया शोधार्थियों, अध्यापकों, विद्यार्थियों लिए बहुत उपयोगी साबित हुई है। समय समय पर विभिन्न विषयों पर इस पत्रिका के विशेषांक निकलते रहे हैं जिसे पढ़कर हर कोई ज्ञान के महासागर में गोते लगा सकता है। समाज हित में साहित्यिक मशाल जलाते हुए संजय मीडिया विमर्श के बैनर तले कई बरस से साहित्यिक पत्रकारिता को संबल प्रदान करते हुए अपने दादा पंडित बृजलाल द्विवेदी की याद में अखिल भारतीय साहित्यिक पत्रकारिता सम्मान समारोह प्रतिवर्ष फरवरी में आयोजित करते रहे हैं। यही नहीं बीते बरस ही संजय मूल्यानुगत मीडिया अभिक्रम के अध्यक्ष बने हैं और वर्तमान में वह देश के तमाम विश्वविद्यालयों की अकादमिक समितियों सदस्य भी हैं।

संजय सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, प्रभाष जोशी, अच्युतानंद मिश्र, एस पी सिंह पर किताब लिख चुके हैं, वहीँ मीडिया नया दौर नई चुनौतियां, मीडिया शिक्षा : मुद्दे और अपेक्षाएं, उर्दू पत्रकारिता का भविष्य, सोशल नेटवर्किंग : नए समय का संवाद, मीडिया भूमंडलीकरण और समाज, हिंदी मीडिया के हीरो, कुछ भी उल्लेखनीय नहीं, मीडिया की ओर देखती स्त्री, ध्येय पथ, राष्ट्रवाद, भारतीयता और पत्रकारिता, मोदी युग, उनकी कुछ चर्चित पुस्तकें रही हैं। अब तक वह 25 पुस्तकें लिख चुके हैं। इसी बरस उनकी नई पुस्तक नए समय में अपराध पत्रकारिता सामने आई है जो खासी सुर्खियाँ बटोर रही है। इसे उन्होंने दिल्ली विवि की प्रोफेसर वर्तिका नंदा के साथ मिलकर लिखा है। अपराध पत्रकारिता विषय में रूचि रखने वाले पाठकों और भावी पत्रकारों के लिए यह किसी दस्तावेज से कम नहीं है।संजय की मानें तो हर युवा को जीवन में सपने देखने चाहिए और उन सपनों को पूरा करने के लिए दौड़ लगानी चाहिए साथ ही अपेक्षित परिश्रम भी करना चाहिए। वह मानते हैं अगर आप सपने देखते हैं और उनको पूरा करने के लिए आपके अन्दर जज्बा है तो वो अवश्य ही पूरे होते हैं।

आई आई एम सी जैसे प्रतिष्ठित संस्थान को उनके जैसे विराट व्यक्तित्व का लाभ अवश्य मिलेगा और उम्मीद है वह अखिल भारतीय जनसंचार संस्थान को को भाषाई पत्रकारिता का बड़ा केंद्र बनाने के साथ ही इसे पत्रकारिता का बड़ा विश्वविद्यालय बनायेंगे जिससे यहाँ शोध गतिविधियों को नया आयाम मिलेगा` पत्रकारिता के शिक्षण की बेहतरी और पत्रकारिता के भविष्य को उज्जवल करने के लिए आप हमेशा की तरह कुछ नया करेंगे इसी आशा के साथ आपको इस महीने आ रहे जन्मदिन की अशेष शुभकामनाएं। आप सदैव निरोगी और प्रसन्न रहें। सत्यमेव जयते। जिस इंसान ने वास्तव में सत्यमेव जयते शब्द को अपने जीवन में अपना लिया हो और वह इन वाक्यों को ब्रह्मवाक्य समझकर जीवन में आगे बढ़ता है तो वास्तव में वह इंसान खूब तरक्की करता है। संजय द्विवेदी उसी इंसान का नाम है।

प्रेमचंद का भाषा चिन्तन : सुझावों की नोटिस नहीं ली गई

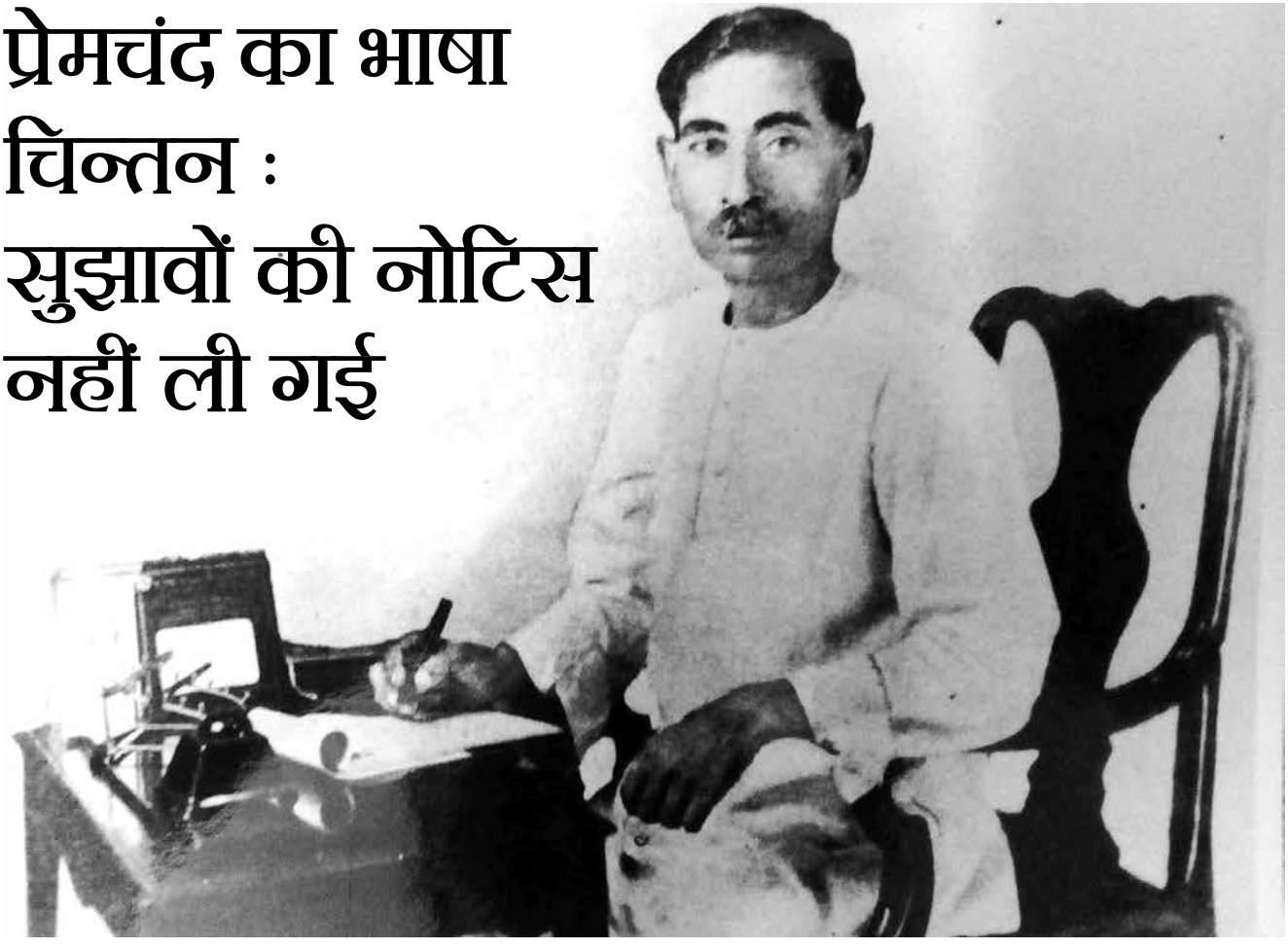

प्रो. अमरनाथ

आज भी प्रेमचंद (31-7-1880-8-10-1936) सबसे ज्यादा पढ़े जाने वाले हिन्दी के लेखकों में हैं। बड़े-बड़े विद्वानों के निजी पुस्तकालयों से लेकर रेलवे स्टेशनों के बुक स्टाल तक प्रेमचंद की किताबें मिल जाती है। प्रेमचंद की इस लोकप्रियता का एक कारण उनकी सहज सरल भाषा भी है। किन्तु मुझे यह देखकर आश्चर्य होता है कि जहाँ विभिन्न विश्वविद्यालयों और शिक्षण संस्थाओं की ओर से प्रेमचंद के साहित्य पर अनेक संगोष्ठियाँ आयोजित होती रहती हैं वहीं उनके भाषा चिन्तन पर कहीं किसी संगोष्ठी के आयोजन की खबर सुनने में नहीं आती।

प्रेमचंद ने उपन्यास को संकीर्ण विचार-वीथियों से निकालकर जीवन और जगत के बहुरंगी व्यापक पाठ पर खड़ा कर दिया। उनके कथानक ग्राम्य जीवन के सवाक चित्रपट खींचने में अत्यंत सफल हुए हैं। ग्राम्य जीवन की समस्याओं के, ग्राम्य जीवन के वे एक अनुभवी, सहृदय विवेचक थे।

आज भी कहा जा सकता है कि इस देश की राष्ट्रभाषा के आदर्श रूप का सर्वोत्तम उदाहरण प्रेमचंद की भाषा है। प्रेमचंद का भाषा- चिन्तन जितना तार्किक और पुष्ट है उतना किसी भी भारतीय लेखक का नहीं है। 'साहित्य का उद्देश्य' नाम की उनकी पुस्तक में भाषा- केन्द्रित उनके चार लेख संकलित हैं जिनमें भाषा संबंधी सारे सवालों के जवाब मिल जाते हैं। इन चारो लेखों के शीर्षक है, 'राष्ट्रभाषा हिन्दी और उसकी समस्याएं', 'कौमी भाषा के विषय में कुछ विचार', 'हिन्दी झउर्दू की एकता' तथा 'उर्दू, हिन्दी और हिन्दुस्तानी'। 'कौमी भाषा के विषय में कुछ विचार' शीर्षक निबंध वास्तव में बम्बई में सम्पन्न राष्ट्रभाषा सम्मेलन में स्वगताध्यक्ष की हैसियत से 27 अक्टूबर 1934 को दिया गया उनका व्याख्यान है। इसमें वे लिखते है, ह्न समाज की बुनियाद भाषा है। भाषा के बगैर किसी समाज का खयाल भी नहीं किया जा सकता। किसी स्थान की जलवायु, उसके नदी और पहाड़, उसकी सर्दी और गर्मी और अन्य मौसमी हालातें, सब मिल-जुलकर वहां के जीवों में एक विशेष आत्मा का विकास करती हैं, जो प्राणियों की शक्ल-सूरत, व्यवहार, विचार और स्वभाव पर अपनी छाप लगा

देती हैं और अपने को व्यक्त करने के लिए एक विशेष भाषा या बोली का निर्माण करती हैं। इस तरह हमारी भाषा का सीधा संबंध हमारी आत्मा से हैं। मनुष्य में मेल- मिलाप के जितने साधन हैं उनमें सबसे मजबूत असर डालने वाला रिश्ता भाषा का है। राजनीतिक, व्यापारिक या धार्मिक नाते जल्द या देर में कमजोर पड़ सकते हैं और अक्सर बदल जाते हैं। लेकिन भाषा का रिश्ता समय की, और दूसरी बिखरने वाली शक्तियों की परवाह नहीं करता और इस तरह से अमर हो जाता है। (साहित्य का उद्देश्य, पृष्ठ-118)

पिछले कुछ वर्षों से बोली और भाषा के रिश्ते को लेकर बहुत बाद-विवाद चल रहा है। भोजपुरी, राजस्थानी, छत्तीसगढ़ी आदि कुछ हिन्दी की बोलियां हिन्दी परिवार से अलग होकर संविधान की आठवीं अनुसूची में शामिल होने की माँग कर रही हैं। इस संबंध को लेकर प्रेमचंद लिखते हैं, 'जैसे जैसे सभ्यता का विकास होता जाता है, यह स्थानीय भाषाएं किसी सूबे की भाषा में जा मिलती हैं और सूबे की भाषा एक सार्वदेशिक भाषा का अंग बन जाती हैं। हिन्दी ही में ब्रजभाषा, बुन्देलखंडी, अवधी, मैथिल, भोजपुरी आदि भिन्न- भिन्न शाखाएं हैं, लेकिन जैसे छोटी- छोटी धाराओं के मिल जाने से एक बड़ा दरिया बन जाता है, जिसमें मिलकर नदियाँ अपने को खो देती हैं, उसी तरह ये सभी प्रान्तीय भाषाएं हिन्दी की मातहत हो गयी हैं और आज उत्तर भारत का एक देहाती भी हिन्दी समझता है और अवसर पड़ने पर बोलता है। लेकिन हमारे मुल्की फैलाव के साथ हमें एक ऐसी भाषा की जरूरत पड़ गयी है जो सारे हिन्दुस्तान में समझी और बोली जाय, जिसे हम हिन्दी या गुजराती या मराठी या उर्दू न कहकर हिन्दुस्तानी भाषा कह सकें, जैसे हर एक अंग्रेज या जर्मन या फ्रांसीसी फ्रेंच या जर्मन या अंग्रेजी भाषा बोलता और समझता है। हम सूबे की भाषाओं के विरोधी नहीं हैं। आप उनमें जितनी उन्नति कर सकें करें। लेकिन एक कौमी भाषा का मरकजी सहारा लिए बगैर एक राष्ट्र की जड़ कभी मजबूत नहीं हो सकती।' (वही, पृष्ठ-121)

प्रेमचंद चिन्ता व्यक्त करते हैं, 'अंग्रेजी राजनीति का, व्यापार का, साम्राज्यवाद का हमारे ऊपर जैसा आतंक है, उससे कहीं ज्यादा अंग्रेजी भाषा का है। अंग्रेजी राजनीति से, व्यापार से, साम्राज्यवाद से तो आप बगावत करते हैं लेकिन अंग्रेजी भाषा को आप गुलामी के तौक की तरह गर्दन में डाले हुए हैं। अंग्रेजी राज्य की जगह आप स्वराज्य चाहते हैं। उनके व्यापार की जगह अपना व्यापार चाहते हैं, लेकिन अंग्रेजी भाषा का सिक्का हमारे दिलों पर बैठ गया है। उसके बगैर हमारा पढ़ा- लिखा समाज अनाथ हो जाएगा।' (वही, पृष्ठ-121) प्रेमचंद अंग्रेजी जानने वालों और अंग्रेजी न जानने वालों के बीच स्तर-भेद का

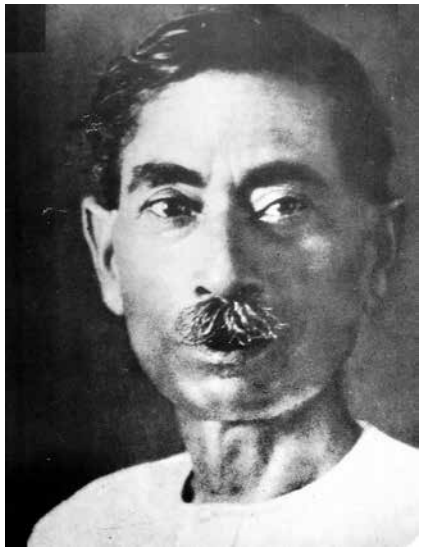

मुंशी प्रेमचंद जी एक दूरदर्शी साहित्यकार थे। जो दूरदर्शी नहीं होता, वह समय के साथ धरातल में मिल जाता है। प्रेमचंद जी के पास विशाल अनुभूति और असीम अनुभव था। वे वक्त की धड़कन को किसी निष्णात वैद्य की तरह पहचानते थे।

तार्किक विवेचन करते हुए कहते हैं, 'पुराने समय में आर्य और अनार्य का भेद था, आज अंग्रेजीदाँ और गैर-अंग्रेजीदाँ का भेद है। अंग्रेजीदाँ आर्य हैं। उसके हाथ में अपने स्वामियों की कृपादृष्टि की बदौलत कुछ अख्तियार है, रोब है, सम्मान है। गैर-अंग्रेजीदाँ अनार्य हैं और उसका काम केवल आर्यों की सेवा- टहल करना है और उसके भोग-विलास और भोजन के लिए सामग्री जुटाना है। यह आर्यवाद बड़ी तेजी से बढ़ रहा है, दिन दूना रात चौगुना...। हिन्दुस्तानी साहबों की अपनी बिरादरी हो गयी है, उनका रहन- सहन, चाल- ढाल, पहनावा, बर्ताव सब साधारण जनता से अलग है, साफ मालूम होता है कि यह कोई नई उपज है।' (वही, पृष्ठ-122)

प्रेमचंद हमें आगाह करते हैं, 'जबान की गुलामी ही असली गुलामी है। ऐसे भी देश, संसार में हैं जिन्होंने हुक्मराँ जाति की भाषा को अपना लिया। लेकिन उन जातियों के पास न अपनी तहजीब या सभ्यता थी और न अपना कोई इतिहास था, न अपनी कोई भाषा थी। वे उन बच्चों की तरह थे, जो थोड़े ही दिनों में अपनी मातृभाषा भूल जाते हैं और नयी भाषा में बोलने लगते हैं। क्या हमारा शिक्षित भारत वैसा ही बालक है ? ऐसा मानने की इच्छा नहीं होती, हालाँकि लक्षण सब वही हैं।' (वही, पृष्ठ- 124)

कौमी भाषा के स्वरूप पर प्रेमचंद ने बहुत गंभीरता के साथ और तर्क व उदाहरण देकर विचार किया है। वे कहते हैं, 'सवाल यह होता है कि जिस कौमी भाषा पर इतना जोर दिया जा रहा है, उसका रूप क्या है? हमें खेद है कि अभी तक उसकी कोई खास सूरत नहीं बना सके हैं, इसलिए कि जो लोग उसका रूप बना सकते थे, वे अंग्रेजी के पुजारी थे और हैं। मगर उसकी कसौटी यही है कि उसे ज्यादा से ज्यादा आदमी समझ सकें। हमारी कोई सूबेवाली भाषा इस कसौटी पर पूरी नही उतरती। सिर्फ हिन्दुस्तानी उतरती है, क्योंकि मेरे ख्याल में हिन्दी और उर्दू दोनो एक जबान है। क्रिया और कर्ता, फेल और फाइल जब एक है तो उनके एक होने में कोई संदेह नहीं हो सकता। उर्दू वह हिन्दुस्तानी जबान है, जिसमें फारसी-अरबी के लफ्ज ज्यादा हों, इसी तरह हिन्दी वह हिन्दुस्तानी है, जिसमें संस्कृत के शब्द ज्यादा हों। लेकिन जिस तरह अंग्रेजी में चाहे लैटिन या ग्रीक शब्द अधिक हों या ऐंग्लोसेक्सन, दोनो ही अंग्रेजी है, उसी भाँति हिन्दुस्तानी भी अन्य भाषाओं के शब्दों में मिल जाने से कोई भिन्न भाषा नहीं हो जाती। साधारण बातचीत में तो हम हिन्दुस्तानी का व्यवहार करते ही हैं।' (वही, पृष्ठ-124)

प्रेमचंद ने उर्दू, हिन्दी और हिन्दुस्तानी, भाषा के तोनों रूपों का अलग अलग उदाहरण दिया है। उनके द्वारा दिया गया हिन्दुस्तानी का उदाहरण निम्न है, 'एक जमाना था, जब देहातों में चरखा और चक्की के बगैर कोई घर खाली न था। चक्की-चूल्हे से छुट्टी मिली, तो चरखे पर सूत कात लिया। औरतें चक्की पीसती थी। इससे उनकी तन्दुरुस्ती बहुत अच्छी रहती थी, उनके बच्चे मजबूत और जफाकश होते थे। मगर अब तो अंग्रेजी तहजीब और मुआशरत ने सिर्फ शहरों में ही नहीं, देहातों में भी कायापलट दी है। हाथ की चक्की के बजाय अब मशीन का पिसा हुआ आटा इस्तोमाल किया जाता है। गावों में चक्की न रही तो चक्की पर का गीत कौन गाए? जो बहुत गरीब हैं वे अब भी घर की चक्की का आटा इस्तेमाल करते हैं। चक्की पीसने का वक्त अमूमन रात का तीसरा पहर होता है। सरे शाम ही से पीसने के लिए अनाज रख लिया जाता है और पिछले पहर से उठकर औरतें चक्की पीसने बैठ जाती हैं।'

उक्त उदाहरण देने के बाद प्रेमचंद लिखते हैं, 'इस पैराग्राफ को मैं हिन्दुस्तानी का बहुत अच्छा नमूना समझता हूँ, जिसे समझने में किसी भी हिन्दी समझने वाले आदमी को जरा भी मुश्किल न

पड़ेगी।' (वही, पृष्ठ-125)

किन्तु प्रेमचंद अपने समय के यथार्थ को भली- भाँति समझते थे। उन्होंने लिखा है, 'एक तरफ हमारे मौलवी साहबान अरबी और फारसी के शब्द भरते जाते है, दूसरी ओर पंडितगण, संस्कृत और प्राकृत के शब्द ठूँस रहे है और दोनो भाषाएं जनता से दूर होती जा रही हैं। हिन्दुओं की खासी तादाद अभी तक उर्दू पढ़ती आ रही है, लेकिन उनकी तादाद दिन प्रति -दिन घट रही है। मुसलमानों ने हिन्दी से कोई सरोकार रखना छोड़ दिया। तो क्या यह तै समझ लिया जाय कि उत्तर भारत में उर्दू और हिन्दी दो भाषाएं अलग- अलग रहेंगी? उन्हें अपने- अपने ढंग पर, अपनी- अपनी संस्कृति के अनुसार बढ़ने दिया जाय। उनको मिलने की और इस तरह उन दोनों की प्रगति को रोकने की कोशिश न की जाय? या ऐसा संभव है कि दोनो भाषाओं को इतना समीप लाया जाय कि उनमें लिपि के सिवा कोई भेद न रहे। बहुमत पहले निश्चय की ओर है। हाँ, कुछ थोड़े से लोग ऐसे भी है जिनका ख्याल है कि दोनो भाषाओं में एकता लायी जा सकती है और इस बढ़ते हुए फर्क को रोका जा सकता है। लेकिन उनका आवाज नक्कारखाने में तूती की आवाज है। ये लोग हिन्दी और उर्दू नामों का व्यवहार नहीं करते, क्योंकि दो नामों का व्यवहार उनके भेद को और मजबूत करता है। यह लोग दोनों को एक नाम से पुकारते हैं और वह हिन्दुस्तानी है।' (वही, हिन्दी - उर्दू एकता शीर्षक निबंध, पृष्ठ-139)

कहना न होगा, प्रेमचंद द्वारा प्रस्तावित हिन्दुस्तानी को नकार कर और संस्कृतनिष्ठ हिन्दी को राजभाषा के रूप में अपनाने के 70 साल बाद भी, प्रेमचंद द्वारा दिए गए उक्त उद्धरण में सिर्फ दो शब्द (जफाकश और मुआशरत) ऐसे हैं जिनको लेकर हिन्दी वालों की थोड़ी मुश्किल हो सकती है। किन्तु भाषा की सरलता आज भी विमुग्ध करने वाली है। प्रेमचंद और गाँधीजी के सुझाव न मानकर हमने एक ही भाषा को हिन्दी और उर्दू में बाँट दिया, उन्हें मजहब से जोड़ दिया और इस तरह दुनिया की सबसे समृद्ध, बड़ी और ताकतवर हिन्दी जाति को धर्म के आधार पर दो हिस्सों में बाँटकर कमजोर कर दिया और उनके बीच सदा- सदा के लिए अलंघ्य और अटूट चौड़ी दीवार खड़ी कर दी।

हमने राजभाषा हिन्दी और अपने साहित्य की भाषा को भी जिस संस्कृतनिष्ठता से बोझिल बना दिया है उससे आगाह करते हुए प्रेमचंद ने उसी समय कहा था, 'हिन्दी में एक फरीक ऐसा है, जो यह कहता है कि चूंकि हिन्दुस्तान की सभी सूबेवाली भाषाएं संस्कृत से निकली हैं और उनमें संस्कृत के शब्द अधिक हैं इसलिए हिन्दी में हमें अधिक से अधिक संस्कृत के शब्द लाने चाहिए, ताकि अन्य प्रान्तों के लोग उसे आसानी से समझें।

उर्दू की मिलावट करने से हिन्दी का कोई फायदा नहीं। उन मित्रों को मैं यही जवाब देना चाहता हूं कि ऐसा करने से दूसरे सूबों के लोग चाहे आप की भाषा समझ लें, लेकिन खुद हिन्दी बोलने वाले न समझेंगे। क्योंकि, साधारण हिन्दी बोलने वाला आदमी शुद्ध संस्कृत शब्दों का जितना व्यवहार करता है उससे कहीं ज्यादा फारसी शब्दों का। हम इस सत्य की ओर से आँखें नहीं बन्द कर सकते और फिर इसकी जरूरत ही क्या है कि हम भाषा को पवित्रता की धुन में तोड़- मरोड़ डालें। यह जरूर सच है कि बोलने की भाषा और लिखने की भाषा में कुछ न कुछ अन्तर होता है, लेकिन लिखित भाषा सदैव बोलचाल की भाषा से मिलते-जुलते रहने की कोशिश किया करती है। लिखित भाषा की खूबी यही है कि वह बोलचाल की भाषा से मिले।' (वही, पृष्ठ 128)

इस संबंध में महात्मा गाँधी की प्रशंसा करते हुए प्रेमचंद ने लिखा है, 'कितने खेद की बात है कि महात्मा गाँधी के सिवा किसी भी दिमाग ने कौमी भाषा की जरूरत नहीं समझी और उसपर जोर नहीं दिया। यह काम कौमी सभाओं का है कि वह कौमी भाषा के प्रचार के लिए इनाम और तमगे दें, उसके लिए विद्यालय खोलें, पत्र निकालें और जनता में प्रोपेगैंडा करें। राष्ट्र के रूप में संघटित हुए बगैर हमारा दुनिया में जिन्दा रहना मुश्किल है। यकीन के साथ कुछ नहीं कहा जा सकता कि इस मंजिल पर पहुँचने की शाही सड़क कौन सी है। मगर दूसरी कौमों के साथ कौमी भाषा को देखकर सिद्ध होता है कि कौमियत के लिए लाजिमी चीजों में भाषा भी है और जिसे एक राष्ट्र बनना है उसे

एक कौमी भाषा भी बनानी पड़ेगी।' (वही, पृष्ठ-132)

प्रेमचंद ने लिपि के सवाल पर भी गंभीरता के साथ विचार किया है और साफ शब्दों में अपना मत व्यक्त किया है। 'प्रान्तीय भाषाओं को हम प्रान्तीय लिपियों में लिखते जायँ, कोई एतराज नहीं, लेकिन हिन्दुस्तानी भाषा के लिए एक लिपि रखना ही सुविधा की बात है, इसलिए नहीं कि हमें हिन्दी लिपि से खास मोह है बल्कि इसलिए कि हिन्दी लिपि का प्रचार बहुत ज्यादा है और उसके सीखने में भी किसी को दिक्कत नहीं हो सकती। लेकिन उर्दू लिपि हिन्दी से बिलकुल जुदा है और जो लोग उर्दू लिपि के आदी हैं, उन्हें हिन्दी लिपि का व्यवहार करने के लिए मजबूर नहीं किया जा सकता। अगर जबान एक हो जाय तो लिपि का भेद कोई महत्व नहीं रखता।' (वही, पृष्ठ-132)

और अन्त में निष्कर्ष देते हैं, 'लिपि का फैसला समय करेगा। जो ज्यादा जानदार है वह आगे आएगी। दूसरी पीछे रह जाएगी। लिपि के भेद का विषय छेड़ना घोड़े के आगे गाड़ी को रखना होगा। हमें इस शर्त को मानकर चलना है कि हिन्दी और उर्दू दोनो ही राष्ट्र-लिपियां हैं और हमें अख्तियार है, हम चाहे जिस लिपि में उसका (हिन्दुस्तानी का) व्यवहार करें। हमारी सुविधा हमारी मनोवृत्ति और हमारे संस्कार इसका फैसला करेंगे।' (वही, पृष्ठ-133)

किन्तु प्रेमचंद को विश्वास है कि 'हम तो केवल यही चाहते हैं कि हमारी एक कौमी लिपि हो जाय।' दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास के चतुर्थ दीक्षान्त समारोह में दीक्षान्त भाषण देते हुए उन्होंने कहा था कि 'अगर सारा देश नागरी लिपि का हो जाएगा तो संभव है मुसलमान भी उस लिपि को कुबूल कर लें। राष्ट्रीय चेतना उन्हें बहुत दिन तक अलग न रहने देगी।' (साहित्य का उद्देश्य, पृष्ठ- 117)

प्रेमचंद के सुझावों पर अमल न करके हमने देश की भाषा नीति को लेकर जो मार्ग चुना उसके घातक परिणाम आज हमारे सामने हैं। अंग्रेजी के वर्चस्व के नाते हमारे देश की बहुसंख्यक आबादी और गाँवों की छुपी हुई प्रतिभाएं अनुकूल अवसर के अभाव में दम तोड़ रही हैं। देश में मौलिक चिन्तन चुक गया है और दुनिया का सबसे बड़ा लोकतंत्र होने के बावजूद हम सिर्फ नकलची बनकर रह गए हैं।

बहरहाल, आज कथा सम्राट मुंशी प्रेमचंद की जयंती के दिन हम इस महान लेखक के रचनात्मक योगदान तथा उनके भाषा संबंधी चिन्तन का स्मरण करते हैं और समाज के प्रबुद्ध जनों से उसपर अमल करने की अपील करते करते हैं। ●

(लेखक कलकत्ता विश्वविद्यालय के पूर्व प्रोफेसर और हिन्दी विभागाध्यक्ष हैं)

"तुलसीदास मर्यादाओं के कवि हैं"- प्रो. रजनीश कुमार शुक्ल

महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय में 27 जुलाई को गोस्वामी तुलसीदास जयंती पर 'तुलसी : तत्व चिंतन और श्रवण' विषय पर आयोजित गोष्ठी में सुविख्यात आलोचक श्री प्रेमशंकर त्रिपाठी जी ने कहा कि गोस्वामी तुलसीदास जी ने जनभाषा में लोकचेतना जगाने का काम किया है। उनकी हरी भक्ति मनुष्यता के निर्माण की सीढ़ी है। वैज्ञानिक विकास के इस युग में तुलसीदास का साहित्य सभी के लिए मार्गदर्शक बन सकता है।

विश्वविद्यालय के आधिकारिक यू ट्यूब चैनल पर लाइव प्रसारित इस गोष्ठी की अध्यक्षता विश्वविद्यालय के कुलपति प्रो. रजनीश कुमार शुक्ल ने की। इस गोष्ठी में प्रतिकुलपति प्रो. हनुमान प्रसाद शुक्ल, प्रो. कृष्ण कुमार सिंह ने भी अपने विचार प्रकट किये। गोष्ठी का संचालन मानविकी तथा सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ के अधिष्ठाता एवं जनसंचार विभाग के अध्यक्ष प्रो. कृपा शंकर चौबे ने किया। कार्यक्रम में स्वागत वक्तव्य साहित्य विद्यापीठ की अधिष्ठाता प्रो. प्रीति सागर ने दिया। प्रतिकुलपति प्रो. चंद्रकांत रागीट ने धन्यवाद ज्ञापित किया। कोलकाता से अपनी बात रखते हुए प्रेम शंकर त्रिपाठी जी ने गोस्वामी तुलसीदास के अनेक छंदो को उधृत करते हुए उनकी रचनाओं का विस्तार से विवेचन किया। उन्होंने कहा कि तुलसीदास अपने समय के समाज को एक बड़ा आश्वासन देते हैं। तुलसीदास जी ने रामचरितमानस की रचना के माध्यम से भक्ति का सरल सूत्र दिया है तथा भक्ति की सरल परिभाषा भी बतायी है।

अध्यक्षीय वक्तव्य में कुलपति प्रो. रजनीश कुमार शुक्ल जी ने कहा कि तुलसीदास मर्यादाओं के कवि हैं। वे रामचरित मानस के माध्यम से अमर्यादित और विचलित समाज में मयार्दाओं को स्थापित करना चाहते है। मयार्दापुरुष राम उनकी रचनाओं के केंद्र में है। भारत की संवाद प्रणाली को समझने के लिए गोस्वामी तुलसीदास रचित रामचरितमानस एक महत्वपूर्ण प्रस्तुति है। प्रो। शुक्ल ने कवि तुलसीदास को भारतीयता के भाष्यकार संज्ञा देते हुए कहा कि उनके साहित्य का पुनर्विवेचन करने की आवश्यकता है।

प्रतिकुलपति प्रो. हनुमान प्रसाद शुक्ल ने तुलसीदास को अनन्य आस्था तथा अखंड विश्वास के कवि बताया। उन्होंने कहा कि कवि तुलसीदास सर्जक रचनाकार, धर्मसंस्थापक, परंपरा के भाष्यकार और मूल्यों के संस्थापक हैं। प्रो। शुक्ल ने कहा कि तुलसीदास सम्यक दृष्टि से संपन्न कवि हैं। हिंदी एवं तुलनात्मक साहित्य विभाग के प्रो। कृष्ण कुमार सिंह ने कहा कि 450 वर्षों से तुलसीदास की रचनओं का जनमानस पर बड़ा प्रभाव रहा है। तत्वज्ञ के रूप में उनका मुकाबला कोई नहीं कर सकता।

गोष्ठी के बाद जगजीत सिंह, पं. रतन मोहन, पुरूषोत्तम दास जलोटा, वीणा सहस्रबुद्धे, पंडित जसराज, रमेश भाई ओझा, रमाकांत शुक्ल और हरिओम शर्मा आदि कलाकारों के गीतों का श्रवण किया गया। ●

नोजपिन

मनोहर बाथम

दर्द की गुफाओं से गुजरते हुए मैंने स्वप्निल से कहा सुनो! अगर मैं तुमसे कुछ मांगूँ तो दोगे क्या?

उसने उनींदी आंखों को मसलते हुए कहा पूछा मत करो रूहानी माँग लिया करो। कहीं से जहर ला दो ना, ये दोहरी जिंदगी मुझसे अब नही जी जाती।

उफ्फ तू भी ना क्या क्या मांगती है, आजकल जहर बड़ा कीमती हो गया है कुछ और माँग,

मैं मुस्कुराई, इतने में उसने फिर कहा

मुझे ही माँग ले, पर तुम्हें मांगने के लिए मुझे एक युद्ध मे जाना होगा, और युद्ध खतरनाक होते है मेरी जान। समाज अपनी नाक बचाने के लिए युद्ध मे चक्रव्यूह रचता है और मेरी माँ ने तो मुझे चक्रव्यूह में घिरना सिखाया है बचना नही वो तो सबसे बड़ी पहरेदार है जो युद्ध मे हारने के हजार पैंतरे बता देगी। तुम मेरी पहुँच से दूर हो आसमान की तरह।

अच्छा अब मैं जाता हूँ रात के 10 बज चुके हैं, अब तो पीछे से आवाजें भी आने लगी हैं, बच्चे भी कुछ कहना चाहते हैं

रुको ना, अभी ठहरो; तुम ठहरोगे तो रात भी ठहर जाएगी

और मैंने उसके गालों को धीरे से चूमा उसने मेरे माथे को चूमते हुए कहा अभी नही रूहानी, सुनो पीछे से सीमा आवाज दे रही है, मुझे जाना होगा और उसने आई लव यू कहते हुए फोन काट दिया।

मैंने अपने बिस्तर के दाईं ओर के स्थान को रिक्त देखा जहाँ से मुझे दर्द की गुफाएं साफ दिखती हैं इन गुफाओं के तालों को खोलने वाली चाभी मेरा फोन है जिसमे प्यार के तमाम इमोजी जी भरे पड़े हैं, जो मुझे प्यार करने के जादुई तिकड़म सिखाते हैं।

ये इमोजी भटकी रातों में सिहरन पैदा कर सकते, भयानक दर्द पैदा कर सकते हैं पर जाते हुए प्यार को रोक नही सकते, सोचो तो कितना खतरनाक होता है एकांत। दर्द बिखरता जा रहा है फूटे मर्तबान से रिसते शहद की तरह और उसमें लग गई है सैकड़ो लाल चीटियां, तभी तो दर्द भयानक होता है।

सोचते सोचते फेसबुक खोल दिया और कर दिया खुद को ऑफलाइन, स्वप्निल का आई0डी0 देखते देखते, उसे उसकी फैमिली के साथ ढेरों फोटो में देखा जहाँ उसे बस खुश देखा। वो अक्सर कहता था प्यार तो बस तुमको करता हूँ पर मुझे क्यों लगता था कि बस कभी कभी करता है और मैं हमेशा।

जाने क्यों शक करती हूँ मैं अपने वर्चुअल लव पर?

मैं तो कभी रोशन के साथ कोई फोटो लगा ही नही पाई, क्योंकि मैं अपना पहला प्यार भी नही भूल पाई। कितनी लंबी सोच हों जाती है हम औरतों की हम दर्द में भी प्यार का सहारा खोजते हैं और वो सहारा मुझे बस स्वप्निल में नजर आता है

> **“मैं इंतजार करने लगी कि, रोशन जल्दी आफिस के लिए निकले और मेरे भीतर का तूफान मेरे कमरे में रखे समान को बिखेर दे। रोशन तैयार होकर निकला और उसने मेरे अशांत मन को घृणा से देखा और बस इतना कहा शाम को तैयार रहना। और घर से निकल गया। एक तड़प, एक बेबसी मेरे भीतर सैकड़ों तूफान की तरह डोलती रही, मन सीमा को कॉल करने के लिए छटपटाया। पर मैं काल कर ही नही पाई, मैंने फोन उठाया स्वप्निल का लास्ट मैसज पढ़ने लगी।”**

रात के 12 बज गए और मेरे फोन की नीली लाइट चमकी

छोटा सा मैसज स्वप्निल ने भेजा था सो जा मेरी जान कल 11 बजे कॉल करूँगा कब तक मेरा फेसबुक एकाउंट चेक करेगी और शक करती रहेगी मेरे प्यार पर। और लास्ट में था किस करता स्माइली।

ये मैसेज लोरी था या प्यार भरी थपकी मुझे लगा उसके गुलाब से भरे सीने में सर रखा हो मेरा, आखिरकार मुझ जैसे भटकते को भी नींद आ ही गई।

चिड़ियों के चहकने से नींद खुली, पहाड़ों की सुबह बहुत खूबसूरत होती है जब सूरज अपनी नींद से भरी लाल आंखों को खोलता है लगता है आसमान की धरती में हम औरतों ने सुर्ख लाल फूल लगा दिया हो जिसका रंग पूरे दिन बदलता रहता है। यहाँ की सड़को में गाड़ियां कछुवे की तरह आती है और साँप की तरह वापस चली जाती है।

मैं बस सोचती रहती हूँ तितलियों की तरह या भगवान से शिकायत करती हूँ।

फोन पर वाइब्रेशन होता देखती हूँ कि स्वप्निल का काल आ रहा है, मैं कॉल पिक करती हूं पर मेरे हैल्लो कहने से पूर्व ही स्वप्निल कहता है तू सपने बहुत देखती है और शिकायत तो तेरी कभी खत्म ही नही होती। मैं मुस्कराई और बोली तुम तो 11 बजे कॉल करने वाले थे ये सुबह सात बजे कैसे कॉल कर रहे हो।

बस ऐसा लगा कि तू मुझे याद कर रही है। सीमा बच्चों को तैयार कर रही स्कूल के लिए तो मैंने थोड़ा सा समय तेरे लिए चुरा लिया, अब बता कैसी है ? नींद आई ठीक से या बस सपने ही देखती रही मेरे? या फिर अपने भगवान से मेरी शिकायत करती रही। हमने प्यार किया क्या या मुझे यूँ अधूरा छोड़ दिया?

और तेरा पति रौशन कहाँ है?

उफ्फ कितने सवाल करते हो एक एक करके जवाब देती हूं।

नींद अच्छे से आई हाँ तेरी शिकायत भी की मैंने भग्गू से और ये भी कहा की तेरा प्यार मेरे लिए ऐसे ही बना रहे।

प्यार बहुत किया हकीकत में न सही पर ख्यालों और सपनों में तुमसे डूब के प्यार किया। खुद में तुमको डूबा हुआ पाया। वैसे ही जैसे अंत मे नदी सागर में मिल जाती है।

और रोशन हमेशा की तरह मॉर्निंग वॉक पर गए हैं अब।बोलो।

देख अब मेरा प्यार तो मेरी सांसो के थमने के बाद ही खत्म होगा बाकी शिकायतें तू करती रह स्वप्निल ने हंसते हुए कहा।

अच्छा सुनो तुमसे कुछ मांगूँ?

हाँ बस जहर मत माँगना, क्योंकि हमें अभी साथ साथ जीना है।

अरे जहर नही मुझे एक नोजपिन ला दोगे?

नोजपिन! क्यों? उसने आश्चर्य से पूछा

तुझे नही पता?

नही मुझे कैसे पता होगा उसने बेफिक्र होकर कहा

अच्छा अपनी माँ से पूछना की एक औरत के लिए नोजपिन का क्या महत्व होता है?

मैं नही पूछ रहा तू ही बता दे।

पहाड़ों में शादीशुदा औरतें अपने पति के नाम की नोजपिन पहनती हैं वहीं उन औरतों की पूंजी होती है। और वो नोजपिन उसके चले जाने के बाद ही उतरती है।

ओह्ह तो ये बात है चल आज शाम को ही दिलवा दूंगा वैसे तेरे पति रौशन को दिक्कत नही होगी क्या?

उसके होते हुए तू मेरे नाम की पूँजी धारण करे। उसने ठहाका लगाते हुए कहा

नही क्योंकि तुम मेरा पहला प्यार हो ये बात और है कि हम मिल के भी मिल नही पाये।

तो ठीक है आज शाम को ही लेंगे हम सुंदर सी नोजपिन तेरे लिए

अब तो खुश है ना?

हाँ हाँ मैने खुशी से जवाब दिया

और कुछ

नही और कुछ भी नही, ये संपत्ति अनमोल होगी मेरे लिए।

अचानक घड़ी का अलार्म तेज तेज बजने लगा ये रौशन के मॉर्निंग वॉक का समय था। सुबह पूरे खुमार में थी और मैं बेवकूफ पूरी रात सपने देखती रही स्वप्निल के।

बिस्तर से उठी अपने लिए ग्रीन टी बनाई और बॉलकोनी में बैठ के चाय के सिप लेने लगी और सोचने लगी ये नोजपिन का सपना आज क्यों आया होगा?

जबकि लास्ट मंथ ही स्वप्निल ने मुझे तनिष्क से ऑनलाइन आर्डर करके एक डायमंड की नोजपिन दे दी थी।

जब रोशन बैंगलोर टूर पर गया था। हमने उस दिन पूरा एक घंटे फोन पर प्यार भरी बातें की थीं।

उसके बाद उसने मुझे बोला रूहानी तुम मेरे साँसों में जीवन बनके बहने लगी हो।

मैं तुमको कुछ उपहार देना चाहता हूँ जो तुम्हारे पास मैं बनके रहूं।

बोलो क्या दूँ?

तुम मुझे एक नोजपिन दो फिर

नोजपिन! भला क्यों?

मान से तुम्हारा प्रेम चमकेगा, मुस्कराते हुए मैंने कहा-

ठीक है, आज मैं बिल्कुल फ्री हूँ जब तूने सुबह फोन करके कहा- रोशन टूर पर है,

तो मैं सीमा और बच्चों को उनके मामा के घर छोड़ आया,

आज हम खूब बातें करेंगे। पर पहले तनिष्क की ऑनलाइन साइट खोलके तेरे लिए नोजपिन सेलेक्ट करते हैं। एक दूसरे को नोजपिन का स्क्रीनशॉट खींच के हम दोनों देते रहे। आखिरकार एक नोजपिन की डिजाइन हम दोनों को पसंद आई। स्वप्निल ने ऑनलाइन पेमेंट किया और उसकी डिलीवरी के लिए मेरे घर का पता दे दिया।

कैसी अजीब हूँ जब देखो सपने ही देखती हूँ, ना जाने कैसा होगा स्वप्निल? और अपनी नाक में चमकती हीरे की लौंग को सहलाया मैंने, जैसे वो स्वप्निल हो।

ना चाहते हुए भी मैंने फोन उठाया और उसे मैसज टाइप करने लगी

गुडमॉर्निंग कैसे हो?

पूरी रात तुम्हारे सपनों में ही कट गई।

पता है मैसेज पढ़ते-पढ़ते, मेरे पर हँस रहे होंगे। और मुस्कराते हुए मैसेज सेंड कर दिया।

घड़ी पर नजर दौड़ाई तो देखा साढ़े सात बजे चुके थे।

अरे मुझे तो रौशन के लिए नाश्ता बनाना है। चाय के बर्तन समेटने जा ही रही थी कि मेरे सेल फोनमे वाइब्रेशन के साथ घंटी बजी

मैने चौंक के देखा तो स्वपनिल का कॉल था सपना मानो खुद को दोहरा रहा हो।

मैंने हेलो कहा और बोला आज इतनी जल्दी कॉल कैसे? तुम तो 11 बजे बात करने वाले थे ना!

लेकिन दूसरी तरफ से किसी औरत के रोने की आवाज आई

मैं घबरा गई हड़बड़ा के पूछा आप कौन? ये तो स्वप्निल का नम्बर है औरत ने रोते हुए कहा मैं सीमा हूँ रूहानी

सीमा तुम!

क्या हुआ सब ठीक तो है?

क्या तुम मुझे जानती हो?

हम्म रूहानी

मेरा दिल जोर जोर से धड़कने लगा, डर से मेरे कान गर्म हो गए।

खुद को संभालते हुए मैने कहा माफ करना सीमा इससे आगे मैं कुछ कहती सीमा ने कहा रूहानी स्वप्निल नही रहे।

आज सुबह 5 बजे स्वनिल की अचानक तबियत खराब हों हम अस्पताल लेकर आये तो डॉक्टर ने कहा हार्ट अटैक है आपने आने में देर कर दी स्वप्निल नही रहे रूहानी, सुबह छह बजे वो हम सबको छोड़ के चले गए।

उनकी जुबान में लास्ट तक तुम्हारा ही नाम था। उनके फोन में तुम्हारे मैसेज देखे। मेरा और स्वप्निल का रिश्ता भरोसे पर टिका था कभी फोन चेक करने की जरूरत ही नही पड़ी ना स्वप्निल ने कभी अपने फोन पर कोई पासवर्ड लगाया,

पर उनके जाने के बाद लगा कि इतने सालों का भरोसा अचानक टूट गया। बहुत गुस्सा आया तुम पर भी और स्वप्निल पर भी।

पर आखिर में लगा जो मैंने खोया वही तुमने भी खोया है

जो दर्द मेरा है अब वही तुम्हारा भी है। तुमको उसके जाने का जरूर पता चलना चाहिए। इसलिए तुमको कॉल करके बता दिया।

ये कहके सीमा जोर जोरसे रोने लगी मेरे हाथ से फोन गिर गया उसकी रोने की आवाज दूर होती गई उसके आँसू मेरा भी दर्द बन गए।

एक नदी मेरी आँखों मे भी बह रही थी रोते रोते मैंने अपनी नाक में चमकते लौंग को उतार दिया और अखबार का छोटा सा हिस्सा फाड़ा और उसमें लौंग को लपेट के एक छोटी सी डिब्बी में रख दिया। मेरी आँखें उगते सूरज जैसी लाल हो गई थी। इतने में रोशन 8 बजे मॉर्निंग वॉक से लौट आए और मुझे देखते हुए बोले अजीब लग रही हो आज तुम शायद बिना नोजपिन के।

एक नदी मेरी आँखों मे भी बह रही थी रोते रोते मैंने अपनी नाक में चमकते लौंग को उतार दिया और अखबार का छोटा सा हिस्सा फाड़ा और उसमें लौंग को लपेट के एक छोटी सी डिब्बी में रख दिया। मेरी आँखें उगते सूरज जैसी लाल हो गई थी।

इतने में रोशन 8 बजे मॉर्निंग वॉक से लौट आए और मुझे देखते हुए बोले अजीब लग रही हो आज तुम शायद बिना नोजपिन के।

मैंने रूंधे गले से कहा खो गई मेरी पूंजी, और मुझमें मेरा मान।

ओह तो रो क्यों रही हो शाम को जल्दी आ जाऊंगा नई खरीद लेंगे। एक नोजपिन ही तो थी क्या बके जा रही मान और पूँजी आल थेट।

मेरे दिमाग मे बम फट रहे थे मानो,

स्वनिल ने भी सपने में कहा था शाम को चलेंगे नोजपिन लाने। शाम और ग्यारह बजे ये शब्द हथौड़े की तरह दिमाग मे बजने लगे।

नाश्ता रखो मैं नहा के आता हूँ रोशन बोला।

पर आज मैंने नाश्ता नही बनाया मेरी तबियत कुछ सही नही लग रही और मेरी आँखों से आँसू भरभरा के बहने लगे।

अजीब होती हो तुम औरते जरा जरा सी बात पे, भें भें रोने लगती हो, कहा ना शाम को नई दिलवा दूंगा और हाँ मत बनाओ नाश्ता मैं ऑफिस में कर लूंगा चिढ़ते हुए रोशन नहाने चले गए।

कैसे कहूँ रोशन को की ये जरा सी बात नही ये मेरे जीवन का वास्तविक दर्द है जो रोशन के लिए रहस्य ही रहेगा।

मैं स्वप्निल के लास्ट मैसज को याद करने लगी, 11 बजे बात करूंगा मेरी जान।

इंतजार कभी न खत्म होने वाली चीज है जिसे स्वप्निल मुझे देकर चला गया और एक दर्द भरी गुफा भी जिसकी चाभी अब फोन नही उसका लास्ट मैसेज है।

मैं इंतजार करने लगी कि, रोशन जल्दी आफिस के लिए निकले और मेरे भीतर का तूफान मेरे कमरे में रखे समान को बिखेर दे।

रोशन तैयार होकर निकला और उसने मेरे अशांत मन को घृणा से देखा और बस इतना कहा शाम को तैयार रहना। और घर से निकल गया।

एक तड़प, एक बेबसी मेरे भीतर सैकड़ों तूफान की तरह डोलती रही, मन सीमा को कॉल करने के लिए छटपटाया। पर मैं काल कर ही नही पाई, मैंने फोन उठाया स्वप्निल का लास्ट मैसज पढ़ने लगी।

संपर्क : 09415200724

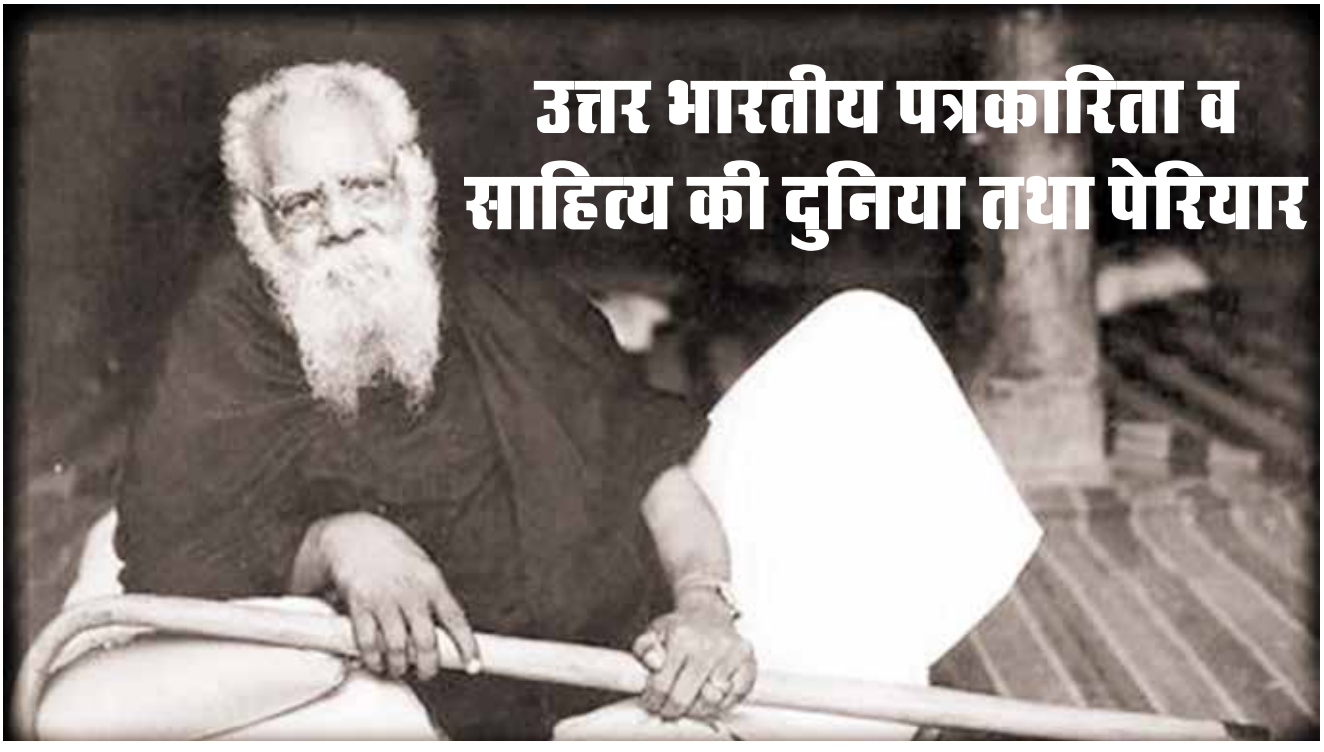

उत्तर भारतीय पत्रकारिता व साहित्य की दुनिया तथा पेरियार

प्रमोद रंजन

पिछले दिनों पेरियार पर केंद्रित तीन किताबों के प्रकाशन के बाद मुझे दो रोचक अनुभव हुए। ये छोटी-छोटी बातें हमारे बौद्धिक परिदृश्य को समझने के लिए उपयोगी लग रही हैं, इसलिए उन्हें साझा कर रहा हूं।

उत्तर भारत के समाचार माध्यम और पेरियार- दो दिन पहले इस किताब के संबंध में राजकमल प्रकाशन ने प्रेस नोट जारी किया, जिसे अनेक प्रमुख अंग्रेजी अखबारों और वेबपोर्टलों ने प्रकाशित किया है। जबकि हिंदी में इसे सिर्फ दैनिक जागरण ने प्रकाशित किया है। किताब हिंदी में है और अनेक सामाजिक-राजनीतिक कारणों से पेरियार का पहली बार हिंदी मेंआना हिंदी अखबारों के लिए भी एक 'खबर' हो सकती थी, लेकिन हिंदी के अधिकांश अखबारों और वेबपोर्टलों ने इसे प्रकाशित नहीं किया।

बहरहाल, रोचक यह है कि जिन अंग्रेजी अखबारों ने इन खबरों को प्रकाशित किया है, उनमें से डेक्कन क्रॉनिकल को छोड़कर सभी ने अपने शीर्षक में लिखा है कि हिंदी में पेरियार की 'कविताओं' की किताब प्रकाशित हुई है। जबकि वास्तविकता यह है कि अब तक ज्ञात सूचनाओं के अनुसार, पेरियार ने जीवन में कोई कविता नहीं लिखी। उन्होंने पेरियार को कवि बना डाला!

चूंकि हिंदी में प्रकाशित हुई इन किताबों से एक किताब का नाम 'सच्ची रामायण' है, इसलिए खबर संपादित करने वालों को लगा होगा कि चूंकि रामायण एक काव्य है, इसलिए पेरियार की 'सच्ची रामायण' भी कविता होगी!

खबर प्रेस ट्रस्ट ऑफ इंडिया ने जारी की थी, और राजकमल प्रकाशन के संपादक के अनुसार संभवतः अनुवाद (अनुमान?) गड़बड़ी वहीं से हुई होगी। लेकिन यह प्रकरण यह तो बताता ही है कि हिंदी ही नहीं, अंग्रेजी पत्रकारिता की स्थिति क्या है और किस प्रकार उत्तर भारत में पेरियार के काम के प्रति जानकारी का घोर अभाव है।

कुछ अखबारों के शीर्षक, दे रहा हूं:

इंडियन एक्सप्रेस में खबर का शीर्षक : Periyarls book of poems now in Hindi, **टाइम्स ऑफ इंडिया** : Periyarls book of poems now in Hindi, **डेक्कन क्रॉनिकल** : Dravidian icon Periyarls books published in Hindi, **दैनिक जागरण** : पेरियार के विचारों को अपनी भाषा में पढ़ना एक सुखद अहसास होगा : अशोक महेश्वरी

राम-मय हिंदी और पेरियार - इस किताब से संबंधित दूसरा अनुभव हमारे अपने लेखक-समुदाय से संबंधित है, जिनके पोस्ट सोशल-मीडिया पर वायरल हो रहे हैं। इनमें से दो मुझे मिले हैं, जिन्हें कॉपी-पेस्ट कर रहा हूं।

अगर कोई हिन्दी प्रकाशक लेखकों का खून पीकर इतना पगला जाय कि भूमिपूजन के मौके पर पेरियार का रामायण बांटने लगे, तो कैसे निबटें?

- **अलेक्जेंडर पुश्किन सम्मान प्राप्त एक हिंदी-मैथिली के कवि**

पैसा कमाने के चक्कर में यह प्रकाशन संस्थान इस हद तक गिर जाएगा कि इस किस्म की भारतीय संस्कृति विरोधी (अत्यंत विवादित) पुस्तक भी छाप डालेगा, कभी सोचा न था। इसका विरोध होना चाहिए। मैं कसम खाता हूँ कि 'राज कमल प्रकाशन' को अब अपनी कोई पुस्तक प्रकाशन हेतु नहीं दूँगा।

- **एक प्रमुख हिंदी साहित्यकार**

जाहिर है, ये दोनों अनुभव सिर्फ रोचक नहीं, बल्कि त्रासद भी हैं। दूसरा तो कुछ अधिक ही। यूनेस्को ने 1970 में पेरियार को दक्षिण-पूर्व एशिया का सुकरात कहा था। लेकिन शायद हिंदी के ये लेखक नहीं चाहते कि उनकी भाषा में सुकरात या वाल्तेयर जैसों के विचार आएं। जबकि हिंदी में पाठकों का जो नया तबका आया है, नए-नए विचारों को जानना चाहता है, दुनिया को समझना चाहता है।

ये ही लेखक अपने साहित्य का 'पाठक नहीं' होने का रोना भी रोते हैं। उन्हें कहना चाहता हूं कि आप अपने साहित्य को पवित्र बनाए रखिए, क्यों क्षुद्र पाठकों के चक्कर में पड़ते हैं? वे जो पढ़ना चाहते हैं, उन्हें पढ़ने दीजिए। वे अपने दूषित विचारों से आपके साहित्य को पवित्र करने का कोई इरादा नहीं रखते। आप निश्चिंत होकर साहित्य-साधना कीजिए!

'न्यू इंडिया' की हक़ीकत

जब देश आज़ाद हुआ, उस वक्त प्रधानमंत्री नेहरू ने कहा था कि मुल्क 'ज़िन्दगी और आज़ादी' के लिए उठ खड़ा हुआ है। एक नये युग का आगाज़ हुआ है। भारत के संविधान के ऐलान के साथ डॉ. अम्बेडकर ने कहा था कि इसने 'मनु के शासन की समाप्ति की है'। आज 70 साल बाद सबको उल्टा जा रहा है। संविधान, जनतंत्र, साझी विरासत सब निशाने पर है। साझापन और बहुलता की जगह नफ़रत, अलगाव और हिंसा मूल्य बन रहा है। मोदीराज के रूप में जो 'न्यू इंडिया' है, उसकी बुनियाद फासीवाद और ब्राह्मणवाद है।

कौशल किशोर

मोदी सरकार दूसरी बार सत्तासीन हुई है। पिछली बार की तुलना में उसका मत प्रतिशत बढ़ा है। उसकी सीटों में भी इजाफा हुआ है। यह नरेन्द्र मोदी के करिश्माई व्यक्तित्व की सफलता है या एक कट्टरवादी, आक्रामक, बहुसंख्यकवादी, मर्दवादी हो रहे समाज के पक्ष में जनादेश है? संघ परिवार का संजाल, मीडिया का गोदी मीडिया में बदलता जाना, सोशल मीडिया का विस्तार, सोशल इंजीनियरिंग, विपक्ष का नकारापन व बिखराव आदि की भूमिका इस प्रचण्ड बहुमत को तैयार करने में कितनी है? जबकि जीवन की आधारभूत समस्याएं बनी हुई हैं, वे विकराल हुई हैं। अर्थव्यवस्था में लगातार गिरावट दर्ज की जा रही है। ऐसे में यह कैसी सफलता? ऐसा कैसे हुआ कि ज़रूरी मुद्दे ग़ैरज़रूरी हो गये? इसी की पड़ताल करती प्रखर वामपंथी बुद्धिजीवी व लेखक सुभाष गाताडे की क़िताब है 'मोदीनामा'। यहां मोदी-1 के शासनकाल का मूल्यांकन है, तो भविष्य का संकेत भी। साथ ही भारत के सत्तर साला लोकतंत्र के लिए चेतावनी भी है। आज जिस 'न्यू इंडिया' का प्रचार है, वह धर्मनिरपेक्ष अतीत और साम्प्रदायिक भविष्य के बीच फंसा है। यानी, भारत बदल रहा है। इस बदलते भारत को 'न्यू इंडिया' कहा जा रहा है तथा 'हिन्दुत्व का उन्माद' जिसकी खासियत है। सुभाष गताडे इसके विविध रूपों, प्रवृतियों पर चर्चा करते हैं।

'मोदीनामा' का आरम्भ अंतोनियो ग्राम्सी के जेल नोटबुक के इस विचार से होता है जिसमें वे

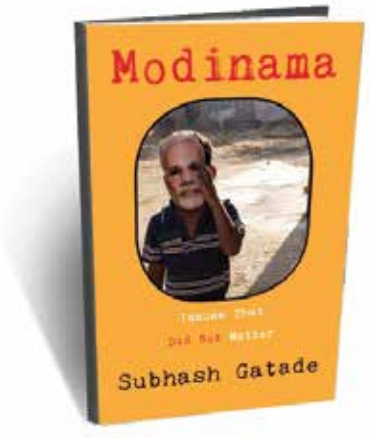

पुस्तक: मोदीनामा-हिन्दुत्व का उन्माद (हिंदी और अंग्रेजी दोनों में उपलब्ध)

लेखक- सुभाष गाताडे

प्रकाशक- लेफ्टवर्ड बुक्स, नई दिल्ली

कीमत- रुपये 195/-

कहते हैं- 'असल में संकट यह है कि पुराना मर रहा है और नया पैदा नहीं हो सकता। इस बीच के खाली जगह में लगातार अलग-अलग तरह की बीमारियों के लक्षण पनप रहे हैं।' अर्थात् मरणासन्न प्राचीन और ज़रूरी नवीन के न उदय होने से इतिहास व्याधिग्रस्त होता है। भारत इतिहास के ऐसे ही दौर में है। सुभाष गाताडे की नज़र में यह राजनीतिक विकृति है जिसकी अभिव्यक्ति बहुसंख्यकवाद के रूप में हो रही है। यदि भारत के सबसे बड़े धार्मिक अल्पसंख्यक समुदाय का कोई प्रतिनिधि संसद में सत्तासीन पार्टी से नहीं निर्वाचित होता है, तो यह सामान्य घटना नहीं है। यह भारतीय राजनीति के बदलते चरित्र का भी प्रतीक है। दक्षिण एशिया की यह विशेष परिघटना है। सुभाष गताडे ने उदाहरण देकर बताया है कि आधुनिक राज्य जिसकी बुनियाद सेकुलर रही है, उसका स्वरूप धर्म आधारित हुआ है, वह भी बहुसंख्यकवादी। इसे भारत, पाकिस्तान और बांग्लादेश में देखा जा सकता है। इन देशों में असहमति के विचार और तर्कवादी अपराधी है। वे हिंसा के शिकार बनाये गये। उन पर हमले हुए। देशद्रोह, अवमानना, मौतें, हमले, सेंसरशिप, धमकियां आम बात हो गयी हैं। अब सत्ता को अपना विरोध बर्दाश्त नहीं। उसे अंधानुकरण करने वाले भक्त चाहिए। हिंसा, हमला, अपराध आदि को अंजाम देने वाली भीड़ व टोली चाहिए।

'मोदीनामा' में प्रस्तावना और 'विचार ही अपराध' शीर्षक से भूमिका के अतिरिक्त पांच अध्याय हैं। पहला अध्याय है 'पवित्र क़िताब की छाया में'। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने संसद में प्रवेश करते समय इसे 'जनतंत्र का मन्दिर' और संविधान को 'पवित्र ग्रन्थ' की संज्ञा दी। अपने इस कथन को उन्होंने कई अवसरों पर दोहराया। जबकि उनके सामाजिक जीवन का आरम्भ और वैचारिक व्यक्तित्व का निर्माण राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ जैसे असमावेशी और हिन्दुत्ववादी संगठन से हुई जिसकी संविधान की जगह 'मनुस्मृति' में आस्था थी। यह ऐतिहासिक तथ्य है। सुभाष गाताडे यह बताते हैं कि संसद न तो मंदिर है और संविधान न तो कोई पवित्र क़िताब है। यह आस्था या दैवी प्रेरणा भी नहीं है। इसके इतर यह राष्ट्र की ज़रूरत और उसकी लम्बी प्रक्रिया की देन है जो स्वतंत्रता, समानता, न्याय और बंधुत्व पर जोर देता है। इसे किसी धार्मिक ग्रन्थ के रूप में देखना उसे जीवन व्यवहार से दूर कर मात्र पूजा की वस्तु बना देना है। यह इतिहास के पहिये को पीछे की ओर घुमाना है।

सुभाष गाताडे नरेन्द्र मोदी के मानस की पड़ताल करते हैं। औपनिवेशिक शासन के तहत दो सौ वर्षों की गुलामी की बात होती रही है। सदन में दिये अपने पहले भाषण में ही मोदी ने भारतीय इतिहास की नयी व्याख्या पेश की जहां उन्होंने

गुलामी को 'बारह सौ सालों की गुलाम मानसिकता' तक बढ़ा दिया है। यही तो आरएसएस का नज़रिया है 'जो कहता है कि मुसलमान इस देश के लिए पराये और अजनबी हैं और हम पर हज़ार साल तक हुकूमत किया है।' 'मोदीनामा' इन प्रश्नों से रूबरू है - संविधान की असली परीक्षा क्या है? वे कौन से कारक हैं जो संविधान को कमजोर कर रहे हैं? क्यों खतरे में है जनतंत्र और नागरिकता के विचार? एक तरफ डॉ. अम्बेडकर के अधिग्रहण की कोशिश और दूसरी ओर गुजरात सरकार द्वारा उनकी जीवनी की लाखों प्रतियों का नष्ट कर दिया जाना क्यों? सुभाष गाताडे का निष्कर्ष है कि यह जनतंत्र के संकुचित किये जाने के लक्षण हैं। वे इसे 'पवित्र क़िताब की छाया में एक किस्म के पागलपन' की संज्ञा देते हैं।

'लिंचिंग यानी बिना वैध निर्णय के मार डालना- यह शब्द अमेरिकी इतिहास के स्याह दौर की यादें ताज़ा करता है। 1877 से 1950 के दरमियान श्वेत वर्चस्ववादी गिरोहों ने लगभग चार हज़ार अफ्रीकी अमेरिकियों की इसी तरह हत्या की जबकि सरकार और पुलिस ने ऐसी घटनाओं की पूरी तरह अनदेखी की।' क्या यही हालत मोदी शासन की हक़ीकत नहीं है जहां गाय के नाम पर भीड़ द्वारा हत्या की जा रही है। 'मोदीनामा' के अध्याय 'लिंचिंस्तान' में दिये गये उदाहरण मर्माहत कर देने वाले हैं जहां सत्ता-संरक्षित संगठनों द्वारा साम्प्रदायिक और जातीय आधार पर खास समुदाय के लोगों को अपने हमले का शिकार बनाया गया और बनाया जा रहा है। जहां सरहद पार 'ईश निन्दा' के नाम पर भीड़ द्वारा हिंसा का बहाना है, वहीं भारत में 'गोरक्षा' के नाम पर। दोनों राज्यों द्वारा इस संबंध में कानून बनाकर इस तरह की हिंसा को वैधता प्रदान की जा रही है।

सुभाष गाताडे ने तथ्यों से इस बात को रेखांकित किया है कि कानून का राज भीड़ हिंसा के राज में तब्दील होता दिख रहा है। सुभाष गाताडे अखलाक व जुनेद से लेकर इन्स्पेक्टर सुबोध कुमार सिंह की भीड़ द्वारा की गयी निर्मम हत्या को संदर्भित करते हैं और बताते हैं कि किस तरह यह भीषण अपराध सामान्य बात होती जा रही है। वहीं, शंभुलाल रैगर जैसे कातिलों को 'धर्मयोद्धाओं' की तरह सम्मानति किया जा रहा है। इन्हें नायक बनाया जा रहा है। इनका महिमामंडन हो रहा है। सुभाष गाताडे पाकिस्तान की मशहूर कवयित्री फहमीदा रियाज की उस नज़्म को याद करते हैं जो उन्होंने बाबरी मस्ज्दि ध्वंस की पृष्ठभूमि में भारत में बढ़ते साम्प्रदायिक विभाजन पर लिखी थी और कहा था- 'तुम बिल्कुल हम जैसे निकले/अब तक कहां छुपे थे भाई/वो मूरखता वो घमड़पन/जिसमें हमने सदी गंवाई/ आखिर पहुंची द्वार तुम्हारे/अरे बधाई बहुत बधाई'। भारत के लिंचिंस्तान बनने के बरक्स सुभाष गताडे की चिन्ता में इसके सेकुलर व जनतांत्रिक स्वरूप का सवाल है, इसके लगातार क्षतिग्रस्त होते जाने

प्रखर वामपंथी बुद्धिजीवी व लेखक सुभाष गाताडे की क़िताब है 'मोदीनामा'। भारत बदल रहा है। इस बदलते भारत को 'न्यू इंडिया' कहा जा रहा है तथा 'हिन्दुत्व का उन्माद' जिसकी खासियत है। इस पुस्तक में सुभाष गताडे इसके विविध रूपों, प्रवृतियों पर चर्चा करते हैं।

का सवाल है। इस संबंध में वे उन आंदोलनों को गति देने पर जोर देते हैं जो देश को लिंचिंस्तान बनने से बचा सकता है।

'पवित्र गायें', 'जाति उत्पीड़न पर मौन' तथा 'मनु का सम्मोहन'- तीन अन्य अध्याय हैं। हिन्दुत्व के उन्माद के लिए ज़रूरी है ऐसे भावनात्मक मुद्दे जिससे इसे हवा दी जा सके। मोदी के शासनकाल में गाय को सियासत से जोड़ा गया और उसकी 'पवित्रता' को प्रतिष्ठित किया गया। भाजपा सरकार ने अपने को गाय-प्रेमी के रूप में खूब प्रचारित किया। गो रक्षा के कानून बनाये। कांग्रेस व अन्य सरकारों पर नरेन्द्र मोदी का आरोप रहा कि वे पिंक क्रान्ति चाहती हैं अर्थात बीफ क्रान्ति। 'मोदीनामा' इस गोभक्ति की असलियत को सामने लाती है। इस बारे में डॉ. अम्बेडकर, विवेकानन्द आदि के विचार दिये गये हैं। सुभाष गाताडे ने डॉ. अम्बेडकर के लेख 'क्या हिन्दुओं ने कभी गोमांस नहीं खाया?' के अंश को उद्धृत किया है। इस संबंध में दामोदर विनायक सावरकर के विचार भी उद्धृत हैं जिसमें वे गाय को पूज्य नहीं मानते। सुभाष गाताडे इस तथ्य को सामने लाते हैं कि भाजपा सरकार के लिए गाय का मुद्दा मात्र सियासी है, हिन्दुत्व का उन्माद फैलाने वाला है। उनके अनुसार आवारा गायों की संख्या पचास लाख है। गोशालाएं किसी बुचड़खाने से कम नहीं हैं। आमतौर पर भुखमरी, निर्जलीकरण और उपेक्षा गायों की मौत के कारण हैं। गोशालाओं में मरने वाली गायों के आंकड़े से मोदीराज के गो-प्रेम को बखूबी समझा जा सकता है। राजधानी दिल्ली की गोशाला में हर रोज़ बीस गायें मरती हैं। कानपुर की गोशाला में 540 गायें थीं, उनमें 152 मर गयीं। भाजपा राज्य सरकारों की ऐसी कई गोशालाओं के आंकड़े 'मोदीनामा' में दिये गये हैं। सुभाष गाताडे ने मोदीराज के उस पाखण्ड को भी उजागर किया है जहां सियासी फायदे के लिए वह मध्य भारत के इलाके में बीफ खाने का विरोध करती है, वहीं उत्तर पूर्व में इसके प्रति उसका विचार भिन्न है।

जहां 'गायें मनुष्य से अधिक पवित्र होती हैं', वहां भेदभाव पर आधारित सामाजिक व्यवस्था का पक्षपोषण है। डॉ. अम्बेडकर का इस व्यवस्था के बारे में कहना है कि यह श्रमिकों का विभाजन करती है। सवर्ण हिन्दुओं के सम्मानजनक कार्य तो अछूतों के लिए गंदे और अपमानित कार्य की ज़िम्मेदारी दी जाती है। मोदी सरकार ने इस सच्चाई पर परदा डालने के लिए जाति व्यवस्था के लिए मुग़लों और अंग्रेजों को ज़िम्मेदार ठहराया। इसके पीछे मक़सद मुसलमानों के ख़िलाफ़ हिन्दुओं की एकता स्थापित करना है। यह एकता जाति और वर्ण व्यवस्था के ढांचे बनाये रखते हुए कायम करना है। इसीलिए वह संविधान की जगह मनुस्मृति को स्थापित करने की वकालत करता है। मोदी सरकार एक तरफ स्वच्छता अभियान चलाये हुए है, वहीं आबादी का अछूत हिस्सा कचरा उठाने और गन्दगी साफ करने को अभिशप्त है। सैनिटेशन के काम में लगे लोगों की मौत के जो आंकड़े सुभाष गाताडे ने दिये हैं, वे सीमा पर और आतंकवाद से लड़ते हुए जवानों के शहीद होने की संख्या से कई गुना है। हर साल बाईस हज़ार कामगार गटर और सीवर साफ करते हुए मारे जाते हैं।

जब देश आज़ाद हुआ, उस वक्त पहले प्रधानमंत्री नेहरू ने कहा था कि मुल्क 'ज़िन्दगी और आज़ादी' के लिए उठ खड़ा हुआ है। एक नये युग का आगाज़ हुआ है। भारत के संविधान के ऐलान के साथ डॉ. अम्बेडकर ने कहा था कि इसने 'मनु के शासन की समाप्ति की है'। आज 70 साल बाद सबको उल्टा जा रहा है। संविधान, जनतंत्र, साझी विरासत सब निशाने पर है। साझापन और बहुलता की जगह नफ़रत, अलगाव और हिंसा मूल्य बन रहा है। संघ की हिन्दू राष्ट्र की जो संकल्पना रही है, दिशा उसी ओर है। एक सुपरमैन गढ़ा जा रहा है। नीत्शे की यह संकल्पना हिटलर को बहुत पसन्द थी। डॉ. अम्बेडकर का कहना था कि यह अवधारणा मनुस्मृति से निकली थी। मोदीराज के रूप में जो 'न्यू इंडिया' है, उसका स्रोत यही है। इसकी बुनियाद फासीवाद और ब्राह्मणवाद है। 'मोदीनामा' का मतलब उसी दिशा की ओर देश को ले जाना है।

संपर्क : 8400208031

यही तो चाहते हैं वे

गाँव और शहर की कविताएँ

डॉ नीलोत्पल रमेश

समकालीन कविता अपने कथ्य और शिल्प दोनों में अलग दिखाई पड़ती है। ये कथ्य और शिल्प पूर्व के कवियों से सर्वथा नवीन हैं जिसमें इनके समय का यथार्थ और संघर्ष दिखाई पड़ता है। इन्होंने अभिव्यक्ति के लिए बनी- बनाई परंपरा को तोड़ा है। ये किसी फॉर्म में बंधे हुए नहीं हैं, न किसी की राह के अनुसरण करने वाले हैं, बल्कि अपना रास्ता ये खुद बना रहे हैं। युवा कवियों ने अपनी कविताओं में जिन प्रतीकों और बिम्बों का प्रयोग किया है उनमें से अधिकांश प्रतीक और बिम्ब इनके समय के हैं। ये किसी से मेल नहीं खाते हैं।

आज की युवा कविता की जब भी बात प्रारम्भ होगी तो प्रेम नंदन के बिना अधूरी ही रह जायेगी। युवा कवियों में प्रेम नंदन ने अपनी कविताओं के माध्यम से आलोचकों का ध्यान अपनी ओर खींचा है। यही कारण है कि कई जाने-माने आलोचकों ने अपने आलेखों में प्रेम नंदन की कविताओं की चर्चा की हैं। प्रेम नंदन की अपनी शैली और भाषा है, जो गाँव और शहर की भाषाओं से निर्मित हुई है। इसमें दोनों ही जगहों की मार्मिक अभिव्यक्ति देखने को मिलती है। जब ये अपनी कविता में गाँव की बात करते हैं, तो गँवई संस्कार से परिपूर्ण दिखाई पड़ते हैं। वहीं जब शहर की चर्चा की बात आती है तो ये शहरी लगने लगते हैं। इनकी लेखनी से कोई बात छूट न जाए, इस बात का पूरा ध्यान रखते हैं।

'यही तो चाहते हैं वे ' प्रेम नंदन का दूसरा कविता संग्रह है, जिसका दूसरा संस्करण अभी हाल ही में प्रकाशित होकर आया है, जिसमें उनकी 58 कविताएँ संकलित हैं। इसके पूर्व उनका एक कविता संग्रह - 'सपने जिंदा हैं अभी' प्रकाशित है। इनकी कविताओं को अलग से ही पहचाना जा सकता है, क्योंकि ये कवितायें आम बोलचाल की भाषा में अपने समय को अभिव्यक्त करने में पूरी तरह से सफल हुई हैं। अपनी भाषा को कथ्य और परिवेश के अनुरूप ढालने की कला इन्हें खूब आती है। यही

प्रेम नंदन की अपनी शैली और भाषा है, जो गाँव और शहर की भाषाओं से निर्मित हुई है। इसमें दोनों ही जगहों की मार्मिक अभिव्यक्ति देखने को मिलती है। जब ये अपनी कविता में गाँव की बात करते हैं, तो गँवई संस्कार से परिपूर्ण दिखाई पड़ते हैं। वहीं जब शहर की चर्चा की बात आती है तो ये शहरी लगने लगते हैं। इनकी लेखनी से कोई बात छूट न जाए, इस बात का पूरा ध्यान रखते हैं।

कारण है कि इनकी कविताओं की विषयवस्तु अपने परिवेश से ही ली गई है, जिसे पढ़ते समय पाठक को अपनी लगने लगती है या अपने आसपास दिखाई पड़ने लगती है।

प्रेम नंदन की कविता के बारे में चर्चित आलोचक उमाशंकर सिंह परमार ने लिखा है- "प्रेम नंदन ग्रामीण बोध के कवि हैं। उनकी कविताओं में महानगरीय जीवन के बिम्बों और संवेदनाओं का अभाव है। संवेदनाओं और अनुभवों की विनिर्मित में एक अजीब-सी ग्राम्य टोन है जो कविताओं में अंडर करंट की तरह दौड़ती है। इससे कविता में आकाश का विस्तार होता है, मनुष्य और उसकी जमीन के प्रति आत्मीय लगाव दिखाई देता है। बदलती प्रकृति और बदलते रिश्तों के बीच अपनी जमीन से रागात्मक लगाव की अभिव्यक्ति उनकी कविताओं की प्राणानुभूति है, जो बाहर की आपाधापी की अभिव्यक्ति के साथ ही आत्मीय गाढ़ेपन के सभी छोरों को छूती हुई संस्कार, स्वाभाव और विचारों की संवेगात्मक दुनिया में ले जाती है।"

प्रथम संस्करण की भूमिका में प्रसिद्ध कवि और सम्पादक सुधीर सक्सेना ने प्रेम नंदन की कविताओं के बारे में लिखा है - "उसकी कविता त्रासद प्रवृत्तियों और षड्यंत्रों को लगातार चीन्हती और उजागर करती है। वह बेसाख्ता उनके खिलाफ है, जो आधी आबादी को सुई की नोक के बराबर भी जगह नहीं देना चाहते हैं। कवि अपनी पहचान को लेकर ग्लानिग्रस्त नहीं है।"

दूसरे संस्करण की भूमिका में प्रसिद्ध कवि - सम्पादक कौशल किशोर ने प्रेम नंदन की कविताओं के बारे में लिखा है - "प्रेम नंदन की कविताएं समय, समाज और जीवन के द्वंद्व से पैदा होती हैं। इसी से उनकी वैचारिकी निर्मित होती है तथा इसी पर खड़े होकर वे अपने समय में हस्तक्षेप करते हैं, समस्याओं से रूबरू होते हैं। उनके सौंदर्यबोध का निर्माण भी इसी से होता है। इन कविताओं में केदार, शील, जैसे श्रमिक जीवन से जुड़े कवियों की परम्परा मिलती है। "

'यही तो चाहते हैं वे' कविता से ही मैं अपनी बात प्रारम्भ करूँगा। इस कविता के माध्यम से प्रेम नंदन ने आम आदमी की आवाज बनते लोगों को आपस में लड़ाकर सत्ता के सिंहासनों पर बैठे लोग अपनी राजनीतिक रोटियां सेंकने में कैसे लगे हैं - इसकी बहुत ही मार्मिक अभिव्यक्ति देने की कोशिश की है। सत्ता के शीर्ष पर बैठे लोग यही चाहते हैं कि आम लोग गोलबंद न हों, नहीं तो उनका इस पर बने रहना मुश्किल हो जाएगा। यही कारण है कि उनकी कमियों की ओर ध्यान दिलाने वालों को आपस में लड़ने के लिए मजबूर कर देते हैं, जिसमे उन्हें सफलता भी मिल जाती है। इसे इस प्रकार देखा जा सकता है -

"उन्होंने फेंके कुछ ऐंठे हुए शब्द
हमारे आसपास

प्रसिद्ध कवि और सम्पादक सुधीर सक्सेना ने प्रेम नंदन की कविताओं के बारे में लिखा है - ''उसकी कविता त्रासद प्रवृत्तियों और षड्यंत्रों को लगातार चीन्हती और उजागर करती है। वह बेसाख्ता उनके खिलाफ है, जो आधी आबादी को सुई की नोक के बराबर भी जगह नहीं देना चाहते हैं। कवि अपनी पहचान को लेकर ग्लानिग्रस्त नहीं है।''

और लड़ने लगे हम
आपस में ही

वे मुस्कुरा रहे हैं दूर खड़े होकर
और हम लड़ रहे हैं लगातार
एक दूसरे से
बिना यह समझे
कि यही तो चाहते हैं वे"

'निर्जीव होते गाँव' कविता के माध्यम से कवि ने गाँव की जीवंतता को खत्म होते दिखाया है। गाँव में टैक्टर आ जाने से खेती के पुराने साधन बेकार हो गए हैं। गाँव के युवा शहरों में काम करने को विवश हैं, अपनी आजीविका के लिए। किसान अपनी उपज और घरेलू सामानों को शहरों में बेचने को मजबूर हैं। उनके बच्चे उन्हें देखते रह जाते हैं। गाँव में जीने की संभावना ही खत्म होती जा रही है। इसे कवि ने इस प्रकार लिखा है -

"जीने की खत्म होती
संभावनाओं से त्रस्त
खेतिहर नौजवान पीढ़ी
खच्चरों की तरह पिसती है
रात-दिन शहरों में
गालियों की चाबुक सहते हुए

गाँव की जिंदगी
नीलाम होती जा रही है
शहरों के हाथों
और धीरे-धीरे
निर्जीव होते जा रहे हैं गाँव "

'सपने जिंदा हैं अभी' कविता के माध्यम से कवि ने सपनों के जिन्दा रहने की बात की है। सपने कभी मरते नहीं हैं, किसी न किसी रूप में हमेशा जिन्दा रहते हैं। इन्ही सपनों में जिजीविषा जिन्दा है। जिसके सहारे लोग अपना जीवन गुजार लेते हैं। हम यह भी जानते हैं कि सपने, अपने नहीं होते, फिर भी हम इन सपनों के सहारे ही शेष जीवन बिता लेते हैं। सपने कभी मरते भी नहीं हैं` कवि ने इसे इस प्रकार कहा है -

"एक कवि ने
देखे थे जो सपने
सामाजिक समरसता के
आडंबर, पाखण्ड, जात-पाँत, छुआछूत से
मुक्त समाज के
उसके मार दिए जाने के बाद भी
जिन्दा हैं वे अभी
उसकी रचनाओं में

मर नहीं गए हैं सब सपने

आज की युवा कविता की जब भी बात प्रारम्भ होगी तो प्रेम नंदन के बिना अधूरी ही रह जायेगी। युवा कवियों में प्रेम नंदन ने अपनी कविताओं के माध्यम से आलोचकों का ध्यान अपनी ओर खींचा है। यही कारण है कि कई जाने-माने आलोचकों ने अपने आलेखों में प्रेम नंदन की कविताओं की चर्चा की हैं।

कुछ सपने जिन्दा हैं अब भी "

'गाँव की पगडंडियाँ ' कविता के माध्यम से कवि ने गाँव की पगडंडियों को समझाकर शहर की ओर आने से मना किया है। उसने उन्हें यह कहकर रोका है कि शहर में तुम्हारा अस्तित्व ही मिट जायेगा। इसलिए तुम सब यहीं पर ही रहो। यहीं पर रहना ही तुम्हारे लिए बेहतर है। कवि तो स्वयं ही गांव और शहर के बीच झूल रहा है। उसकी स्थिति धोबी के कुत्ते की सी हो गई है - न वह घर का रह गया हैं, न घाट का। यानी ग्रामीण संस्कृति गाँव में ही सुरक्षित है। उसे वहीं पर बचाये रखने की आवश्यकता है। कवि ने लिखा है -

"हर बार गाँव से लौटते समय
कन्धों पर झूल - झूल जाती हैं
मेरे गाँव की पगडंडियाँ
वे आना चाहती हैं शहर
मेरे साथ

मेरे कन्धों से उतर कर
थोड़ा गुस्सा और बहुत -सी निराशा से
ताकती हैं एकटक
वे मुझे देर तक
हर बार छोड़ आता हूँ
गाँव की सरहद पर खड़े
बूढ़े बरगद के नीचे उन्हें।"

'बिना जवान हुए ' कविता के माध्यम से कवि ने गरीबी में जीवन बसर करने वाले लोगों के घर जन्मी बेटी के दुःख - दर्द को वाणी देने की कोशिश की है। एक गरीब माँ -बाप की बेटी बिना जवान हए ही बूढी हो गई है। उसकी बेबसी, लाचारी और गरीबी ने उसे असमय ही बूढ़ी बना दिया है` वैसे उसके मन में भी अनेक सपने पल रहे थे, लेकिन वे सब धरे के धरे ही रह जाते हैं। जब वह सुनती है कि उसके माँ -बाप दहेज न दे पाने की वजह से उसकी शादी करने में असमर्थ हैं, तो उसने जवानी में ही बुढ़ापे की चादर ओढ़कर, शेष जीवन यूँ ही गुजार देने का संकल्प ले लिया है। कवि ने इसे यों व्यक्त किया है -

"उस समय उसने
आँखों में भर ली
रेगिस्तान की शुष्कता
चेहरे पर ओढ़ ली
पठारों की खामोशी
समेटकर जीवन का प्रत्येक कोण
समय से बहुत पहले ही
ओढ़कर बुढ़ापा
बूढी हो गई
गरीब माँ -बाप की इकलौती बेटी। "

'राजमार्गों से बेदखल ' कविता के माध्यम से कवि ने 'भारत निर्माण' और 'शाइनिंग इण्डिया' जैसे चुनावी नारों की वास्तविकताओं से पाठकों को परिचित करवाया है। संविधान की दुहाई देकर देश की जनता को बार-बार ठगा ही जाता है, लेकिन सत्ता के सिंहासन पर बैठे लोग सिर्फ लुभावने नारे देकर ही रह जाते हैं। इसके लिए वे कुछ काम करते नजर नहीं आते हैं। वे सिर्फ अपनी राजनीतिक रोटियाँ ही सेंकने में ही लगे रहते हैं। यहाँ की जनता अपने तिरंगे के चक्र को गतिमान करना चाहती है, लेकिन इसमें स्वयं को ही ढोती नजर आ रही है। इसे कवि ने इस तरह व्यक्त किया है -

"इतना सब होने के बावजूद वह
अपनी अटूट जिजीविषा से
घुन लगी हड्डियों
और भ्रष्टाचार के कोढ़ से
गल चुके शरीर को

रोज अपने खून के आंसुओं से धोता है
और तिरंगे के रुके हुए चक्र को
गतिमान करने की कोशिश में
खुद को अपने कंधो पर ढोता है।"

'धान रोपती औरतें' कविता के माध्यम से कवि ने धान रोपने वाली औरतों के श्रम और लगन का वर्णन किया है, इन्हे वर्षा- धूप से कोई लेना-देना नहीं है, ये तो प्रत्येक परिस्थिति का सामना करते हुए रोप रहीं हैं धान को, ताकि इसकी सुनहरी बालियों के माध्यम से सुखमय जीवन जिया जा सके। इसे कवि ने इस प्रकार से लिखा है -

"बादलों को ओढ़े हुए
कीचड़ में धंसी हुई
देह को मोड़ कमान-सी
उल्लसित तन-मन से
लोकगीत गाते हुए
रोप रहीं धान
खेतों में औरतें "

'रोपनी करते हुए' शीर्षक से मेरी भी एक कविता है। इन दोनों कविताओं का तारतम्य लगभग एक ही है। कैसे कवि की दृष्टि एक ही विषय पर आकर अभिव्यक्त हो जाती है, इसे कविता की कुछ पंक्तियों के द्वारा समझा जा सकता है -

"धान रोपते हुए
पूरी ताकत से
रोपती आ रही हैं पृथ्वी में
अपने जीवन की जड़ें "

'आधी आबादी का सच' कविता के माध्यम से कवि ने आधी आबादी की सच्चाई से पाठकों को परिचित करवाया है। जब ये आधी आबादी सधे हुए कदमों से आगे बढ़ती है, तो उन्हें बेचैनी छा जाती है। वे उन्हें रोकने में ही अपने को पूरी तरह से लगा देते हैं। उस समय उनकी पुरुषवादी मानसिकता साफ-साफ देखी जा सकती है। यह कविता प्रतिरोधी स्वर को मुखर करती है। कवि की ये पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं-

"आधी आबादी होने के बाद भी
कुंडली मारकर बैठे हैं वे
हमारे अस्तित्व पर
गोया वे दुर्योधन हैं
जो हमारे सपनों और इच्छाओं को
फलने- फूलने के लिए
कहीं भी
सुई की नोक के बराबर भी
जगह देने को तैयार नहीं हैं "

प्रेम नंदन की ये कवितायें आम बोलचाल की भाषा में अपने समय को अभिव्यक्त करने में पूरी तरह से सफल हुई हैं। अपनी भाषा को कथ्य और परिवेश के अनुरूप ढालने की कला इन्हें खूब आती है। यही कारण है कि इनकी कविताओं की विषयवस्तु अपने परिवेश से ही ली गई है, जिसे पढ़ते समय पाठक को अपनी लगने लगती है या अपने आसपास दिखाई पड़ने लगती है।

'आततायी आंधियां ' कविता के माध्यम से कवि ने देश की वर्तमान परिस्थिति की ओर ध्यान दिलाया है। आततायी लोग पूरी मानवता के दुश्मन हैं इन्हे किसी से कोई मतलब नहीं है। ये लोग सिर्फ अपने मिशन में लगे रहते हैं - खून-खराबा करके। ये किसी को भी, कहीं भी अपने खूनी पंजों से रक्तरंजित कर सकते हैं। उनकी इस टोली में देश के ही बेरोजगार युवक शामिल हैं कवि ने इसे इस तरह से व्यक्त किया है -

"इनके खूनी पंजों से
रक्तरंजित हो चुके हैं
देश सभी - शहर सभी
ये उजाड़ती हैं गोद मांओं की
पोंछती सिन्दूर सुहागिनों के
बच्चों को करती अनाथ
छीनती हैं लाठियां वृद्धों की "

'सबसे बेहतरीन कविता' कविता के माध्यम से कवि ने बुद्ध की बेचैनी को अनुभूति करने की बात की है। जब कवि के अंदर बेचैनी का समुद्र लहरा उठेगा, तभी सबसे बेहतरीन कविता जन्म लेगी इसे देखिये -

"जिस दिन
दूब बनकर उगेगी
हमारे भीतर
बुद्ध की बेचैनी
और हम
अपनी समस्त इन्द्रियों की
सजगता सहेजकर
उठ खड़े होंगे
उस दिन टपकेगी
उजाड़ और बंजर जमीन पर
इस दुनिया की
सबसे बेहतरीन कविता "

'रास्ते फिर वहीं से निकलेंगे ' कविता में कवि ने जुल्मों से टक्कर लेकर नए रास्तों के निकलने की बात की है। यानी जनता के बीच में पहुंचकर ही समस्याओं का समाधान हो सकता है इसे इस तरह से कवि ने व्यक्त किया है -

"लहूलुहान समय
अपने जख्मों को
कुरेदकर
पैदा करना चाहता है ऐसे आग
भष्म हो सकें जिसमें
जालिमों के जुल्म "

'अखबार पढ़ती अम्मा ' कविता के माध्यम से कवि ने एक बिन पढ़ी-लिखी अम्मा की बेचैनी का वर्णन किया है। वह अम्मा प्रतिदिन अखबार के पन्नों को उलट-पुलट कर देखती है। उसके चित्रों और शब्दों पर पैनी नजर दौड़ाती है। इतने से ही वह संतोष का अनुभव कर लेती है। इसे इस तरह से कवि ने लिखा है-

"बड़े गौर से देखती है
एक-एक शब्द
और उसमें छपे चित्र
चित्रों-अक्षरों से खेलती अम्मा
पलक झपकते ही
बदल जाती है
तीसरी कक्षा में पढ़ रही मेरी बेटी में"

"यही तो चाहते हैं वे" कविता संग्रह के माध्यम से प्रेम नंदन ने अपनी मजबूत उपस्थिति दर्ज की है। ये कविताएं समकालीन कविता में हस्तक्षेप करती हैं और आलोचकों का ध्यान अपनी ओर खींचने में सफल रहीं हैं। किसी भी स्तर पर जाकर इन कविताओं को जांचा - परखा जा सकता है। हर कसौटी पर ये कवितायें खरी उतरती हैं। एक बार पढ़ना शुरू करने के बाद बिना पूरा पढ़े संग्रह को छोड़ने का मन नहीं करता है।

संपर्क: 9931117537

पुस्तक-यही तो चाहते हैं वे
कवि- प्रेम नंदन **नाट्य**
प्रकाशक- लोकोदय प्रकाशन, लखनऊ -226001
मूल्य-170/
पृष्ठ-112

बुद्धिनाथ मिश्र

कवि सूर्य : पं. सूर्यनारायण व्यास !

कहते हैं कि व्यास व्यक्ति सूचक नाम नहीं, परंपरा का नाम है। मैं भी मानता हूँ कि वह परम्परा हमारे समय तक आयी है, जिसके नवीनतम बहुमूल्य मोती उज्जैन के पं. सूर्य नारायण व्यास थे। उनके पांडित्य के समक्ष महात्मा गाँधी भी 'श्रद्धेय' कह सिर झुकाते थे। 1947 में जब अंग्रेजों ने भारत छोड़ने का निश्चय कर लिया, तब डॉ. राजेन्द्र प्रसाद ने उनके परामर्श से ही 14-15 अगस्त की मध्य रात्रि में स्वतंत्र भारत के जन्म की घोषणा की थी। दिग्गज विद्वान और साहित्यकार पं सूर्यनारायण व्यास (मार्च 1902-जून 1976) भगवान कृष्ण के गुरु महर्षि सांदीपनि के वंश में उत्पन्न थे। उनके विशद ज्ञान और पराक्रम के कारण लोग उन्हें 'जीवित विश्वकोश या' 'चलता-फिरता सूरज' मानते थे। उनकी एक विलक्षण विशेषता यह थी कि वे दोनों हाथों से एक समय में एक साथ दो पृथक विषयों पर लिख सकते थे! वे ज्योतिष के प्रकांड विद्वान थे। उनकी सैकड़ों भविष्यवाणियाँ अक्षरशः सत्य सिद्ध हुईं। उन्होंने 1942 में ही भविष्यवाणी की थी की 2020 के बाद भारत अपनी खोयी हुई प्रतिष्ठा पुनः प्राप्त कर लेगा। वे स्वतंत्रता संग्राम के प्रमुख क्रान्तिकारी और देशभक्त थे। 1930 के 'अजमेर सत्याग्रह' पिकेटिंग में उन्होंने उज्जैन के जत्थे का नेतृत्व किया था। नेताजी सुभाष के आह्वान पर उन्होंने लॉर्ड मेयो के स्टेचू को तोड़ा और यादगार के रूप में उसका दाहिना हाथ बरसों अपने आवास 'भारती भवन' में रखा। उनका घर क्रांतिकारियों के छिपने का सुलभ स्थान था। एक बार क्रांतिकारी छैल बिहारी को गिरफ्तार करने के लिए पुलिस ने चारों ओर 'भारती भवन' को घेर लिया। तब पंडितजी ने उन्हें धोती, गमछा, भस्म - चन्दन, फूलमाला आदि से विशुद्ध पुजारी बनाकर भवन के पीछे के रस्ते से महाकालेश्वर मंदिर पहुंचा दिया। वहां पुलिस उनको पुजारी के बाने में पहचान ही नहीं पायी। 1942 में उन्होंने क्रांतिकारियों के लिए एक गुप्त रेडियो स्टेशन भी चलाया। 1946 में इंडियन डिफेन्स एक्ट के तहत नजरबन्दी और जेलयातना भी भुगती, मगर इसके लिए न तो पेंशन स्वीकार किया, न ताम्रपत्र ही। विक्रम संवत के प्रचार प्रसार हेतु उन्होंने 'विक्रम' पत्र का प्रकाशन शुरू किया था, जो मध्य भारत का सबसे बड़ा प्रेस था। उज्जैन को उज्जयिनी बनाने वाले व्यासजी के प्रति नगर का चप्पा-चप्पा कृतज्ञ है। बिना किसी पद पर रहते हुए उज्जैन में विक्रम विश्वविद्यालय, विक्रम कीर्ति मन्दिर, अ. भा. कालिदास समारोह, कालिदास अकादेमी नर्मदा घाटी, सभ्यता का अनुसंधान, प्राचीन नगरी का पुरातात्विक उत्खनन, सांदीपनि आश्रम का उद्धार, अ.भा. कालिदास परिषद्, राष्ट्रीय स्तर का कालिदास समारोह, सिंधिया शोध प्रतिष्ठान, विक्रमादित्य द्विसहस्राब्दि समारोह का ऐतिहासिक आयोजन जैसे बड़े-बड़े कार्य किसी एक व्यक्ति के प्रताप से होना आज अविश्वसनीय-सा लगता है। उनके कारण साहित्य, संगीत, राजनीति, अध्यात्म, खगोलशास्त्र से जुड़ा कौन ऐसा मनीषी होगा, जो उज्जैन नहीं आया होगा! 'विक्रमादित्य' फिल्म बनाने के लिए उन्होंने पृथ्वीराज कपूर को भी उज्जैन बुला लिया था। उनकी शिक्षा-दीक्षा वाराणसेय संस्कृत विश्वविद्यालय में हुई थी। कालजयी कालिदास, वसीयतनामा, व्यास उवाच, रत्न विज्ञान, संवत प्रवर्तक सम्राट विक्रम, यादें,

पं. सूर्यनारायण व्यास ने कविता से ही लेखन का प्रारम्भ किया था। हरिऔध जी भांति वे प्रांजल भाषा में भारत के सांस्कृतिक वैभव को गाने वाले कवि थे। जीवन की व्यस्तताओं में उनका कवित्व उतना उभरकर सामने नहीं आ पाया। पर वे अंतिम क्षण तक भी कविता लिखते रहे! लोकसंस्कृति, लोककला और लोकसाहित्य को बचाने के क्रम में उनके द्वारा स्थापित राष्ट्रीय लोकभाषा कवि सम्मेलनों की परंपरा भी स्तुत्य है।

उज्जैन के कालिदास समारोह में सूर्य नारायण व्यास

अनुष्टुप, मध्य भारत की विशिष्ट विभूतियाँ आदि उनके प्रकाशित ग्रन्थ हैं। उनके अप्रकाशित साहित्य का विपुल भंडार है, जिसे 25 खण्डों में समेटने के लिए उनके सुपुत्र दूरदर्शन व आकाशवाणी के अपर महानिदेशक राज शेखर व्यास प्रयत्नशील हैं। मध्य प्रदेश सरकार ने जीवन के अंतिम चरण में उनका नागरिक अभिनन्दन किया था, जिसमें राज्यपाल, मुख्यमंत्री, देश के तमाम साहित्यकार, राजनेता आदि उपस्थित थे। 1958 में भारत सरकार ने उन्हें साहित्य-संस्कृति के उत्थान में महनीय योगदान के लिए 'पद्मभूषण' अलंकरण से सम्मानित किया, जिसे 1967 में भारत सरकार द्वारा अंग्रेजी को अनंतकाल तक जारी रखने के विधेयक से असहमति और असंतोष जताते हुए उन्होंने लौटा दिया। उन्होंने कविता से ही लेखन का प्रारम्भ किया था। हरिऔध जी भांति वे प्रांजल भाषा में भारत के सांस्कृतिक वैभव को गाने वाले कवि थे। जीवन की व्यस्तताओं में उनका कवित्व उतना उभरकर सामने नहीं आ पाया। पर वे अंतिम क्षण तक भी कविता लिखते रहे! लोकसंस्कृति, लोककला और लोकसाहित्य को बचाने के क्रम में उनके द्वारा स्थापित राष्ट्रीय लोकभाषा कवि सम्मेलनों की परंपरा भी स्तुत्य है।
1962 में चीनी आक्रमण के अवसर पर लिखी उनकी 'यह हिमशैल हमारा है'-

जिस हिमशैल शिखर से निकली
शीतल जल की धारा,
भारतीय के उष्ण रक्त को उसने आज पुकारा।
किया धार ने जिस गंगा की
जन-मन को अभिसिंचित,
जिसमें हुए देवताओं के पावन पुष्प विसर्जित।

उसी अमल सलिला को आज किया शोणित ने लाल,
धवल धौत हिम तुंग क्षृंग का बना रकतमय माला।

जो अजेय था, दृढ़ प्रहरी था, मानदंड धरणी का,
गिरिकन्या का क्रीड़ांगन था और मुकुट जननी का।

पर्वत झ सुता पुकार रही है, उसी की लाज बचाओ,
शिव-शंकर कर लो त्रिशूल,
तांडव का नृत्य दिखाओ।

बनें भगीरथ भारतवासी शोणित धार बहाएँ,
प्रलयंकर बन बीन-बीन चीन को भेंट चढ़ाएँ।

लाल-लाल लपटें प्रकटें औ त्राहि- त्राहि मच जाएँ,
दिव्य मूर्ति भारत झ मानव की चंड़ रूप दिखलाए।

सावधान सिध्दांतहीन, विश्वासहीन ओ चीन,
शुद्ध बुध्द के अनुयायी तुम, कैसे कुटिल मलीन।

निकट नाश को किया निमंत्रित
हिम को आज तपाया,
राष्ट्र-सिंह को भरी नींद से छेड़ा और जगाया।

हिम-गिरी की चोटी से चढ़ कर
आज हमें ललकारा,
भारत के नरसिंहों, जागो। यह हिमशैल हमारा।

नाविक

नाविक, मेरे हृदय- सिंधु मे उमड़,
रही है लहरें,
तू ले जाता कूल निकट है,
मैं जाता हूँ गहरे।
पथ में अगणित भंवर पड़े है,
आँधी है तुफान,
और निराशा की रजनी है
काली, कहना मान!
बहने दे, जीवन नौका को
अब मत लगा सहारा!
इस जगती में ऐकाकी है,
जीवन, सखे! हमारा!

(मृत्यु पूर्व लिखी कविता)

काश्मीर
निर्झर - तीर शीला पर बैठे बने चित्रवत वाह।
संस्मरणों के द्वार न खोलो 'टीस' उठेगी आह।।

सौध झशिखर- निर्झर-वनराजी
'पहलगांव' की 'बात'।
रम्य-सुमन-सज्जित-वन-उपवन
हिमस्नात-वे 'प्रात'।।

वह निकुंज, सुर-सरिता
'डल'-सी गुरूतर-गिरिवर-माला।
मनो-मोहिनी, हिमकिरीटिनी,
प्रकृति की मधुशाला।।

रंग-बिरंगी, सुरभित, सजजित,
कुसुम क्यारियाँ प्यारी।
विविध लता-लावण्यमयी
तरूवर से लिपटी न्यारी।।

कुंज-कुंज तरू-लता पुंज भी
फल-सुमनावृत श्रांत।
प्रणयिजनों के हिय-तल को वे
करते मधुमय शांत।।

क्लांत-पथिक का, विरह व्यथित का,
स्मृति का लिए सहारा।
'शालीमार-निशात' खड़े हैं ले 'इतिवृत्त' हमारा।।

सरस-लता-पल्लव-सुमनों से सुरभित शत-उद्यान।
जन-मन अनुरंजित करते हैं, हर लेते हैं ध्यान।।

डॉ. राधाकृष्णन एवं राजेंद्र बाबू के साथ क दुर्लभ चित्र

कुंचित-केशमयी कामिनियाँ रूप-राशि अम्लान।
शुभ्र कुमुदिनी-सी,
कर्दम-मय मलिन-वसन, अज्ञान।।

काश्मीर के वन्य-कुसुम-सी, जन-मन करत भ्रांत।
चंचल-मीनों-सी, चितवन-सी,
निर्विकार औ-शांत।।

मंद-मलय-मय, सुधा-मधुरतम बहती नित्य समीर।
विरह-विधुर-मन को, रसमय कर,
हरती अंतर पीर।।

जल-मय जीवन की सुंदरता, सुषमामयी अनन्य।
प्रतिबिमबित, जगमग-आलोकित,
प्रेक्षणीय बस धन्य।
सृष्टि-सुंदरी सुरपुर-सी है, 'काश्मीर' तू धन्य।
तेरे जन-मन, जल-थल, द्रुम-दल,
सुमन-वन्य सब धन्य।।

(मार्च-1946)

असमंजस

असमंजस, संकोच बड़ा है, होती मुझको लाज!
पर न कहूं कैसे? मेरा हिय, बिखर पड़ रहा आज!
आज हृदय-सागर में उठती तुंग तरंगे आती,

दिग्गज विद्वान और साहित्यकार पं सूर्यनारायण व्यास (मार्च 1902-जून 1976) भगवान कृष्ण के गुरु महर्षि सांदीपनि के वंश में उत्पन्न थे। उनके विशद ज्ञान और पराक्रम के कारण लोग उन्हें 'जीवित विश्वकोश या' 'चलता-फिरता सूरज' मानते थे। उनकी एक विलक्षण विशेषता यह थी कि वे दोनों हाथों से एक समय में एक साथ दो पृथक विषयों पर लिख सकते थे! वे ज्योतिष के प्रकांड विद्वान थे।

बार-बार तूफानी बनकर दृग-तट से टकराती,
छूट रहे हैं अंतस्तल से टकरा कर फव्वारे,
चाहे इनको कह लेना तुम, 'ऑसू' है यह खारे!
इसी ज्ञार-वारि से हिय का धोता हूँ मैं पाप!
और निरंतर धुला जा रहा हूँ बनकर 'संताप'!

पाप और परितापों की तुम मत पूछो परिभाषा!
अरमानों की अमरवेदी पर जला रहा अभिलाषा!
वही निरंतर भस्म-भार से उन्मत बन कर 'होली'!
ढेर हो रही है, भरता हूँ,
इस जीवन की झोली,
और लिखूँ क्या? तुम्ही बताओ,
विरह, वेदना गान?
करूणा की भी सूख रही है अविरल बहती खान!
और संग-ही में मैं इसके भुला रहा हूँ ज्ञान,
इतना ही जानूँ हूँ तुमको कुछ मेरी पहचान!
हो तुम मेरी अमरवल्लरी, कल्पलता-सी प्यारी!
सूखे, इस द्रुम-शीर्ण की करती हो रखवारी!
तुम में मेरे मनो-राज्य के देख रहा हूँ सपने!
सुख-दुख के, स्मृति के, संबल के,
सारे हिय के, अपने!!
बोलो, ओ-सपनों की रानी! इस माया का छोर -
नहीं मिलेगा? या सपना है, इस जीवन में और?
बहुत हुआ, थोड़े में अपना रक्खा हिय-सर्वस्व,
मैं तो तुम को सौंप चुका हूँ अपना कर सर्वस्व!
(जुलाई-1942)

आज की परिस्थिति में भी उनकी कविता उतनी ही सटीक है जितनी कल थी!

संपर्क: 8130470059

केशव शरण

खीर

आज का दिन
घास पर
बीता लूंगा
ओस चाटकर
बाकी प्यास पर
बीता लूंगा

जोगी निकलता है
यह नहीं सोचकर
कि दाल-चावल
और ठंडा जल मिलेगा

तकदीर होती है
कि जोगी के आगे
खीर होती है

सीढ़ियां और रास्ते

सीढ़ियां
कब कहती हैं
न चढ़ो,
रास्ते कब कहते हैं
न बढ़ो

सीढ़ियां
एक ऊंचाई पर
पहुंचा देंगी,
रास्ते
बहारों की मंज़िल ला देंगे

सीढ़ियों पर
सदियों की काई है,
रास्ते पर
युगों के कांटे

दिल

दिल
प्यार
ढूंढ़ता है
जो किसी दिल में
रखा है

दुनिया में
इतने दिल
और उनमें
किसमें

दिल
किस हद तक
परेशान नहीं है,
प्यार ढूंढ़ना
आसान नहीं है

ढूंढ़ते-ढूंढ़ते दिल
टूटता है
होकर परेशान-पागल
छाती कूटता है

ध्यान

ध्यान लगाओ
कहने की बात है
सच में
ध्यान हटाओ है
आग से
पानी से
हवा से
पत्थर से

लेकिन ध्यान इनसे हटता नहीं है
इसलिए शून्य में लगता नहीं है

मेरा जीवन, मेरी दुनिया

न चांद ख़्वाब का
न पता इंकलाब का
जो मेरे मन के महाशून्य को
भर दे

यह तो मेरा जीवन,
यह तो मेरी दुनिया !

कितना बहलायेंगे मुझे जुगनू
कितनी बहलायेगी चिड़िया !

मामला

मामला फंसा है :
आत्महत्या
कि हत्या ?

जांच जारी है
अंधेरे में

एक-एक कर
सब बरी हो रहे हैं
जो हैं
संदेह के घेरे में

विरोध यह है

जालिम
मारा गया
यह तो ठीक
विरोध यह है कि
जालिम
जालिमाना तरीके से क्यों मारा
गया आवेश में ?
ठंडे दिमाग वाले रहमदिल
जल्लाद नहीं हैं क्या
देश में ?

नया शिगूफा

यह जो
खून-पसीना
हमने बहाया है
हमें इसका सिला मिलेगा
दिव्य फूल खिलेगा
उसकी खुश्बू से
हमारा जीवन महकेगा

वह जो विश्वास दिलाया गया
था
उसका क्या हुआ
कि अब नया शिगूफा
खिलाने चलें हम
फिर खून-पसीना
बहाने चलें हम ?

बाजार-समय

कौन जानता था
आवश्यकताओं की भी
दो कोटियां हो जायेंगी
एक आवश्यक
और एक अनावश्यक

आविष्कार भी
दो तरह के हो जायेंगे
बाजार मिलेगा
दोनों से भरा

प्रचार मिलेगा
अनावश्यक का अधिक

नई पीड़ा और विश्व

एक बिल्कुल
नई पीड़ा से
गुजर रहा है विश्व
पीड़ित रहा जो
सब पीड़ाओं से
पहले से ही

सब पुरानी पीड़ाओं पर भारी
यह नई पीड़ा कोरोना
जिसने पुरानी पीड़ाओं का भी
बढ़ा दिया है रोना
बिलबिला उठा है
बुरी तरह से विश्व

यह विश्व
बहुत बड़ा है
जिसमें रहते हैं
अधिकांश आम आदमी
थोड़े-से हैं
खास आदमी
जो चलाते हैं यह विश्व
उन्हें कोई खास फर्क. नहीं
पड़ा है
विश्व की वर्तमान स्थिति से,
युद्ध, व्यापार, राजनीति से
वे चला ले जायेंगे विश्व
पक्का विश्वास है उन्हें।

विचार और हथियार

विचारों को
कितना हटाओगे मालिक !
सब जगह
केवल हथियारों से
भर दोगे ?

गुरु !
हथियार
रक्षा करते हैं।

बहुत डरे हुए हो मालिक
और डरते ही जा रहे हो
समझ नहीं पा रहे हो
हथियारों से अधिक तो
विचार रक्षा करते हैं
देश हो या सत्ता
या व्यक्ति विशेष !

मालिक !
डरो मत
बुद्ध और गांधी को
दूर करो मत !

जीवन और काढ़ा

जीवन
बीमार था
मर्ज.भी था गूढ़ और गाढ़ा

सब दवाइयां होती रहीं
वह ठीक हुआ पीकर
प्रेम का
काढ़ा

एक चीज मिल गयी
उसी आधार पर
उसका आगे भी इलाज चला
वह जब भी हुआ अनभला

जीवन मरहूम हो गया
अंतिम बार जब वह
पड़ा गाढ़े में
और इस काढ़े से
महरूम हो गया

परिवार के

मोमबत्ती की रोशनी में
कुल ग्यारह चेहरे हैं
इतने ही चेहरे
झांक रहे हैं
अंतरिक्ष के अंधेरे से

पारिवारिक उत्सव में
ये ग्यारह चेहरे
परिवार के हैं
वे चेहरे भी
परिवार के हैं

परिवार के उत्सव में
शामिल होने से
उन्हें कोई रोक नहीं सकता

यह अंधविश्वास नहीं है
वे बराबर प्रकट होते हैं
इनके दिलों में
पारिवारिक महफि लों में

इसके बाद क्रांति नहीं होगी

एक खेत छुड़ाने वाले क्रांतिकारी थे
एक खेत को लहलहाने वाले क्रांतिकारी थे
एक खेत को मार्केट बनाने वाले क्रांतिकारी हैं

कहा जाता है
यह क्रांति का अंतिम चरण है
इसके बाद क्रांति नहीं होगी

लेकिन क्या सही है यह बात,
भले न रोटी मिले न भात ?

छलावा और पछतावा

मैं धर्म की
कुछ बातों में आ गया हूं
और फिर
राजनीति की चालों में आ गया हूं

मैं सीधा, सरल, निडर
बना कायर, कुटिल, क्रूर
हुआ अपने उद्देश्यों से दूर
अब मारे जाने के करीब
फंसा हूं चक्रव्यूह में

क्या मैं इससे निकल सकता हूं
और सीधी रेखा में चल सकता हूं

समाधान करें

यह अच्छा है या बुरा
कि हमारा एक लम्बा इतिहास है
जय-पराजय का
उत्थान-पतन का
एकता-विखंडन का
मगर उसमें हम एक-दूसरे के शत्रु भी हैं
कभी मित्र भी हो जाते हैं,
वही कशमकश है
चली आ रही
आज तक

आगे के लिए
हमें कुछ भूलना भी है
कुछ याद रखना भी है
मगर क्या याद रखना है
हमें याद नहीं है
क्या भूलना है
हम वह भी भूल गये हैं
हम सिर्फ.निर्देशित हो रहे हैं
कि इतिहास में जाओ
उसे फिर से बनाओ
वर्तमान हमें देखने दो
हमें बनाने दो

मगर हम देख रहे हैं
वे वर्तमान को बना नहीं रहे हैं
तो कहीं हम भी
बिगाड़ तो नहीं रहे हैं इतिहास को

न डरें
समाधान करें
इतिहास के विद्वान
वर्तमान के पंडित !

जहाज

बहुत छोटे थे हम
जहाज उड़ाते थे
कागज के
बड़े दबाव और मेहनत से
जिन पर गृहकार्य करके
उत्तीर्ण हो चुके होते थे हम

उन्हें उड़ाकर
हम हल्का होते थे
आनंद लेते थे
किसका सबसे ऊपर उड़ता है
किसका सबसे दूर तक उड़ता है
किसका सबसे ज्यादा चक्कर लेता है
किसका सबसे देर तक उड़ता है

वह भी क्या खेल था
वे भी क्या जहाज थे
न कोई मिग-मिराज
न कोई राफेल था

होनहार लड़की

फूल लिये
जो उसे किसी ने दिये
वह आगे चली
और रुक गयी
एक बिस्तर के पास
जो सजाया गया था खास

उसकी गोद में
एक नवजात शिशु था
जब वह बिस्तर से उतरी

उतरते ही वह
अपने नवजात शिशु में खो गयी
होनहार लड़की
ज़िम्मेदार मां हो गयी

आज वह दादी है
खेलाती
शिशु के
शिशु को

संतोष का पेड़

दूरियों की
कोई सीमा नहीं है
इतनी दूर
हम हो गये हैं
अलग जरूर
हम हो गये हैं
एक-दूसरे से बुरा नहीं हुए हैं
हम जुदा नहीं हुए हैं
यही संतोष का पेड़ है
सीमाहीन निदाघ में

मैं संतोष के पेड़ के नीचे
बैठा हूं
मेरी सांसों में
तुम्हारी खुश्बू है

संपर्क : 9415295137

जनेश्वर

मर्दाना कमजोरी

जवान रगो में
गर्म खून की जगह जब
बहती महसूस हो
ठंडे बर्फ सी धार
स्त्रीवाची 'सत्ता' के विरुद्ध
समझना यह
मर्दाना कमजोरी है !

हर जोर - जुल्म के विरुद्ध
ठीक उस वक्त जब
मुट्ठी बांध कर हाथ
उठाने की बारी आये
और पसीने से नहा जाएं
सिर्फ पेशानी नहीं
सम्पूर्ण अस्तित्व
समझना यह
मर्दाना कमजोरी है !

पिसते हुए
दमन की चक्की में
भूख जब अंतड़ियों में
दीमक सी चिमट जाएं
और तुम
जयकारों वाले जुलूसों में
पंक्तिबद्ध बढ़ रहे हो
समझना यह
मर्दाना कमजोरी है !

घर की बहु - बेटियों के साथ
दबंग जब मनचाहा जश्न मनाएं
और तुम आंखों को बंद कर के
भाग्य और गरीबी को अपनी
जिम्मेदार ठहराओ
समझना यह
मर्दाना कमजोरी है !

किसी भू माफिया के इशारे पर
वर्दियां घसीट कर झोपड़ी से
तुम्हें ले जाए
और तुम्हारी बस्ती में
'सोता पड़ा रहे'
और कल के अखबार में
यह आए कि-
'मुठभेड़ में मारा गया दहशतगर्द'
समझना यह
मर्दाना कमजोरी है !

सचमुच की स्त्री नही
स्त्रीवाची 'सत्ता' के विरुद्ध
कंपकपाए तुम्हारा कलेजा
तब समझना यह
मर्दाना कमजोरी है !

लौटना

किसी विजेता सेना सा नहीं है यह लौटना

विस्थापन भी नही यह
वहाँ था ही क्या अपना
न अन्न , न जमीन , न सरकार
न कानून , न कोई पेड सायादार

क्या यह पलायन है ?
है झ तो किससे !

विपथगमन भी नही यह
घर लौटना क्या
विपथगमन होता है कभी !

यह लौटना
न जात्रा है , न यात्रा

दरअसल
हताशा , नाउम्मीदी और
हाडगोड मेहनत के बाद
भूखी आँतों और सूनी आँखें लिए
घर की ओर लौटते ये पाँव
उनके हैं जिनके पाँव उखडते ही
उखडने लगते हैं सरमायेदारों ,

कारखानेदारों , ठेकेदारों , सरकारों ,
और समूची तरक्की के पाँव ।

जिनके पास खोने को कुछ नहीं

जितनी बड़ी थी बंद मुट्ठी
उतना ही छोटा निकला उसमें बंद- संकल्प
मुट्ठी जब एक नामालूम से दबाव से ही खुल गई
तब वे सभी भक्त श्रेणी के जन भौचक थे जो मुट्ठी के बंद रहते
चीख और चिल्ला रहे थे अपने- अपने गले की संपूर्ण शक्ति से
कि- अबकी लड़ाई आर-पार की है

खैर ! मैं वहां और नहीं रुका -

आगे मुझे मालूम नहीं था कि
ट्रिलियन डॉलरो की अर्थव्यवस्था बनाने वाला मेरा देश
महामारी के दलदल में फंसा कराहता , लंगड़ाता मिलेगा
हालांकि सरकार के नुमाइंदों के चेहरों पर
मुस्कुराहटे बरकरार थी और उधर

ट्रिलियन डॉलरो की अर्थव्यवस्था वाला संकल्प
हंस रहा था निर्मम हंसी क्योंकि
छोटी -सी लाक डाउन की अवधि में ही बनाना पड़ गए थे
प्रधानमंत्री- मुख्यमंत्रियों के नाम वाले राहत कोष

आगे बढ़ने पर पाया कि
लाक डाउन में लोग घरों में बंद थे
और उधर संक्रमण के आंकड़े सुरसा के मुंह की तरह
रोज-ब- रोज बढ़ते ही जा रहे थे

इस बंद में सब कुछ बंद था
विरोध बंद था , जुलूस बंद थे
हड़तालें बंद थी

चालू था तो सरकारे गिराना चालू था
नई सरकार का शपथ ग्रहण चालू था
पूंजीपतियों की ऋण माफी चालू थी
मजदूरों के काम के घंटे बढ़ाए जाने,
कारखानों को टैक्स , बिजली की माफी चालू थी

और चालू थी उन जिंदगियों को जकड़ती नागफांस
जिनके पास खोने को कुछ नहीं था सिवा
अपनी और अपनों की निर्दोष जानों के
जिनके पास कस्बों / नगरों / महानगरों में
अपने घर थे , अपनी 'मनी' थी, और अपनी ' हनी ' थी वे
लाक डाउन का उत्सव मना रहे थे
ताली बजा रहे थे, थाली बजा रहे थे
(उनके घरों में रोशनी थी भरपूर) मगर वे
दीये जला रहे थे, शंख फूंक रहे थे
इन घरों में व्यंजनों की बन आई थी
वे फेसबुक / व्हाट्सएप पर रेसिपी शेयर कर रहे थे

देश से मानो हकाले गए शरणार्थियों की तरह
हजारों हजार मजुर, मेहनतकश
इस छोर से उस छोर तक
अप्रैल-मई की चिलचिलाती धूप के समुद्र में
नंगे पाव / भूखे-प्यासे
बूढ़े, बच्चे, औरतें और आदमी पीठ पर
बची खुची गृहस्थी लादे निकल पड़े थे कश्ती - विहीन

महामारियों से तो निपटते रहे हैं
और निपटेंगे भी

इसे पलायन, विस्थापन या लौटना जो कहो
यह एक नई वसुधा को देगा जन्म
और तब इस नई दुनिया के सिरजनहार भी हम होंगे
और भोक्ता भी हम ही ।

जानवर

(1)
जानवर- जानवर होता है , खालिस

तुम उसमें संस्कार ढूँढोगे तो
दुसरो का रक्त - माँस ही तो पाओगे

तुम उसमें शील ढूँढने जाओगे तो
वह तुम्हें मिलेगा आदिम रुप में नंगा

तुम खुशफहमी में हो कि तुम
उसमें सामाजिकता ढूंढ़ रहे हो

वह अपनी हिस्र आँखें लिए सन्नद्ध है
अपने जन्म से तुम्हारे होने के विरुध्द ।
(2)
जानवर नहीं जानता अपनी हिंसा के बारे में
तुम जानते हो उसकी हिंसा के बारे में
जानवर नहीं जानता तुम्हारी हिंसा के बारे में
तुम जानते हो अपनी हिंसा के बारे में
अब बताओ जंगली कौन है ?

संपर्क : 9415295137

सीमा भारती

अनुगूंज

जानती हूँ तुम भी कभी-कभी चाहते हो लिखना
उस नन्हे पत्ते की मन की बात
जो अभी-अभी तेज फुहारों से भीग कर
उठने की कोशिश में है
उसके अलसाये शिराओं में पानी की अनुगूंज
कहीं बहुत भीतर से प्रतिध्वनित हो रही है
वह किलकना चाहता है
पर नमी के बोझ से सिहरा सा ठिठका सा
ताक रहा है चुपचाप !
ऐसा नहीं है कि
उसमे कर लेने कि जिद नहीं
पर वह रुके रहना चाहता है और कुछ पल
वैसे ही निःशब्द
और महसूसना चाहता है
खुद को बिना किसीआवरण के
ठीक वैसे ही जैसे तुम आँखें बंद कर लेते हो
पूर्ण तृप्ति के पलों में
और महसूसते हो
खुद में ईश्वर के होने को।

ढूंढती हैं दिशाएं

ढूंढती हैं दिशाएं
दृश्यों को
मनचाहे बिम्ब
अक्सर भूल जाते हैं
रस्ते
समूची रात
गहरी बातों की तरह
रहस्मय वीथियों में उतर जाती है
स्वप्न बीनते हैं
उम्मीदों के रंगीन कंचे
वह हारती जाती है
संजोए सारे पल
पैरहन की कच्ची सिलाईयां
उधेड़ देती है
सच अक्सर
वह झुकती है जीने के लिए
ईश्वर हँसता है
अपनी कामयाबी

ना मालूम कब छुआ था तुमने

ना मालूम कब छुआ था तुमने
हाँ उसी दिन
बस उसी दिन से तो
थिरक रही हूँ मैं
सुलगती मद्धम सी आंच में
जलती हूँ अब रोज-ब-रोज
और यह धुआं थमता नहीं
तेज हवाओं के बाद भी
दिन सुनहरे होते गए
बढ़ती गयी रातों की चाँदी
पर तुम्हारे आगोश की तपन
आज भी वैसी ही सुर्ख
बजता अब भी धीमे-धीमे
धमनियों में वह उच्छ्वास का सुर
पिघल उठती है अब भी धड़कन
कामनाओं के सघन अन्विति में

Experience Luxury, Amidst Nature!

SINGINAWA

Singinawa Jungle Lodge, a wildlife destination which cares about you.

The Lodge, set in an embrace of trees, is a stately stone building with whimsical and eclectic elements of gond art and delightful hand painted murals. Located on 110 acres of reclaimed, resurrected jungle, in the Tiger Heartland of the World, Singinawa Jungle Lodge offers a unique experience of the forests of Central India.

VISIT US AT: www.singinawajunglelodge.com | MAIL : bookings@singinawajunglelodge.com | Phone : 0124-4908610 | Kanha, Madhya Pradesh

अटल जी के बाद टंडन का जाना, लखनऊ की सियासत का एक 'युग' समाप्त होने जैसा

अजय कुमार

उत्तर प्रदेश की राजनधानी लखनऊ से आज एक साथ दो खबरें थोड़े अंतराल के बाद आईं। पहली खबर यह थी कि मध्य प्रदेश के राज्यपाल लालजी टंडन का एक निजी अस्पताल में देहांत हो गया। यह खबर आने के चंद घंटों के भीतर ही उत्तर प्रदेश की राज्यपाल माननीय आनंदीबेन पटेल को यूपी के साथ-साथ मध्य प्रदेश का भी राज्यपाल बना दिया गया है। अभी तक आनंदी बेन कार्यवाहक राज्यपाल के रूप में मध्य प्रदेश का काम देख रही थीं। अगर यह कहा जाए की लाल जी टंडन और लखनऊ एक-दूसरे के पूरक थे तो अतिशियोक्ति नहीं होगी। 85 वर्ष की उम्र में करीब 40 दिनों की बीमारी के बाद लालजी टंडन का देहांत हो गया। लाल जी टंडन लखनऊ के 'हस्ताक्षर' थे, जिन लोगों ने लखनऊ की शान में चार चांद लगाए उसमें से लालजी टंडन एक बड़ा 'मुकाम' थे। टंडनजी को लोग विकास पुरूष के नाम से भी बुलाते थे।

लखनऊ की हर गली-मौहल्ले से लालजी टंडन का अटूट 'रिश्ता' था। लखनऊ वाले टंडन जी को लोग प्यार से बाबूजी कहकर संबोधित किया करते थे। भले ही टंडन जी का राजनीति में कद काफी ऊंचा था, लेकिन लखनऊ के लोगों के सुख-दुख में वह सहज उपलब्ध रहते थे। कई दशकों तक टंडन जी बड़े-बड़े कार्यक्रमों से लेकर लखनऊ की नुक्कड़ सभाओं तक का चेहरा बने रहे थे। लालजी टंडन ने सियासत ने अपनी सियासत की शुरूआत 1960 से की थी और 60 वर्षों के लम्बे सियासी सफर में आप ने पार्षद से लेकर गवर्नर तक कई पद संभाले। प्रदेश में जब कल्याण सिंह और राजनाथ सिंह के नेतृत्व में सरकार बनी तो टंडन जी उसमें कैबिनेट मंत्री रहे।

टंडन राष्ट्रीय स्वंय सेवक संघ के साथ भी जुड़े हुए थे। रामजन्म भूमि आंदोलन में टंडन ने बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया था। टंडन, बसपा सुप्रीमों मायावती को अपनी बहन मानते थे और उनसे राखी बंधवाते थे, लेकिन राजनीति के जानकार इस बहन-भाई की जोड़ी को सियासी नजरिये से ज्यादा देखते थे। नब्बे के दशक में प्रदेस में बीजेपी और बसपा गठबंधन की सरकार बनाने में भी उनका अहम योगदान माना जाता है।

लालजी टंडन की राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ से जुड़वा के दौरान ही पूर्व प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी से मुलाकात हुई। दोनों नेता जब एक बार मिले तो रिश्ते लगातार मजबूत होते गए। लालजी अक्सर कहते मिल जाते थे कि अटल बिहारी वाजपेयी ने राजनीति में उनके साथी, भाई और पिता तीनों की भूमिका अदा की। टंडन जी ने पार्षद के रूप में अपनी सियासी पारी शुरू की थी।

इसके बाद 1978 से 1984 और 1990 से 96 तक टंडन दो बार उत्तर प्रदेश विधान परिषद के सदस्य रहे। 19991 से 92 की यूपी सरकार में वह मंत्री भी बने। इसके बाद लालजी टंडन 1996 से 2009 तक लगातार तीन बार चुनाव जीतकर विधानसभा पहुंचे। 1997 में फिर से वह नगर विकास मंत्री बने। टंडन को यूपी की राजनीति में कई अहम प्रयोगों के लिए भी जाना जाता है। टंडन पूर्व प्रधानमंत्री स्वर्गीय अटल बिहारी बाजपेयी को 'हनुमान' जी की तरह पूजते थे। अटल जी को लखनऊ से चुनाव लड़ाने में लालजी टंडन का विशेष योगदान रहा था। 2009 में पूर्व प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी के राजनीति से दूर होने के बाद लखनऊ लोकसभा सीट खाली हो गई थी। इसके बाद भाजपा ने लालजी टंडन को ही यह सीट सौंपी थी। लोकसभा चुनाव में लालजी टंडन ने लखनऊ लोकसभा सीट से जीत हासिल की और संसद पहुंचे। लालजी टंडन को साल 2018 में बिहार के राज्यपाल की जिम्मेदारी सौंपी गई थी। 2019 में उन्हें एमपी का राज्यपाल बनाया गया था।

लालजी टंडन ने एक किताब भी लिखी थी। अपनी लिखी किताब 'अनकहा लखनऊ' में उन्होंने कई खुलासे किए थे। इसमें उन्होंने पुराना लखनऊ के लक्ष्मण टीले के पास बसे होने की बात कही थी। टंडन की पुस्तिका के मुताबिक, लक्ष्मण टीला का नाम पूरी तरह से मिटा दिया गया है। अब यह स्थान टीले वाली मस्जिद के नाम से जाना जा रहा है। उनके अनुसार, लखनऊ की संस्कृति के साथ काफी जबरदस्ती हुई है। लखनऊ के पौराणिक इतिहास को नकार 'नवाबी कल्चर' में कैद करने की कुचेष्टा के कारण यह हुआ। लक्ष्मण टीले में शेष गुफा थी, जहां बड़ा मेला लगता था। खिलजी के वक्त यह गुफा ध्वस्त की गई। बार-बार इसे ध्वस्त किया जाता रहा और यह जगह टीले में बदल गई। बाद में औरंगजेब ने यहां एक मस्जिद बनवा दी।

टंडन के ऐसा लिखे जाने पर काफी बवाल भी हुआ था, लेकिन इसके उलट यह भी हकीकत थी कि टंडन को चाहने और मानने वालों में हिन्दू-मुसलमान सभी वर्ग के लोग शामिल थे। टंडन मुसलमानों के आयोजनों में भी बढ़-चढ़कर हिस्सा लेते थे।कई बार टंडन पार्टी से अलग हटकर मुसलमानों के साथ जुड़े नजर आ जाते थे। टंडन जी के पुत्र आशुतोष टंडन योगी सरकार में कैबिनेट मंत्री हैं। दो वर्ष के भीतर पहले अटल बिहारी वाजपेयी का और उसके बाद अब लाल जी टंडन का देहांत लखनऊ की सियासत के एक युग के समाप्त होने जैसा है।

चार राज्यों के आकाश पर जगमगाता सूरज

महाराष्ट्र | गुजरात | मध्यप्रदेश | छत्तीसगढ़

राष्ट्र पत्रिका

www.rashtrapatrika.com

नागपुर से प्रकाशित शब्दबाणों का राष्ट्रीय आंदोलन

बहुरंगीय 24 पृष्ठ

सम्पादक – कृष्ण नागपाल

मूल्य ₹10

संवाददाता एवं एजेंसी के लिए संपर्क करें...

प्रधान कार्यालय : **Nagpal Prakashan Pvt. Ltd., Nagpur**

'बृज भूमि' कॉम्पलेक्स, दूसरा माला, टेलिफोन एक्सचेंज चौक, सेंट्रल एवेन्यु, नागपुर-8,
फोन : (0712) 2726340, 2738263, 2737847, मो. : 09850758855,
E-mail : rpatrika5@gmail.com, info@rashtrapatrika.com,

भारत का सर्वाधिक खपतवाला साप्ताहिक : 45 लाख से भी अधिक पाठक

RNI No. MPHIN 1999/02873

आईसेक्ट पब्लिकेशन

ज्ञान-विज्ञान, कौशल विकास तथा कला-साहित्य पर हिंदी, अंग्रेजी एवं अन्य भाषाओं में पुस्तकों और पत्रिकाओं का राष्ट्रीय प्रकाशन

सभी लेखकों के लिए प्रस्तुत है आईसेक्ट पब्लिकेशन की
स्व-प्रकाशन योजना

हिंदी भाषा, साहित्य एवं विज्ञान की विभिन्न विधाओं में पुस्तकों के प्रकाशन में आने वाली कठिनाइयों को देखते हुए आईसेक्ट पब्लिकेशन, भोपाल ने लेखकों के लिए स्व-प्रकाशन योजना एक अनूठे उपक्रम के रूप में शुरू की है।

जिन रचनाकारों को अपनी मौलिक, अनूदित, संपादित रचनाओं का पुस्तक रूप में प्रकाशन करवाना है, वे कम्प्यूटर पर साफ-साफ अक्षरों में कागज के एक ओर टाइप की हुई पांडुलिपि की सॉफ्ट कॉपी के साथ आईसेक्ट पब्लिकेशन, भोपाल से संपर्क करें।

आईसेक्ट पब्लिकेशन से पुस्तक प्रकाशन के लाभ ही लाभ

- प्रकाशित पुस्तक आईसेक्ट पब्लिकेशन की पुस्तक सूची में शामिल की जायेगी।
- पुस्तक, बिक्री के लिये सुप्रसिद्ध स्टॉलों एवं मेलों आदि में उपलब्ध रहेगी।
- प्रकाशित पुस्तक की समीक्षा सुप्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित कराने का प्रयत्न किया जायेगा।
- प्रकाशित पुस्तक, शहरों व कस्बों में स्थापित वनमाली सृजनपीठ के सृजन केन्द्रों में पठन-पाठन और चर्चा के लिए भिजवाई जायेगी।
- पुस्तक के लोकार्पण और साहित्यिक मंच पर संवाद-चर्चा आदि की व्यवस्था की जा सकेगी।
- पुस्तक चयनित ई-पोर्टल (अमेजन, फ्लिपकार्ट, आईसेक्ट ऑनलाइन आदि) पर भी बिक्री के लिये प्रदर्शित की जायेगी।

सुरुचिपूर्ण फोर कलर प्रिंटिंग • आकर्षक गेटअप • नयनाभिराम पेपर बैक में

कुल बिक्री के आधार पर वर्ष में एक बार नियमानुसार रॉयल्टी भी

पांडुलिपि किसी भी विधा में स्वीकार

आईसेक्ट पब्लिकेशन, आपका पब्लिकेशन

आप स्वयं पधारें या संपर्क करें

- प्रकाशन अधिकारी, आईसेक्ट पब्लिकेशन : 25/ए, प्रेस कॉम्पलेक्स, जोन-1, एम.पी. नगर, भोपाल-462011, फोन- 0755-4923962, मो. 8818883165, 9582623369
- अध्यक्ष, वनमाली सृजनपीठ : 25/ए, प्रेस कॉम्पलेक्स, जोन-1, एम.पी. नगर, भोपाल-462011 फोन- 0755-4923962, मो. 9425014168,
- E-mail : aisectpublications@aisect.org